# मन्नू भण्डारी का कथा साहित्य : मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

के

कला संकाय

में

हिन्दी विभाग के अन्तर्गत

डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी

की उपाधि हेतु प्रस्तुत

## शोध-प्रबन्ध

**1989**


प्रस्तुति :

श्रीमती ऊषा अग्रवाल


निर्देशक :

डॉ. विश्वम्भर दयाल अवस्थी

डी. लिट्.

अध्यक्ष हिन्दी विभाग,

अतर्रा स्नातकोत्तर महाविद्यालय

अतर्रा (बांदा) उ. प्र.

# C E R T I F I C A T E

This is to certify :

(1) that the thesis embodies the work of the candidate herself( Smt. Usha Agrawal ),

(2) that the candidate worked under me for the period, required under the ordinance 7,

(3) that she has put in the required attendence in my department during that period.

Date : ६-१०-८६

( Dr. B.D. Awasthi)
Head, Dept. of Hindi,
Atarra P.G. College, Atarra
(Banda) U.P.

## मन्नू भण्डारी का कथा-साहित्य : मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

### अ नु क्र म णि का

पृष्ठ क्रमांक

पृष्ठ क्रमांक

# भू मि का

घर में बैठे-बैठे मैं कई बार 'आपका बंटी' उपन्यास को पढ़ गयी, मेरे ऊपर बंटी की व्यथा कथा का इतना बड़ा असर पड़ा कि मुझे बरबस ही मन्नू भण्डारी से स्नेह हो गया। मैंने अपने मन की बात जब इनसे (पति श्री डी०सी०अग्रवाल) कही तो उन्होंने सहज ही मेरी रुचि के प्रति सहमति व्यक्त कर दी। मुझे ऐसा लगने लगा कि मैं उठकर मन्नू जी से मिलूं, इनके कथा-साहित्य का अध्ययन भी करूं तथा मनोविज्ञान के आधार पर इन उपन्यास एवम् कथाओं के चरित्रों पर शोध भी करूं।

मुझे नहीं मालूम था कि बातचीत का यह सिलसिला इतना बढ़ जायेगा कि जीवन और जगत के मध्य परिवार की एक नई धुरी प्रारम्भ हो जायेगी। मन्नू जी ने जिन पात्रों को चरित्र प्रधान उपन्यासों में पिरोया है, वे इसी संसार के हैं तथा ऐसा लगता है कि वे हमारे चारों ओर घूम रहे हैं, ऐसा कौन-सा पात्र है जो हमारे मध्य नहीं है। बार-बार बंटी की छवि मेरे सामने अनायास ही आ जाती है तब मैं महसूस करती हूं कि मन्नू जी ने बंटी के मन की गहराइयों को केवल छुआ ही नहीं बल्कि उन्हें पास से देखा भी है।

हमें लगता है कि जीवन की बहुत-सी बातें ऐसी हैं, जिनका छोर भी हम ही हैं और प्रारम्भ भी हम ही हैं। विश्वास कीजिए हम ही इस जीवन के ऐसे ही पात्र हैं जो कभी-कभी खोखली हंसी में जीते हैं। सरल जीवन जीना एक बात है, परन्तु भोग की स्थिति में जीना दूसरी बात है। हमें पाश्चात्य सभ्यता की होड़ ने न जाने कहाँ से कहाँ लाकर खड़ा कर दिया, तभी तो तनाव जैसी स्थिति आज हमारे जीवन में है। न जाने कितने बंटी ऐसे हैं, जिनका इतिहास आज अधकचरा बनकर रह गया है। मैं सोचती हूं

क्या मेरे आस-पास भी बंटी हैं, तब लगता है एक नहीं अनेक हैं । उनके प्रश्न हमारे सामने खड़े हैं । साक्षात्कार जब भी करना पड़ता है तब हमें लगता है जीवन का एक और सत्य झूठ में समा गया है । भोगा हुआ सत्य तो सबके पास है पर उसे स्वीकार करने की स्थिति किसी की भी नहीं है ।

इस तरह जब-जब विचार उठे, तब-तब एक नहीं कई प्रश्न एवं विचार सामने आये कि नारी को शोषण के रूप में ही क्यों माना जाता है ? नारी का शोषण उसके अशिक्षित होने या आर्थिक पहलू से कमजोर होने के कारण तो नहीं है । मेरा यह सत्य जीवन की आपाधापी के मध्य आज भी ज्यों का त्यों खड़ा हुआ है । "मनोविज्ञान मानव के अन्त: प्रदेश के अन्धकार में चली आ रही रहने वाली प्रक्रिया ही नहीं, मनुष्य के बाह्य आचरणों, शारीरिक अनुभवों के ऊपर विचार करने वाला शास्त्र है ।" डा0देवराज उपाध्याय का यह कथन उतना ही सत्य है, जितना आज का आचार-विचार । मैं एक प्रश्न लिए घूमती फिरूँ यह मेरे लिए ठीक नहीं था, इसीलिए अध्ययन के प्रति जागरूक हो उठी ।

मैंने मन्नू जी के दूसरे उपन्यासों - 'महाभोज', 'त्रिशंकु' एवं 'स्वामी' को भी पढ़ लिया था । 'स्वामी' भले ही रूपान्तरित हो पर उसने नारी के अहम् को एक दिशा दी है । स्वामी के प्रति मोह का यह ताना-बाना घर से जुड़ी एक कड़ी है । सांस्कृतिक एवम् पारिवारिक परि-वेश का असर भी है । ईश्वर के प्रति प्रेम-पूजा यथार्थ ही है । दु:ख में ईश्वर को याद करने की प्रथा ने सुख में भी याद करने को मजबूर कर दिया है । जीवन के प्रति मोह, शारीरिक सम्बन्ध की अपनी सीमायें हैं, जिसे हमें मानना ही पड़ेगा ।

नारी की व्यथा-कथा लम्बी है, फिर भी इस कथा से नारी को अलग नहीं किया जा सकता, पुरुष इस नारी से अलग नहीं है। स्त्री-पुरुष इस गाड़ी के दो ऐसे पहिए हैं, जिनका साथ-साथ रहना जीवन में एक नये जीव के निर्माण की कहानी तो बताता ही है, साथ ही जीवन को स्थिर भी रखता है। जिस साहित्य में हमारी सुरुचि न जगे, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति न मिले, हममें शक्ति और गति पैदा न हो, हमारा सौन्दर्य प्रेम न जाग्रत हो, जो हममें सच्चा संकल्प और कठिनाइयों पर विजय पाने के लिए सच्ची दृढ़ता न उत्पन्न करे वह आज हमारे लिए बेकार है। वह साहित्य कहलाने का अधिकारी नहीं।

हिन्दी साहित्य के उपन्यासकार कथा सम्राट प्रेमचन्द का यह विचार उतना ही सत्य है जितना कि आज जीवन के उतार-चढ़ाव की कहानी। मौन साधना के साधक की तरह कभीकभी सोचती हूँ पति, पुत्र, पुत्री और परिवार के सभी सदस्य मुझ नारी से कहीं न कहीं समझौता चाहते हैं और हमें झुकना पड़ता है, कभी-कभी तो इतना कि मेरा अहम् उसे स्वीकार न करने को मजबूर हो जाता है। मेरी यह बात इसलिए भी सही है कि मैं शिक्षित होते हुए भी समझौता इसलिए करती रहती हूँ कि मेरे स्वामी (पति) मेरे लिए सब कुछ हैं। कम से कम सुख-दुःख की सीमा में मुझे एहसास दिलाते हैं तथा मेरा साथ भी देते हैं। आज तो जो कुछ बन रही हूँ या बन जाऊँगी उसका श्रेय मुझे इनको ही देना पड़ेगा। मन्नू जी की कहानियों में ऐसे एकाकी समझौते हैं, जिसे मानना मेरा कर्तव्य भी है और मेरा धर्म भी है।

मैंने अध्ययन के दृष्टिकोण से प्रथम भाग, विषय प्रवेश के नाम से रखा है, जिसमें मन्नू जी के जीवन परिचय, साहित्य-यात्रा, उनका परिचित समाज आदि की चर्चा की है, इसमें अधिक जान-पहिचान नहीं रखी क्योंकि साक्षात्कार व्यक्ति के पहिचान की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

निर्भर स्थिति में हो । युवा वर्ग की नारी का शोर-शराबा मात्र दिखावा है, जितनी वे बातें करते हैं, उसे वे व्यवहार में नहीं ला पाते हैं । परिवर्तन थोड़ा बहुत है, वह भी ऐसे लोगों ने किया है, जो आर्थिक रूप से सम्पन्न है या आत्म निर्भर । युवावर्ग की कोरी आजादी से कुछ नहीं हो सकता, उसकी जो जकड़न है, उसमें नारी की मुक्ति सम्भव नहीं है । आज जो नारी जलाई जाती हैं, उसमें युवावर्ग का उत्तरदायित्व अधिक है, यह एक प्रश्नचिन्ह है । नयी नारी का आत्म सम्मान तभी सम्भव हो सकता है, जब पुरुष वर्ग घर की सामन्ती प्रथा से मुक्त हो । हर नारी आत्म सम्मान से जीना चाहती है, पर उसको आत्मसम्मान, पुरुष एक प्रतिशत भी नहीं देना चाहता । पुरुष का अहम ही उसकी आर्थिक एवम् शैक्षाणिक प्रगति में बाधक है । मन्नू जी अनेक नारी कथाओं में यही सब कुछ दर्पण की तरह साफ रूप से रखा है । जब-जब नारी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हुयी, उसने अपने आत्म सम्मान की स्वयं रक्षा की है, उसका जीवन वास्तव में एक उदाहरण ही बना । नारी जाति का गर्व आज समूचे संसार में 'झांसी वाली रानी,' 'इन्दिरा गांधी' तथा 'मदर टेरेसा' के रूप में विद्यमान हैं ।

प्रश्नचिह्न तो आदिकाल से लगते चले आ रहे हैं । मात्र सत्ता पक्ष के पास ही यह प्रश्नचिह्न था ? वीरता ने इस अहम् का हनन ही नहीं किया बल्कि शोषण की प्रक्रिया भी अपनायी है । गांधीवादी युग में नारी में चेतना जगी, परन्तु चेतना केवल उच्च वर्ग तक ही सीमित थी, पर इस युग का उत्साह देखने लायक है । इस समय पाश्चात्य सभ्यता का दिखावा आ गया था, भारतीय सभ्यता ने पाश्चात्य आवरण ओढ़कर जो कुछ करना चाहा या करना चाहती थी या किया, उसका यह करना निरर्थक रहा । आज की स्थिति में भी पाश्चात्य सभ्यता की नकल अधिक है, इसका प्रभाव मानव-मन पर अधिक पड़ रहा है । कानून से कोई परिवर्तन

सम्भव नहीं जब तक कि मानसिकता में बदलाव नहीं आये । खुलापन तो दिखावा बन गया है । आज की शिक्षित बेरोजगार पीढ़ी दिखावा में ही जी रही है, इसलिए तनाव अधिक है, जीवन के मध्य इस तरह का तनाव ठीक नहीं । मन्नू जी ने इस तनाव को भी कहानी में सूक्ष्म रूप में प्रस्तुत कर नारी पुरुष की मानसिक स्थिति का अच्छा चित्रण किया है । उनके मन में अपराध भावना नहीं आयी और न बदले की भावना । केवल एक अहम् का प्रश्न चिन्ह रहा । नारी-पुरुष का यह अहम् व्यक्तिगत है । इसके लिए किसी को दोषी नहीं ठहराया जा सकता है, क्योंकि उनकी अपनी मानसिकता में एक विचार हमेशा-हमेशा से बराबरी का दर्जा, जो नारी पुरुष को ससम्मान मिलना चाहिए, मन्नू जी की यह कोशिश कहानियों के माध्यम से ज्यादा रही है । मन्नू जी ने उपन्यास कथा-साहित्य में परिवार की स्थिति का जो वर्णन किया है, उसमें सम्बन्धों का एकाकीपन भी है एवं सहयोग की भावना भी है, इसमें आर्थिक स्तर का समन्वय कहीं नहीं हो पाता । स्त्री-पुरुष आर्थिक आपाधापी के मध्य टूटते से नजर आते हैं । यदि पुरुष नारी ही अर्थव्यवस्था से जुड़े हैं तब टकराहट अधिक है, ये अर्थ की ऐसी व्यवस्था है, जिसका प्रश्न चिन्ह अहम में डूब जाता है । परिवार में पिता या माता रोगग्रस्त है तब अर्थ उपार्जन की समस्या और भी जटिल है । कभी-कभी तो घर की बड़ी लड़की या लड़का जो भी हो, उसे इस कार्य हेतु अपना जीवन स्वाहा करना पड़ता है । वास्तव में परिवार जो अर्थ से कमजोर है, उसका जीवन देने के लिए व्यक्ति का समर्पित होना भी एक हीन भावना को जन्म देता है, जहाँ कर्तव्य ही सब कुछ है । जीवन का यह यथार्थ भूगोल की उन क्रियाओं की तरह है जो पानी से बादल बनती है और मौका पाकर हवा के बहाव के आधार पर बह जाती है । परिवार के सामान्य वर्ग की अर्थप्रबन्ध व्यवस्था पर विचार करते समय मन्नू जी का गहन अध्ययन अवश्य रहा है । तभी तो उच्च वर्ग एवं मध्यवर्ग के परिवार की

अर्थव्यवस्था का जो चित्रण है बहुआयामी है । जीवन में अर्थ से जुड़ी जो समस्यायें हैं, उस पर मेरा अपना दृष्टिकोण रहा है । नौकरी पेशा परिवार की समस्या अधिक जटिल है, क्योंकि जहाँ एक ओर सीमित आमदनी तथा अर्थ के साधन इतने कम होते हैं तथा वहीं दूसरी ओर परिवार में सामंजस्य बनाये रखना आवश्यक होता है । मन्नू जी ने पात्रों को भी इसी आधार पर चयन किया है ।

मन्नू जी ने बाल उपन्यास भी लिखे हैं । उसमें बालकों की मनोदशा को एक आधार लेकर ऐसी कथा लिखी है जिसमें साहस, वीरता, कर्तव्य-परायणता, धैर्य का जो स्वरूप है, उससे शिक्षा ही मिलती है । मेरा अपना विचार है कि मन्नू जी का बहुआयामी दृष्टिकोण में स्त्री-पुरुष के साथ बालक आवश्यक रूप से रहा है । जीवन का यह यथार्थ मैं स्वीकार करती हूँ । मैंने बहुत कुछ जीवन का जो पाया है, उसमें मेरे पति (डा0अग्रवाल) का सहयोग सराहनीय रहा है, जिनका चिन्तन मेरे चिन्तन से जुड़ गया है, जिसमें मन्नू जी के साहित्य घर का जुड़ना भी महत्वपूर्ण रहा है ।

अध्ययन का शेष भाग पांच अध्यायों में विभक्त किया गया है ।

प्रथम अध्याय में कथा-साहित्य मनोविज्ञान विषय पर दृष्टि की समीक्षा का जो रूप प्रस्तुत किया है, उसमें व्यक्ति, समाज, परिवार का चित्रण रचनाकार की दृष्टि में उल्लिखित किया है । इस तरह रचना में विभिन्न आयामों को लिया है । वास्तव में अन्धायुग मानकर अब नहीं चला जा सकता । तटस्थता विवेक की लाचारी है, पर जीवन का हर आधार मन की गहराई को छू जाता है, इसलिए विकास के इस चरण में मनो-विश्लेषण की स्थिति स्वच्छ व स्थायी है, इतना अवश्य है कि मानव की स्थिति को अब संकेतों में व्यक्त नहीं किया जा सकता । आज की रचना में अभिव्यक्ति की खोज है । कथा-साहित्य में सामाजिक जीवन का चित्रण

है । नारी और पुरुष के सम्बन्ध से समाज की रचना होती है । नारी पुरुष के विविध रूपों का चित्रण भी मन की गहराई के रूप में ही रचनाकार का कर्म बन जाता है । हिन्दी में कथा-साहित्य में फ्रायडीयन दृष्टिकोण भी अपनाया गया है, वहीं दूसरी ओर भारतीय दृष्टिकोण भी अपनाया है ।

मानसिकता जीवन के बदलते मूल्यों में अपने आप दिखाई दे रही है । उसे रचनाकार ने अपने ढंग से पिरोया है । समस्या मानसिकता का आधार भी है । जन्म से मृत्यु तक की मानसिकता समस्याओं और उलझनों से घिरी हुयी है । मन्नू जी ने जीवन के हर क्षण को परखा है । उसका परिणाम कथा-साहित्य की रचना के उद्देश्य में स्पष्ट है ।

द्वितीय अध्याय में कथा भेदक लक्षण और आलोच्य को प्रस्तुत किया है । कहानी उपन्यास की विधा समकालीन है । रचनाकार ने कहानी विधा में जीवन की जटिलता को पकड़ने की कोशिश में नये से नये ढंग अपनाते रहे हैं । ठीक यही आधार उपन्यास विधा में है । भारतीय चिन्तन के साथ पश्चिम के चिन्तन को जब नयी दिशा मिली तब निश्चित रूप से कथा साहित्य का दृष्टिकोण भी बदला है । उपन्यास कहानी की विधा को लेकर कला की अमानवीयकरण की समस्या को लेकर कभी-कभी जो समस्या आई है, उससे चिन्तन का इतिहास लम्बा हो गया है । आधुनिकता की चुनौती का एक परिणाम पश्चिम की सभ्यता का आधार भी है, जिसका शत-प्रतिशत दर्शन कथा में रचनाकार ने स्वीकार किया है, यही तथ्य आलोच्य साहित्य का भी है ।

तृतीय अध्याय में पात्रों एवं घटनाओं का मनोविश्लेषण है । फ्रायड ने नई पीढ़ी को प्रभावित तो किया है, इसके साथ ही समय असमय की मनोदशा की स्थिति मनुष्य के सामने रखी है । उसका चित्रण कथा-

किया जावे तो सम्बन्धों को ही महत्वपूर्ण पाया जायेगा । पति-पत्नि, भाई-बहिन, पिता-पुत्र, प्रेमी-प्रेमिका को लेकर जो संघर्ष है, उसका स्वरूप स्पष्ट है । गांव-शहर-देहात की स्थिति तथा पात्रों के चयन में आपाधापी अब नहीं है । प्रेमचन्द, जैनेन्द्र जी तथा अज्ञेय जी के बाद तो रचनाकारों ने पात्रों का चयन स्थिति तथा समस्या के आधार पर किया है जिसका मनो-विश्लेषण अपने आप हो जाता है ।

अन्य चतुर्थ एवं पंचम अध्यायों में मनोविज्ञान के आधार पर अभि-व्यक्ति पक्ष साक्षात्कार और कथाकार का साहित्य में स्थान महत्वपूर्ण है । साक्षात्कार और रचनाकार की अपनी दृष्टि एवन् अभिव्यक्ति का दर्शन होता है, जो एक दर्पण की तरह है, विश्राम उसके जीवन में कहीं नहीं होता । एक पात्र की तरह उसका व्यक्तित्व कृतित्व अपने आप झलकता है । मेरा तो अपना यह विश्वास है कि इस धरातल पर श्रीमती मन्नू भण्डारी खरी उतरीं । भले ही आज उपन्यास एवम् कहानी का आधार छोटा होता जा रहा है, शिल्प की दृष्टि से भी विस्तार नहीं है, पर वास्तव में एक बात तो तथ्यपूर्ण है कि भारतीय परिवेश में नगर-बोध, नगरीकरण की प्रतिक्रिया धीरे-धीरे नहीं बढ़ी, बल्कि तेजी के साथ बढ़ी है आधुनिकता के रूप में पाश्चात्य सभ्यता का जो आवरण आया है, उससे कोई भी कथाकार नहीं बचा ।

एक बात जरूर महत्वपूर्ण रही है कि जीवन के व्यवहारिक मोड़ में निजी संरचना का मूल जीवन मूल्य में जुड़ गया है । मन्नू जी के साक्षात्कार के समय यह बात स्पष्ट आयी है, इसलिए अधिक आलोच्य विवेचना की आवश्यकता नहीं पड़ी है । केवल मैंने आधुनिकता की पहचान के लिए ही मनोविज्ञान, समाजशास्त्र जैसे विषय को आधार माना है और यह आधार मन्नू जी का भी है । एक सत्य जो झुठलाया नहीं जा सकता वह है 'आधुनिकता' यानी पश्चिमीकरण की चुनौती का सामना करना । यह

जोड़ा है जो नकल का ही रूप माना गया । संवेदना तो तब होती है जब सामान्य-जन इस पश्चिमीकरण के पीछे भागता है ।

भाषा की आधुनिकता में किसी प्रकार के मोड़ का प्रश्न नहीं है यह तो भविष्य की स्थिति को बताती रही है । भाषा ने बातचीत यानी सवालों के सिलसिले को एक नया आयाम दिया है । व्यंग्य की भाषा पैनी है, पर समाधान तो सवालों से ही उभरकर सामने आता है । परिस्थिति में आये अन्तर को भाषा ने ही औद्योगिकरण, मशीनीकरण एवम् नगरीकरण से बढ़ने वाली समस्याओं से जोड़ा है । मन्नू जी ने इसी माध्यम से निष्पक्ष एवम् तटस्थ दृष्टि से इसे देखा एवम् परखा है । क्षय, शायद, रेत की दीवार, खोटे सिक्के, सजा जैसी कथाओं के साथ-साथ बहुचर्चित उपन्यास बंटी, महाभोज एवम् स्वामी आदि ने एक मात्र भाषा के साथ ही पूरे किए हैं । भाषा चयन की दृष्टि से मन्नू जी की भाषा सरल है । पात्रों की मनः स्थिति, परिवेश एवम् उसके शिक्षा के स्तर के कारण भाषा में स्वाभाविकपन अपने आप आ गया । भाषा में हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, उर्दू एवम् देशज शब्दों का प्रयोग भी हुआ है । अन्तिम अध्याय उपसंहार का है, जिसमें हिन्दी के कथा-साहित्य में मन्नू भण्डारी का योगदान एवम् स्थान का अध्ययन किया गया है ।

इस प्रयास के लिए मैं प्रकाण्ड विद्वान, माँ सरस्वती के आराध्य, विशाल एवम् सरल हृदय पूज्य गुरुवर श्री डा० विश्वम्भर दयाल अवस्थी, डी० लिट्०, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, अतर्रा महाविद्यालय, अतर्रा (बांदा) की विशेष रूप से आभारी हूँ, जिन्होंने अपने अमूल्य व्यस्त समय में से अपना कुछ समय मुझे देकर मेरा मार्गदर्शन किया व मुझे एक दिशा दी ।

आदरणीय डा0डी0पी0 मित्तल अवकाश प्राप्त अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, बुन्देलखण्ड महाविद्यालय, झांसी तथा डा0रामकृष्ण जी गुप्ता का भी मैं आभारी हूं, जो समय-समय पर मुझे इस कार्य हेतु प्रेरणा एवम् सहायता प्रदान करते रहे हैं ।

मैं श्रीमती सरोज चौरसिया की भी बहुत आभारी हूं, जिन्होंने स्वच्छ टंकण (टाईपिंग ) में मदद की ।

अन्त में मैं अपने पति डा0डी0सी0अग्रवाल, वाणिज्य विभाग, बुन्देलखण्ड महाविद्यालय, पूर्व वाणिज्य संकायाध्यक्ष(डीन), बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की विशेष आभारी हूं, जिन्होंने मुझे पारिवारिक उलझनों से मुक्त रखकर इस शोध कार्य को पूर्ण करने में सहायता प्रदान की ।

## विषय - प्रवेश

### मन्नू भंडारी - व्यक्तित्व एवं परिचित-समाज :

जीवन की परिधि में परिवार का रिश्ता भौतिक आधार है। नारी परिवार की अभिन्न अंग ही नहीं, उसकी धुरी है। परिवार में नारी के लिये कोई कार्य असम्भव नहीं। एक चेतना प्रभाव, नारी का अपने अस्तित्व को जन्म देता है। प्राचीन भारतीय चिन्तन की दो दिशायें, जो महाभारत, रामायण कथा के साथ पौराणिक कथाओं से जुड़ी है, नारी की महानता को किसी न किसी रूप में स्वीकार ही नहीं करती बल्कि अंगीकार भी करती है। नारी का रूप भले ही आकर्षण का केन्द्रबिन्दु रहा हो, पर नारी जीवन नारी मन की अनन्त चेष्टाओं के निर्माण को जन्म देती हैं। मेरा तो अपना मन यही कहता है कि नारी सृष्टि है, जन्म से मरण तक की यात्रा में कंधा भले ही न दे, पर अपने मन से यात्रा की पूर्ण आहूति तो अवश्य करती है। यह सच्चाई जीवन की, मन्नू जी के कथा-साहित्य को पढ़ने से लगी।[1] वही जब उनके जब उनके देहली प्रवास के समय उनसे उनके घर मिलने पर बातचीत के दौरान पायी, उससे लगने लगा कि उन्होंने जो देखा है, उसी को तो एक आधार माना है। साधारण साँवले रंग, एक अंदाज का भारतीय नारी का पहनाव और माथे पर चमकती बड़ी बिन्दी से ऐसा लगता है कि यथार्थ को पा लेना, उनकी अपनी व्यवस्था तो है ही, पर उनका अपना चिन्तन स्वच्छ भाषा के रूप में परिभाषित करता है। वे किसी बातचीत को बोझ नहीं समझती, बल्कि उसे कर पाने में अपना कर्म समझती है। जो कुछ देखती है,

---

1- क्रांतिघोष ( साप्ताहिक), (मन्नू जी से लम्बी बात) 10 नवम्बर 1988

उसे चिन्तन पक्ष पर अपनी स्वतंत्र कलम से कागज पर उतार देती है, तब कहीं मन में लगी टीस कम होती है।

बहु-आयामी प्रतिभा की धनी मन्नू भण्डारी का जीवन एक खुली किताब की तरह है। उनके कथा-रचना करने का वैचारिक परिप्रेक्ष्य जन-जन की समस्याओं से ओतप्रोत है। नारी की समस्याओं को उसके मन के युद्ध के परिप्रेक्ष्य में देखा और समझा है, जहाँ समानता का स्तर प्रदान करने की बात संघर्ष के रूप में आयी है, यही कारण है कि उनका नारी-मन ज्वालामुखी का विस्फोट जीवंत हो उठा। "किसी के व्यक्तित्व की पहचान के लिये उस व्यक्ति की पहचान आवश्यक है। ऐसा कहा जाता है कि किसी व्यक्ति के संपर्क में हम पहली बार आते हैं, तब उसके रंग-रूप, उसकी पोशाक आदि से प्रभावित होते हैं। इसका मतलब है कि हम प्रथम दर्शन में उसके स्थूल रूप और बाहरी व्यक्तित्व से परिचित होते हैं, और जब उस व्यक्ति के सम्पर्क में बार-बार आते हैं, तब हम उसके गुण एवं दोषों से प्रभावित होते हैं, जो उसका अन्तरंग व्यक्तित्व होता है।"[1]

"ऐसे ही होज खास स्थित फ्लेट, नई दिल्ली में मन्नू जी से पहली मुलाकात का यह सिलसिला प्रथम बार में ही आत्मीय रूप से जुड़ गया। ऐसा लगा ही नहीं कि हम उनसे अलग हैं, बल्कि एक परिचित समाज की अभिन्न अंग की तरह, हम थोड़ी-सी ही बातचीत में घुल-मिल गये।"[2] उनका मुस्कराता चेहरा, उनके लिबास की सादगी, उनके साँवले गोल चेहरे पर एक बड़ी-सी बिन्दी, भारतीय नारी के प्रतिनिधित्व की कहानी कहती

---

1- अनीता राजूरकर, 'महेन्द्रकुमारी से मन्नूजी तक,' पृ० 1

2- आचरण (मन्नू जी से बातचीत), 17 जनवरी, 1989, गुरुवार

है, मुझे लगा कि यह व्यक्तित्व वास्तव में चिर-परिचित सा है, यह समाज का एक सहज सुलझा हुआ हिस्सा भी । जब अनायास ही उनसे चर्चा के दौरान यह पूछ ही लिया, आपका जन्म तो मध्यप्रदेश में हुआ है । भानपुरा गाँव में समाजसेवी स्वतंत्रता संग्राम के आर्यसमाजी मारवाड़ी श्री सुखसम्पतराय के घर 3 अप्रैल 1931 को हुआ । यह स्थान मध्यप्रदेश में स्थित है । श्री सुखसम्पतराय हिन्दी साहित्य जगत् के जाने-माने व्यक्ति थे । उन्होंने हिन्दी पारिभाषिक शब्द की रचना आठ भागों में की है । उनकी कुछ अन्य रचनायें भी हैं । विश्वकोश का काम चल रहा था; वे बीमार हुये, किन्तु अंतिम समय तक विश्वकोश का ही काम करते रहे । बीमार थे तब भी पलंग के नीचे पांडुलिपियाँ रखी रहती थीं । सुधारवादी होते हुये भी वे अपनी पुत्री मन्नू का राजेन्द्र यादव से विवाह रचाने के पक्ष में नहीं थे । मन्नू जी ने कहा कि वे अन्त समय तक अपने दामाद से नहीं मिले, यदि मिलते तो अवश्य ही उनके स्वभाव से प्रभावित होते ।

मन्नू जी के व्यक्तित्व निर्माण का श्रेय उनके पिता को ही है । मारवाड़ी जैन समाज में प्रचलित धारणा के विपरीत लड़कियों को शिक्षा देना, राजनीति में हिस्सा लेने को प्रोत्साहित करना तथा रसोईघर में जाने नहीं देना आदि के कारण ही मन्नू जी शिक्षा जगत में पहुंच पायी है ।

आपके पिता श्री सुखसम्पतराय की मृत्यु कैंसर से हुयी । आपने प्रथम कहानी संग्रह 'मैं हार गयी' सन् 1957 में पिता को अर्पित करते हुये लिखा - 'जिन्होंने मेरी किसी भी इच्छा पर कभी अंकुश नहीं लगाया - पिताजी को ।'

<u>माता</u> - मन्नूजी की माता अनूपकुंवरि अत्यन्त उदार एवं कर्मप्रधान नारी थी, वे पति के कामों में हाथ बंटाती, उन्होंने अनपढ़ होने के बावजूद भी मन्नू जी के किसी भी कार्य का कभी विरोध नहीं किया । मन्नूजी ने कहा कि

माँ ने कभी रसोई या घर के कार्य में हमारी मदद नहीं ली, न ही जुलूस निकालने, भाषण देने आदि पर उन्होंने विरोध किया । इसी का परि-णाम है कि आज हम कुछ बन पाये ।

मन्नूजी के बहन-भाइयों की संख्या चार है, बड़े भाई प्रसन्न कुमार, एम०ए०अंग्रेजी जो कि नौकरी करते हैं, दूसरे छोटे भाई बसंतकुमार ने भी एम०ए० अंग्रेजी में किया और वे भी नौकरी करते हैं ।

बहनें - स्नेहलता, नवरत्नमल बोर्डिया शिक्षा बी०ए० इन्दौर में निवास स्थान , दूसरी सुशीला पराक्रमसिंह भंडारी बी०ए०कलकत्ता में निवास स्थान । आप पच्चीस वर्षों से मांटिसरी स्कूल चला रही हैं, मन्नूजी कलकत्ता में इन्हीं के पास रहती थीं । बहन और जीजा उनके लिये - पितृ-माता, सहायक-स्वामी-सखा थे । और अब भी हैं ।

मन्नू भंडारी का पूरा नाम महेन्द्रकुमारी है । घर में सबसे छोटी होने के कारण उन्हें प्यार से सभी 'मन्नू' कहते थे । अत: आगे चलकर यही नाम प्रचलित हो गया । यहाँ तक कि राजेन्द्र यादव से विवाह के पश्चात भी वे मन्नू भंडारी ही रहीं ।

शिक्षा :

मन्नू जी ने अजमेर के सावित्री गर्ल्स हाईस्कूल से 1945 में मैट्रिक व वहीं पर कालेज से 1945-47 में ईंटर किया । मन्नू जी के घर के संस्कार और स्कूल की प्राध्यापिकाओं द्वारा देशप्रेम के प्रति प्रोत्साहित करने का ऐसा प्रभाव पड़ा कि रात को देर से लौटने पर डाँट खाने पर भी सुबह होते ही उन पर स्वतंत्रता संग्राम का नशा छा जाता । मन्नू जी को महाविद्यालय में प्रवेश न देने पर महाविद्यालय बंद करवा दिया गया, सभी को आश्चर्य हुआ, यहाँ

कालेज बन्द करवा सकती है । उनके पिताजी को लेकिन उन पर गर्व था । भारत स्वतंत्र हुआ और उन्हें अजमेर के उसी कालेज में एडमिशन मिल गया । किन्तु बहन सुशीला ने कलकत्ता बुलाकर वहीं से 1949 में बी०ए० कराया । हिन्दी विषय न होने से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से आपने बहिस्थ रूप से एम०ए० किया ।

आपने कलकत्ता के 'बालीगंज शिक्षा सदन' स्कूल में सन् 1952-61 तक अध्यापिका का कार्य किया । किताबों का शौक होने के कारण वे पुस्तकालय का कार्य भी स्वयं देखती थीं । इसी बीच श्री राजेन्द्र यादव शोध-कार्य हेतु दिल्ली पहुँचे । साहित्य में रुचि होने के कारण श्री भगवती प्रसाद जी से उनका परिचय हुआ । उन्होंने स्कूल का पुस्तकालय अद्यतन करने के लिये राजेन्द्र जी से कहा और वहाँ पुस्तकों पर चर्चा करते-करते उनका मन्नू जी से परिचय हुआ । धीरे-धीरे पुस्तक-लेखक, साहित्य की चर्चा जिन्दगी की चर्चा तक पहुँच गयी । यह परिचय जीवन परिचय में परिवर्तित हो गया । और दोनों का 1959 में प्रेम विवाह ( सिविल मेरेज ) हो गया, मन्नूजी राजेन्द्र यादव के साथ परिणय सूत्र में बंध गयीं । इस अन्तर्जातीय विवाह में बहन सुशीला व उनके पति पराक्रमसिंह तथा भगवती प्रसाद जी का विशेष योगदान रहा ।

1961 जून में आपने मातृत्व को प्राप्त किया, साहित्यिक माता-पिता ने बेटी का नाम 'रचना' रखा । इसी बीच पिता की तबियत अत्यन्त खराब हो गयी । वे पुत्री को लेकर उनसे मिलने गयीं । पिता से यही उनकी अन्तिम मुलाकात थी ।

श्रीमती मन्नू भंडारी ने सन् 1961 में प्राध्यापिका बनकर कलकत्ता के 'रानी बिड़ला कालेज' में 1964 तक अध्यापन कार्य किया । 1964 में ही राजेन्द जी ने दिल्ली स्थायी होने का निर्णय लिया अत: तब से आज तक

मन्नूजी और राजेन्द्र जी दिल्ली में ही रहकर अध्ययन-अध्यापन कार्य कर रहे हैं। वर्तमान में मन्नूजी दिल्ली के प्रसिद्ध सोफिस्टिकेटेड कालेज, मिराडा हाउस में प्राध्यापिका के रूप में कार्यरत हैं।

व्यक्तित्व :

गहरे पीले सिल्क की साड़ी में लाल बार्डर, मेहरून कार्डिगन और शाल ओढ़े, माथे पर बड़ी-सी बिंदी भारतीय नारी का परिचय देती है, लगता ही नहीं कि वे एक प्रसिद्ध लेखिका हैं, वे तो संवेदनशील नारी अधिक लगती हैं।

उनकी बेटी रचना से मैंने पूछा - तुम्हारी मम्मी लेखिका हैं तो तुम्हें कैसा लगता है ? तो जवाब में उसने कहा - ' लेखिका मम्मी क्या होती है ? ' ममी बस ममी है। नौकर को घर की सारी व्यवस्था समझाना, हिसाब पूछना, सब कुछ मुझे आम घरों जैसा ही दिखायी दिया।

अपनी संपादित पुस्तक ' अपने से परे ' की भूमिका में मन्नू जी ने कहानी लेखकों को सुझाव देते हुये लिखा है - ' एक अच्छा कहानी-लेखक बनने से पहले अनिवार्य है एक अच्छा पाठक बनना '। यह कोरा सुझाव नहीं है। सच तो यह है कि मन्नू जी को आज भी कहानी-उपन्यास पढ़ने में रुचि है। उनके कमरे की लाइब्रेरी में प्रेमचन्द, यशपाल से लेकर अनेक नये-पुराने साहित्यकारों की पुस्तकें देखी जा सकती हैं।

आपने शरत की कहानी ' स्वामी पर तो स्वामी ' उपन्यास भी लिखा है। मन्नू जी की रचना-प्रक्रिया शरत् साहित्य की तरह यथार्थ के धरातल पर चलती है। मजबूरी कहानी की ' बूढ़ी अम्मा, ' सजा कहानी का ' बिखरा परिवार ', शायद कहानी का ' विवश पुरुष, ' सोमा बुआ का

साक्षात्कार के प्रसंग में कराया ।

'सयानी बुआ' की घटना बताते हुये मन्नू जी लोट-पोट होकर हँस रही थीं । कहानी में तो दो प्याले टूटते हैं, जबकि यथार्थ जीवन में वे घड़ियाँ टूट गयी थीं, जो उनकी बुआ ने मन्नू जी तथा सुशीला जी को सँभालकर रखने को दी थी, उनकी बुआ ने ही उनके जीवन में भी आदत डाली । इसका प्रभाव राजेन्द्र यादव से बातचीत के दौरान मिला ।

जब हमने उनसे पूछा कि मन्नू जी लेखिका नहीं बनतीं तो क्या करतीं ? जबाब में उन्होंने कहा - 'मन्नू घरेलू महिला के रूप में रह ही नहीं सकती थी, राजनीतिज्ञ बनतीं अथवा पति को तंग करती रहतीं, क्योंकि घर में रहतीं तो घर की सफाई करवाती रहतीं ।' 'फेंको-फेंको । नई से नई चप्पलें, पर्स, मेज के प्लास्टिक कवर, शीशियाँ, क्राकरी फेंको । घर में 'फेंकोवाद' का कुछ ऐसा पहाड़ा चलता रहता है कि जब भी मैं बाहर जाता हूँ, मन में शंका बनी रहती है, देखें आज क्या चीज 'फेंकोवाद' की शिकार हुयी ?

मन्नूजी के साहित्य की लोकप्रियता का कारण पूछने पर राजेन्द्र यादव जी ने कहा कि 'किसी भी कलाकार की लोकप्रियता के मूल में दो ही कारक दिखायी देते हैं - एक **या** तो वह किशोरेपन को अभिव्यक्ति दे या फिर वह जनसामान्य की संवेदना से जुड़े । यही दूसरी बात मन्नू की कहानियों में भावनात्मक अपील है, जिसके कारण मन्नू भंडारी समकालीन कहानी लेखकों को कई गुना पीछे छोड़ गयी हैं ।

मन्नू जी का साहित्य ज्येष्ठता को प्राप्त कर अनेक रचनाओं पर पुरस्कार प्राप्त कर चुका है । जो निम्नलिखित हैं :

1976-80 में भारतीय भाषा परिषद द्वारा आपकी कृति के लिये 'रामकुमार भुवालका' पुरस्कार श्रीमती मन्नू भंडारी को 'महाभोज' उपन्यास के लिये प्राप्त हुआ। पुरस्कार राशि- 11,000) रुपये की थी। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा 'महाभोज' उपन्यास को पुरस्कृत किया गया है, इस हेतु पुरस्कार रूप में 6,000) रुपये की राशि प्रदान की गयी थी।

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा 1980-81 में 'अहिन्दी भाषी' क्षेत्र की लेखिका के रूप में श्रीमती भंडारी को पुरस्कृत किया गया।

शिमला के 'आल ईंडिया आर्टिस्टिक्स एसोसियेशन' द्वारा अखिल भारतीय बलराज साहनी स्मृति साहित्य प्रतियोगिता में प्रमुख क्रांतिकारी लेखक श्री मनम्थनाथ गुप्त तथा हिन्दी कहानीकार श्रीमती भंडारी को उनके रचनात्मक लेखन द्वारा मानवता की सेवा के लिये 1982-83 में क्रमशः भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पीपल्स एवार्ड देकर सम्मानित किया गया है।

मन्नूजी के अपने समाज में अपने पति राजेन्द्र जी का साथ तो है ही, साथ ही लम्बी-लम्बी बातचीत का सिलसिला, भीष्म साहनी से होता है। पुराने तथा नये रचनाकारों से उनके अपने सम्बन्ध हैं, चर्चा-परिचर्चा के साथ नाटक, टी०वी०सीरियल, जैसे वातावरण में उनका व्यक्तित्व साहित्य धरातल ही है। पिछले दिनों प्रेमचन्द के उपन्यास 'निर्मला' के टी०वी०सीरियल के संवाद लिखकर यथार्थ को जीवन से जोड़ने का प्रयास मन्नूजी ने किया है।

मन्नू जी का स्वयं का जीवन भी एक व्यक्तित्व कथा ही है।

मन्नू भंडारी के कथा-साहित्य का कालक्रमिक परिचय :

20 सितम्बर 1988 की गोधूली बेला में जब रात्रि को अपने आगोश में समाहित कर रही थी, निश्चित आकार-प्रकार में विद्युत के छोटे-छोटे बल्ब, दिल्ली जैसे बड़े शहर में होजखास फ्लेट शांतिमय वातावरण में एक टिमटिमा रहे थे। नयी जिन्दगी जीने की आशा से, एक-आध आम आदमी चलता-फिरता नजर आ रहा था। जैसे-तैसे फ्लेट नं० 103 की घंटी बजायी, दरवाजा खुला, स्वयं मन्नू भण्डारी सादगीपूर्ण लिबास में मुस्कराती मेरे सामने खड़ी थीं,

नमस्ते।

मुझे आपसे मिलना है।

आइये।

मैं अपने पति एवं सह निदेशक के साथ उनके ड्राइंग रूम में पहुंच कर उनके आग्रह से बैठ गयी। स्वयं मन्नू जी ने नौकर को आवाज देकर कहा - 'चार कप चाय बना लाओ।'

मैंने कहा - मैं आपके कथा-साहित्य पर कार्य कर रही हूं।

तब तो आपने मेरे कथा-साहित्य को पढ़ लिया होगा।

पढ़ तो लिया है। पर, साहित्य पढ़ने के बाद मेरे सामने कई प्रश्न उठ खड़े हुये हैं।

यह तो एक अच्छी बात है।

आपने कब से लिखना शुरू किया ?

मन्नूजी ने कहा - मेरी पहली कहानी 'मैं हार गयी', यह कहानी, पहली बार' कहानी' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुयी। इसके संपादक श्री भैरव प्रसाद गुप्त थे। मेरी कहानी कहानी पहले है, उपन्यास बाद में।

आपने उपन्यासों से अधिक कहानियां लिखी हैं ?

मेरे कुल तीन उपन्यास हैं । इन उपन्यासों में कहानियों का विस्तृत रूप है ।

उपन्यास साहित्य :

1- एक इंच मुस्कान (सहयोगी उपन्यास )
2- आपका बंटी
3- कलवा (बाल उपन्यास)
4- स्वामी
5- आसमाता (बाल उपन्यास)
6- सप्तपर्णी
7- बिना दीवारों का घर ( नाटक)
8- महाभोज ( नाट्य रूपान्तर )

'स्वामी' उपन्यास बंगला के कलाकार शरतचंद की कहानी 'स्वामी' की ही कहानी है, जिसकी कथावस्तु का दो बार मन्नूजी ने रूपान्तरित किया है । 'स्वामी' को एक बार कहानी के रूप में लिखा, बाद में उपन्यास के रूप में लिखा है ।

स्वामी के विषय में जब मन्नू जी से पूछा तब उन्होंने बताया कि शरत्चन्द्र की कहानी 'स्वामी' एक कमजोर लड़की की कहानी है, मुझे बहुत अच्छी लगी, जब तक उसे लिख नहीं लिया, तब कहीं मन हल्का हुआ ।

मैंने पूछा आपने प्रेमचन्द के उपन्यास 'निर्मला' की नाट्य-रचना दूरदर्शन के लिये लिखी थी, क्या अन्य रचना इस प्रकार की है ?

हाँ । दूरदर्शन के आग्रह के कारण 'निर्मला' की पटकथा, संवाद लिखे । 'बिना दीवारों के घर' मेरी नाट्य रचना है । इसमें मैंने दाम्पत्य जीवन में

इसी प्रकार मन्नूजी ने कहा कि मैंने 'महाभोज' उपन्यास को नाट्य रूप में परिवर्तित किया है। इसके सफल प्रयोग भी हुए हैं। इसके साथ ही मैंने बाल-उपन्यास भी लिखे हैं :

1- आसमाता
2- कलवा
3- आँखों देखा झूठ।

मन्नूजी की कहानी-साहित्य का कालक्रमिक इस प्रकार है :

1- मैं हार गयी 1957
2- तीन निगाहों की एक तस्वीर 1959
3- यही सच है 1966
4- एक प्लेट सैलाब 1968
5- त्रिशंकु 1978

मन्नूजी के कहानी साहित्य में से चयन कर विशेष कहानी संग्रह भी प्रकाशित हुये, जिनके नाम इस प्रकार हैं :

1- श्रेष्ठ कहानियाँ
2- मेरी प्रिय कहानियाँ
3- सप्तपर्णी

मन्नूजी का साहित्य - रूप, रूपांतर, छायांकन :
---

मन्नू भंडारी के साहित्य का रूपांतर देश-विदेश की भाषाओं में हुआ है, जिसके कारण उनके साहित्य की पहिचान अन्य भाषाओं में हुयी। पंजाबी में 'बीस कथाओं' का, गुजराती में 'खोटे-सिक्के पूर्व' आपका बंटी', का गुजराती, मराठी, व अंग्रेजी भाषा में भी अनुवाद हुआ है। मराठी में

इसके साथ ही मन्नूजी की कहानियों का रूपान्तर सिंधी, कन्नड़, मलयालम, तैलगु, बंगला, उड़िया में भी हुआ है ।

मन्नूजी के साहित्य का प्रयोग केवल रूपान्तर या लेखन तक ही सीमित नहीं था, बल्कि आप स्वयं भी रंगमंच से जुड़ी थीं । आपके 'महाभोज' उपन्यास को राष्ट्रीय नाट्य-विद्यालय द्वारा दिल्ली रंगमंच पर प्रस्तुत किया, इसके साथ बी0बी0सी0लन्दन ने भी इसको प्रसारित करने के लिये 50 पौण्ड प्रति मिनिट स्वीकार किया है । अन्य नाटकों में 'बिना दीवारों के घर' आदि का मंचन अनेक शहरों में हो चुका है । अनेक नाट्य-निर्देशक, जिनमें ऊषा प्रियंवदा मन्नू जी की कहानियों को लेकर मुख्य रूप से मंचन का कार्य कर रही हैं ।

मन्नूजी केवल उपन्यास, नाटक तक रंगमंच से नहीं जुड़ी हैं, बल्कि कहानी जिसमें 'अकेली,'' चश्मे,'' त्रिशंकु' आदि का मंचन दिल्ली, कलकत्ता नगरों में हो चुका है, त्रिशंकु और पुराने आकाश नाई पर राजेन्द्रनाथ और बासु चटर्जी ने फिल्म भी बनायी । बी0बी0सी0 लन्दन ने मन्नू भंडारी की रचनाओं पर 14 जुलाई सन् 1982 ई0 में एक फीचर भी प्रस्तुत किया । इसके साथ ही कुछ दिनों पहले प्रेमचन्द की रचना 'निर्मला' के संवाद दूरदर्शन सीरियल के लिये लिखकर यथार्थ जीवन से जोड़ने का प्रयास किया है ।

उपन्यास :-

(1) स्वामी :

'स्वामी' उपन्यास का अग्रलेख 'शरत्चंद्र से क्षमा याचना सहित' में मन्नूजी ने उल्लेख किया है कि 'शरत्चन्द्र की कहानी 'स्वामी' का लेखन मेरे द्वारा हो, यह मात्र एक संयोग ही है, किशोरावस्था में शरत् बाबू मेरे सबसे प्रिय कथाकार रहे हैं । ''[1] बंगला के कथाकार शरतचन्द की कहानी 'स्वामी' लेखिका को इतनी पसंद आई कि उसे बार-बार रूपांतरित किया । यह बात

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

यह बात साक्षात्कार के समय स्वीकार करते हुये मन्नूजी ने बताया कि पहली बार कहानी के रूप में लिखा, फिर उसे उपन्यास के रूप में। मन्नूजी की कहानी 'एक कमजोर लड़की' की कहानी शरत्चन्द्र कीकहानी 'स्वामी' का अनजाने में किया हुआ भावानुवाद है, और मन्नू जी का 'स्वामी' उपन्यास उसी कहानी का जाना-माना रूपांतर है।"[1]

मन्नूजी की स्वामी की कथावस्तु मनुष्यता की कथा है, जिसमें मानव-सम्बन्धों की मनोवैज्ञानिक उलझनों को पारिवारिक सम्बन्धों से जोड़ रखा है। सौदामिनी उसका प्रेमी नरेन्द्र और पति घनश्याम के मध्य की इस कथावस्तु में पारिवारिक कलह, अपमान, आत्म-सम्मान के साथ, आत्मीय विश्वास के साथ लिये गये निर्णय की क्षमता का अहसास, सब कुछ एक परिधि में है।

मन्नू जी ने नारी-पात्र के मनोवैज्ञानिक आधार को उसकी जीवन-यात्रा से, अविश्वास से विश्वास, अनास्था से आस्था और नास्तिकता से आस्तिकता की प्रक्रिया को अपनाया है।

सौदामिनी अपने यात्रा के तय किये हुये सम्बन्ध के अनुसार घनश्याम के साथ वैवाहिक बन्धन में बंध तो जाती है, पर उसका अन्त:करण अपने पति के प्रति किसी तरह की अनुराग भावना से नहीं जुड़ पाता। पति के प्रति सौदामिनी का मात्र एक सहानुभूति है, जिसके कारण वह पति के साथ रहने का अंतिम निर्णय लेती है। यह सत्य के प्रेम-प्यार के आकर्षण के कारण सौदामिनी अपने वैवाहिक बन्धन को त्यागकर नरेन्द्र के साथ रहना चाहती है, पर अपने पति के भलमनसाहत के कारण, वह पति के साथ रहने में अपना सुख समझती है। सौदामिनी के चरित्र की इस कोमलता ने उसे झकझोर दिया, सत्य-झूठ के मध्य एक विश्वास जो सहानुभूति से सम्भव है, वह उसे अपने पति घनश्याम में प्रकाश-पुंज के रूप में दिखायी देती है।

" वह सहानुभूति-भाव घनश्याम के उस भलेपन की अनजाने में ही सही स्वीकृति है, जो मीनी ( सौदामिनी ) को अपने पति के साथ ही रहने का अंतिम निर्णय लेने पर बाध्य करती है । मीनी और घनश्याम के दाम्पत्य जीवन में जो एक तरह का अलगाव-सा अनुभव होता है, वह इन दोनों में किसी एक के भी दोष अथवा अपराध के कारण उत्पन्न नहीं हुआ । नरेन्द्र के प्रति मीनी का सहज आकर्षण कुछ समय के लिये उसे अपने वैवाहिक बंधन को त्यागकर नरेन्द्र के साथ रहने के लिये प्रेरित करता है । परन्तु अन्ततः उसके पति की भलमनसाहत की शक्ति जीत लेती है और वह अपनी उस प्रेरणा को त्याग देती है । "[1]

कथाकार ने स्वामी के अग्रलेख शरत्चन्द्र से 'क्षमा-याचना सहित' में उल्लेख किया है कि शरद् की तरह मैंने उसे एक ऐसी पथभ्रष्टा कुलवधू का रूप नहीं दिया जो पति के चरणों में गिरकर अपने उस गुरुतर पाप-कर्म की क्षमा मांगने के लिये छटपटाती है । मेरी दृष्टि में सौदामिनी ने कोई पाप नहीं किया था - वरन् सम्बन्धों की कुछ ऐसी मनोवैज्ञानिक उलझनें थीं, जिनमें वह निरन्तर उलझती ही चली गयी । पारिवारिक कलह और अपमान के उसके आत्म-सम्मान को इस तरह आहत किया कि उसने घर छोड़ दिया । लेकिन स्वतंत्र निर्णय लेने की अपनी इस क्षमता के कारण वह नरेन्द्र के साथ जाने के लिये भी अपने को तैयार नहीं कर पायी । गयी वह अपनी माँ के घर ।[2] जीवन का यथार्थ नारी-जीवन का भोगा पक्ष है । 'स्वामी' की कहानी में मन्नू जी ने नारी की मानसिकता का जो चित्रण किया है, उसमें उनके अनुभव की अपनी शक्ति

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- अनीता राजुरकर, 'कथाकार - मन्नू भण्डारी,' पृ0 82

2- मन्नू भण्डारी, 'स्वामी', अग्रलेख, पृ0 6-7

है । स्वामी की कथावस्तु वास्तव में चरित्र की दृष्टि से पारस्परिक सम्बन्धों का एक ऐसा आधार है, जिसमें मात्र मानवीयता का ही चित्रण है ।

माँ का घर पूरी तरह जल चुका है । घर तो उसका भी जल चुका है, लेकिन माँ है कि एकदम निर्द्वन्द्व-अविचलित । उन्होंने अपना सब कुछ ईश्वर के हाथों सौंप रखा है । उनकी एक गहरी आस्था और निष्ठा सौदामिनी के मन में एक प्रकाश-किरण आलोकित कर देती है और वही कहानी एक ज्यादा गहरा और व्यापक अर्थ ध्वनित करने लगती है, जिसमें सौदामिनी की वह यात्रा अविश्वास से विश्वास, अनास्था से आस्था और नास्तिकता से आस्तिकता की प्रक्रिया बन जाती है, लेकिन उसकी यह आस्तिकता किसी काल्पनिक ईश्वर के सामने समर्पित नहीं है, वह परत्-दर-परत् मानवीय गुणों और गरिमा का अन्वेषण करती है । घनश्याम के प्रति पहला भाव, प्रतिरोध और विद्रोह का है, जो क्रमशः विरक्ति और उदासीनता से होता हुआ सहानुभूति, समझ, स्नेह, सम्मान की सीढ़ियों को लांघता हुआ श्रद्धा और आस्था तक पहुँचता है, और यही 'स्वामी' शीर्षक पति के लिये पारस्परिक सम्बोधन मात्र न रहकर, उच्चतर मनुष्यता का विशेषण बन जाता है, ऐसी मनुष्यता जो ईश्वरीय है ।[1]

ऐसा लगता है कि प्रथम चरण में माँ के चरित्र को लेखिका ने अपनी माँ से जोड़ने का प्रयास किया है, क्योंकि लेखिका की माँ भी पुरानी परम्परा तथा ईश्वर आस्था की मूर्ति थी । सौदामिनी के चरित्र का

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 7

मूल्यांकन अन्तर्द्वन्द्व के माध्यम से एक सोच के रूप में हुआ है, जहाँ उसे अच्छे बुरे की पहिचान की परत-दर-परत उघाड़ना पड़ती है, निश्चय ही, बाद में माँ के चरित्र और उसकी ईश्वर भक्ति ने एक परख को स्वीकार किया, स्वामी - पति है, एक मानव है, अच्छा-बुरा तो उसका स्वभाव है, यही एक स्थिरता कहानी की अंत में उद्देश्य की पूर्ति करती है। नारी के सोच में जहाँ आधुनिकता है, वहीं मानवीय संवेदना भी है।

यदा-कदा नारी-चरित्र के नये आवरण का जो संकेत है, उसमें भौतिकवादी स्थिति अधिक है। सौदामिनी के चरित्र में द्वन्द्व भले ही हो, पर उसमें आधुनिक परिवेश में सोचने का जो ढंग है, वह मात्र पति को पति मानने का निर्णयात्मक स्थिति ही है। यही लेखिका ने एक ऐसा सोच प्रस्तुत किया है, जो आधुनिक परक है।

(2) आपका बंटी :

'आपका बंटी' उपन्यास आज की उस सामाजिक समस्या को उजागर करता है, जिसका सीधा-सीधा सम्बन्ध नारी के अर्थार्जन की स्वतंत्रता से है। इस समस्या में नारी पुरुष की पारम्परिक वैचारिकता का महत्व अधिक है, जो अर्थोपार्जन का कारण बन गयी। इस आपसी समस्या में एक टकराहट भी है, जब 'बच्चा' जहाँ एक ओर सौतेलेपन को स्वीकार नहीं कर पाता, भले ही नयी पीढ़ी का यह नव-जागरण ही क्यों न हो। मन्नूजी ने वास्तव में एक नई समस्या को जन्म देकर भारतीय परिवार की जीवन पद्धति में एक बदलाव लाने की चेष्टा की है, उसमें वे सफल भी हैं।

उपन्यास की कथावस्तु मन्नूजी की ही लिखी हुयी कहानी 'बंद दराजों का साथ' में बीज रूप में विद्यमान है। कहानी का कथ्य कलेवर के अनुरूप उपन्यास के कथ्य की तुलना में सीमित है।[1]

' समस्या बंटी की है । तुम्हें शायद मालूम हो कि बंटी की माँ ने शादी कर ली । मैं बिल्कुल नहीं चाहता कि अब वह वहाँ एक अवांछनीय तत्व बनकर रहे, इसलिये तय किया है कि बंटी को मैं अपने पास ले जाऊँगा, अब से वह यहीं रहेगा । और फिर वे देर तक यह बताते रहे कि बंटी से उन्हें कितना लगाव है, और इस नयी व्यवस्था में वहाँ रहने से उसकी स्थिति क्या हो जायेगी ? मैंने उनकी भावना, चिन्ता, उद्विग्नता को समझाते हुए अपनी पहली प्रतिक्रिया व्यक्त की - " आप ऐसा नहीं सोचते कि यह गलत होगा ? मुझे लगता है कि उसे अपनी माँ के पास ही रहना चाहिये, क्योंकि साल में दो-एक बार मिलने के अलावा उसके साथ आपके आसंग नहीं हैं, जबकि माँ के साथ वह शुरू से रह रहा है, एक-छत्र होकर रहा है । इस नाजुक उम्र में वहाँ से वह उखड़ जायेगा और सम्भवत: यहाँ जम नहीं पायेगा । लम्बी बातचीत के बाद तय हुआ कि बंटी अभी कुछ दिनों के लिये वहीं रहे । "[1]

लेखिका ने बंटी की मनोदशा का चित्रण यथार्थ के धरातल पर देखा है, तभी तो, स्त्री पुरुष के सम्बन्धों के मध्य तनाव, अलगाव के बाद जो बेचैनी उत्पन्न होती है,उ समें कहीं भी सामंजस्य नहीं दिखाई देता । नई माँ के मध्य बंटी पिता की छाया में, जहाँ उसका अपना होते हुये भी कोई नहीं, उसमें सहमापन है । फिर, पुरानी माँ अर्थात् अपनी माँ के पास बंटी, जहाँ वातावरण दमघोटू, जहाँ तनाव में एकाकीपन । वैवाहिक सम्बन्धों की परिधि में ' तलाक ' बंटी के लिये समस्या ही है ।

मन्नू जी ने बंटी की जन्मपत्र में एक महत्वपूर्ण बात कही है - " बंटी के तत्काल सन्दर्भ अजय और शकुन है । दूसरे शब्दों में वे सन्दर्भ अजय और शकुन के वैवाहिक सम्बन्धों का अध्ययन और उसकी परिणति के रूप में ही

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी का वक्तव्य ' जन्मपत्री - बंटी की ' pp. 85

मेरे सामने आये ।'' यहा मुझे भारत जी की बात सही लगी कि जैनेन्द्र जी ने स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों को जिस एकान्तिक दृष्टि से देखा है, उसका एक अनिवार्य आयाम बंटी ही है, क्योंकि शकुन-अजय के सम्बन्धों की टकराहट में सबसे अधिक पिसता बंटी ही है । शकुन और अजय तो आपसी तनाव की असहनीयता से मुक्त होने के लिये एक दूसरे से मुक्त हो जाते हैं, लेकिन बंटी क्या करे ? वह तो समान रूप से दोनों से जुड़ा है, यानी खण्डित-निष्ठा, उसकी नियति है ।''[1] एक सत्य जो जुड़ा है, रक्त सम्बन्ध से, वही आज के सन्दर्भ में उसकी स्थिति भय से ग्रस्त है । बंटी के प्रति कहीं कुछ का अहसास सब कुछ होते हुये उसे ऐसा लगता है, गलत और सही अगर कोई हो सकते हैं, तो वे अजय, शकुन और बंटी के आपसी सम्बन्ध । इन सम्बन्धों के लिये बंटी बेगुनाह है । त्रिकोणी संघर्ष में सम्बन्धों का हिस्सा तनाव के रूप में है, यह तनाव-सम्बन्धों की विडम्बना ही है । बंटी के साथ सबकी हमदर्दी है, क्योंकि वह सबको फालतू ही दिखता है, काश सम्बन्धों में कटुता न होती, तब स्थिति दूसरी ही होती । बंटी की मानसिक यातना पर हमें विचार अवश्य करना है, क्योंकि कथा का सही आधार तो यही पात्र ही है । बहरहाल बंटी की यह यात्रा चाहे परिवार की संश्लिष्ट इकाई से टूटकर क्रमश: अकेले, जड़हीन, फालतू और अनचाहे होते जाने की रही हो, लेकिन मेरे लिये यह यात्रा भावुकता, करुणा से गुजरकर मानसिक यंत्रणा और सामाजिक प्रश्नाकुलता की रही है ।

जीते-जागते बंटी का तिल-तिल करके समाज की एक बेनाम इकाई-भर बनते चले जाना यदि पाठक को सिर्फ अश्रु विगलित ही करना है तो मैं समझूंगी कि यह पात्र सही स्थान पर नहीं पहुंचा है ।''[2]

---

1- पूर्वोक्त, पृ0 6

जीवन की मानसिकता में तनाव-अलगाव का एक समसामयिक रूप है, तभी तो हर तनाव के आगे एक प्रश्नचिन्ह लगा रहता है। आज भी पुरुष एक प्रतिशत भी नहीं बदला, उसकी अपनी मानसिकता में स्त्री पर शासन करने की इच्छा है, वहीं पढ़ी-लिखी स्त्री इस आचार-विचार को नहीं मानती, तब तनाव दिनोंदिन बढ़ता है। ''[1] बंटी को प्रिंसिपल के पास छोड़कर उसके पापा चले गये तब बंटी भी दौड़ता चला गया, अलग रास्ते पर, फिर रेल के डिब्बे में, उसे कई स्वप्नों ने घेर रखा है, जीवन का यथार्थ, कहीं पूरा तो कहीं अधूरा है।

'आपका बंटी' में मन्नू जी ने तलाक समस्या के साथ-साथ बाल समस्या के माध्यम से महानगरीय पनपते इस तनावपूर्ण रोगों पर प्रकाश डालकर सामाजिक जीवन के गिरते मूल्यों पर व्यंग्य करने का अच्छा प्रयास किया है। तलाकशुदा स्त्री की मानसिकता, यातना और इससे बालक के जीवन की अनिश्चितता पर एक प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। उपन्यास की कथा मनोविश्लेषणात्मक है। बाल मनोविज्ञान का यथार्थ रूप बंटी के चरित्र में है।

(3) एक इंच मुस्कान :

'एक इंच मुस्कान' मन्नू भण्डारी व राजेन्द्र यादव (पति-पत्नि) दोनों का सहयोगी प्रयास है, जो मन्नू जी का प्रथम उपन्यास है। इस उपन्यास कथा के अमर, रंजना और अमला तीन प्रमुख पात्र हैं। मन्नूजी ने नारी पात्र अमला व रंजना का चित्रण किया, वहीं यादव जी ने पुरुष पात्र - अमर का चित्रण किया है। अमला उच्चवर्गीय आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न नारी है, जो बुद्धिवादिनी है और अहम् की अनुकृति है, जो किसी

---

1- रविवारीय (मन्नू भण्डारी से साक्षात्कार), पृ0 8, 9 अक्टूबर 88.

का सहारा लेकर जीवन जीना नहीं चाहती । अमला के व्यक्तित्व में पुरुष विरोधी तत्व अधिक हैं । मन्नू जी के अमला के माध्यम से उस नारी का चित्रण किया है, जो अपने रूपाकर्षण से पुरुष को समीप लाकर व्यथित करने में अपने को सब कुछ समझती है । अमला के माध्यम से मन्नूजी ने उस नारी की कथा को प्रस्तुत किया है, जो सामाजिक विध्वंस को ही मंगलकारी और जीवनोपयोगी समझती है, इस व्यापार में वह आनन्दित होती है । वह उसी पुरुष का साथ चाहती है, जिसमें अहम् न हो । इसी प्रकार रंजना की कथाक का स्वरूप एक भावुक हृदय को स्वतंत्र प्यार करने वाली नारी के रूप में किया है । वह अमर की सारी कमजोरियों के बावजूद भी उसे चाहती है । रंजना की लालसा है कि अमर का जीवन हर तरह से खुशियों से भर सके । वह अमर की कमजोरी के साथ उसके दुर्बल स्वभाव को जानती है, फिर भी उसके प्रति समर्पित रहती है । रंजना का विवाह अमर से हो जाता है, वह उसे सन्तुष्ट नहीं कर पाती और उसकी खुशियां आंसुओं में परिवर्तित हो जाती हैं, नारी-जीवन का यह दुःख आंखें स्वयं कह देती हैं ।

मन्नू जी ने नारी जीवन को दो आधारों पर चित्रित किया है - एक पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति से प्रभावित है, दूसरी, भारतीय संस्कृति में पली भावुक नारी है । अमला में पाश्चात्य और रंजना में पौर्वात्य संस्कृति की भिन्नता है, पर दोनों ही स्त्रियां अपने-अपने गुणों के अतिशयता के कारण जीवन में असफल हैं । संवेदनशीलता कथा का एक ऐसा आधार है, जहां प्रत्येक पात्र का जीवन एक आयाम से गढ़ा हुआ नजर आता है ।

" केवल इतना भर कहना पर्याप्त है कि ' एक इंच मुस्कान ' उस सनातन सवाल को फिर से एक बार पाठकों के सामने रखता है कि कलाकारों पर किसी प्रकार के नैतिक दायित्वों को निभाने के बंधन लगाये जा सकते हैं अथवा नहीं ।

अमर कहानीकार बनाम कलाकार है । "[1]

श्री यादव जी ने इस कलाकार का चित्रण इसी आधार पर किया है । रंजना उसकी सहधर्मिणी है, परन्तु अमर अपनी प्रेरणा अमला को मानता है । वस्तुत: दाम्पत्य जीवन के सुख के लिये त्याग करने में रंजना किसी तरह की कोई कसर उठाकर नहीं रखती, परन्तु उसे अपने पति की अर्धांगिनी होने का सुख शायद ही कभी मिल पाया हो । अमला अपनी संपत्ति-सुन्दरता और अभिव्यक्ति के स्तर पर पहुंचने वाली सरसता के माध्यम से कलाकार अमर को अपने वश में कर लेती है । धनी युवती और रसिक पाठिका की उच्छृंखल प्रतिक्रिया किसी भी कलाकार को पतन की खाई में पहुंचा देती है । उसमें आश्चर्य क्या है ? "[2]

इस प्रकार दोनों स्त्रियों की तरह अमर प्रतिष्ठा वर्ग में उसका जीवन असफल रहा है । राजेन्द्र यादव एवं मन्नू जी का यह संयुक्त प्रयास वास्तव में सराहनीय है ।

(4) <u>महाभोज :</u>

मन्नू भण्डारी का बहुचर्चित राजनीतिक उपन्यास का प्रकाशन 1979 में हुआ । इस उपन्यास की कथा राजनीति में फैले भ्रष्टाचार, विकृतियों, असंगतियों, राजनेताओं के भ्रष्ट आचरण और हथकण्डों को उभारने से गढ़ी हुयी है । आज समाज में प्रत्येक राजनीतिक नेता अपनी स्वयं की सत्ता को बचाये रखने का प्रयास कर रहा है, उसके लिये विभिन्न राजनीति के विकृत हथकण्डों और भ्रष्ट तरीकों को अपनाता है । कुर्सी बचाने का प्रयास भी भ्रष्ट

---

1- अनीता राजुरकर, ' कथाकार मन्नू भण्डारी,' पृ0 78
2- वही

तरीकों, विकृत हथकण्डों के मध्य है। सत्तारूढ़ पार्टी अपनी सत्ता को बचाने का प्रयास करती है, वहीं विरोधी पार्टी उसको उखाड़ने में भोली जनता को माध्यम बनाती है।

मन्नू जी ने 'नेता' को 'देता' के रूप में नहीं बल्कि 'लेता' के रूप में चित्रित किया है।

बिसू जैसे निरीह प्राणी की मौत कथा में राजनीति के षडयंत्र का आधार है। मुख्यमंत्री विरोधी पार्टी के नेता सुकुल बाबू, शिक्षा मंत्री त्रिलोचन सिंह, सभी कुर्सी बचाने और कुर्सी हड़पने के प्रयास में लगे हैं। आदर्श, दया, त्याग का मुखौटा लगाये ये सभी व्यक्ति अन्दर से पूर्णत: स्वार्थी और पतित हैं। उपन्यास का कथ्य जीवन के यथार्थ को ईमानदारी के साथ प्रस्तुत करता है।

उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की परम्परा को मन्नू जी ने एक ढंग से विकसित किया है। राजनीति की भ्रष्ट-नीति के साथ पुलिस की भ्रष्टाचारिता को भी उजागर कर दिया है। प्रेस की अभिव्यक्ति पर भी ताजा तीखा व्यंग्य है। 'महाभोज' मात्र एक राजनीतिक उपन्यास नहीं है, बल्कि इस उपन्यास से मैंने आज के समूचे परिवेश को पकड़ने की कोशिश की है, जिसमें प्रेस की स्वतंत्रता, पुलिस की भ्रष्ट कार्य-प्रणाली आदि सभी तत्व शामिल हैं, किन्तु भ्रमवश इसे केवल राजनीति को लेकर लिखा हुआ मान लिया जाता है।"[1]

वैसे बहुत सही अर्थ में कहें तो एक सफल कहानी 'अलगाव' का यह एक सफल रूपांतरण है। 'महाभोज' के बीज के रूप में 'अलगाव' कहानी लिखी

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- सारिका, अगस्त 1982 (प्रथम) ( जयपुर के महाभोज )

गयी । 'अलगाव' कहानी में 'महाभोज' उपन्यास तक पहुँचकर ही इस कथावस्तु का विकास ठप्प नहीं हुआ । 'महाभोज' उपन्यास से आगे बढ़कर इसकी कथावस्तु नाट्य में रूपान्तरित होकर हजारों दर्शकों तक पहुंच गयी ।[1] वास्तव में 'महाभोज' आज के जीवन मूल्यों की ही कथा है ।

(5) <u>आसमाता</u> ( बाल उपन्यास ) :

'आसमाता' श्रीमती मन्नू भण्डारी का बाल-उपन्यास है । 'आसमाता' की कथा काल्पनिक भले ही हो पर बच्चों के लिये एक उदाहरण है । बच्चे अपनी माँ को, माँ समझें, साथ ही, वीरता में कहीं किसी से पीछे नहीं रहें । मन्नू जी ने कथा का सूत्र एक राजा की दो रानियों से जोड़ा है । जिसमें एक बड़ी प्यारी, दूसरी बड़ी बिचारी है । प्यारी रानी को राजा ने सभी सुख-सुविधायें दे रखी थीं, तथा राजा उसे हर रोज एक नयी चीज माँगने पर देते । प्यारी रानी शरीर की जितनी सुन्दर थी, मन की उतनी ही काली । छल-छन्द इतना कि जिन्दा ही आदमी को मार दे, पर किसी को पता ही न लगे कि रानी ने मारा है । गुस्सा इतना कि मामूली आदमी तो क्या राजा तक उससे डरते ।[2] बिचारी रानी हालत महतरानी जैसी थी, वह टूटे-फूटे मकान में रहती, ज्वार-बाजरे की रोटी खाती । राजा आते, चले जाते, पर वह राजा से कुछ नहीं माँगती । राजा भर्नोपड़ी में कभी पाँव तक नहीं रखते । कभी सुख-दुःख की बात नहीं पूछते । फिर भी वह बहुत खुश रहती व सुखी भी रहती बिचारी रानी । बेटा वीरसिंह ही उसका असली सुख था ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- अनीता राजुरकर, 'कथाकार मन्नू भण्डारी,' पृ० 80

वीरसिंह को जब राजा ने बुलाया, तब माँ ने कहा -" बेटा पिताजी के सामने बेअदबी मत करना । वे जो कहें, सिर झुकाकर मान लेना । तुझे लेकर उन्हें शर्मिन्दा न होना पड़े ।" वीरसिंह ने माँ के पैर छुये और बोला -" माँ, तू मेरी माँ ही नहीं, गुरु भी है । कुछ भी ऐसा नहीं करूँगा जो तुझे शर्मिन्दा होना पड़े और पिताजी शर्मिन्दा होंगे तो अपने कामों से मेरी बातों से नहीं ।" और वीरसिंह घोड़े पर बैठकर महलों की ओर दौड़ा गया ।"[1]

राजदरबार में वीरसिंह ने अपनी माँ को माँ कहने की बात कही तथा राजा को यह भी कह दिया कि -" अब तक माँ की गोद में खेला । माँ के प्यार में पला । माँ ने खुद दुःख सहे, पर मुझे मालूम नहीं होने दिया कि दुःख क्या है ? अब बड़ा हुआ हूँ । अब मेरी गोद माँ के लिये है । मेरा सारा प्यार माँ के लिये है । मैं बड़े से बड़ा दुःख सहूँगा और माँ को सुखी करूँगा । मुझे न आपका राज्य चाहिये, न आपका खजाना । उसे आप और प्यारी रानी ही भोगें ।"[2]

वीरसिंह इतना कहकर दरबार से चला गया । महाराज, प्यारी रानी गुस्से में, राजा से बोलीं, महाराज का ऐसा अपमान । कोड़े मार-मार खाल खिंचवादी जावे वीरसिंह की । राजगुरु ने हाथ जोड़कर बोला महाराज वीरसिंह ने अपमान किया है, छोटी रानी का गुस्सा स्वाभाविक है । आप राजकुमार को राज्य से बाहर निकालने के आदेश दीजिये, बस यही सजा ठीक रहेगी । राजगुरु की बात छोटी रानी, दरबारी राजा, सबको यह सजा पसन्द आयी । महाराज ने वीरसिंह को राज्य से बाहर निकालने के आदेश दे दिये । वीरसिंह ने अपनी माँ बिचारी रानी को धीरज रखने को कहा, और कहा - कभी तो अच्छे दिन आयेंगें ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

वीरसिंह दिन चढ़ते ही घने जंगल में पहुंच गया । वीरसिंह को चलते-चलते जब रात हो गयी । उसे ऐसा लगने लगा कि जंगल खत्म ही नहीं हो रहा था । वह तो हिम्मतवाला युवक था, पर भूख भी उसे लग रही थी, उसे जंगल में ही एक झरना दिखाई दिया । माँ की दी हुयी एक रोटी खाई, पानी पिया और वहीं सो गया । जब उसकी नींद खुली तब उसे गाने की आवाज सुनायी दी । देखता है कि सामने ही चार छोटी-छोटी लड़कियाँ गोला बनाकर गा रही हैं, नाच भी रही हैं । उसने लड़कियों से कहा - राम-राम बहनो, राम-राम ।

इतना कहते ही लड़कियों का नाच थम गया । वीरसिंह ने देखा कि वे आपस में लड़ने लगीं । वे आपस में कह रही थीं कि उसने सिर्फ मुझे राम-राम किया है ।

वीरसिंह एक साहसी युवक होने के साथ-साथ बुद्धिमान भी था । अतः उसने इस झगड़े को निपटाने के उद्देश्य से पहली लड़की से पूछा - बहन तुम्हारा नाम क्या है ? उसने जबाब दिया - भूख । इसी तरह उसने दूसरी लड़की और तीसरी लड़की से भी उनका नाम पूछा तो उन्होंने जबाब में क्रमशः नींद और प्यास, अपने नाम बताये । लेकिन वीरसिंह ने बुद्धिमत्तापूर्ण उनसे अपने आपको बचाया । जब चौथी लड़की अकेली रह गयी थी, तब वीरसिंह ने स्वयं उसके पास जाकर उसका नाम पूछा तो उसने उत्तर दिया -' मेरा नाम है आस' । बोल मुझे राम-राम किया या नहीं ?

वीरसिंह इसी विश्वास के साथ घर से चला था, अतः उसने उसे प्रणाम किया और कहा -" तुम्हीं को राम-राम किया बहन । तुम्हीं को राम-राम किया, जिसका दुनिया में कोई नहीं, वह तुम्हारे ही सहारे जीता है । जिसको

सब छोड़ देते हैं, वह तुम्हें ही पकड़कर तो जिन्दा रहता है । तुम खुश हो जाओ तो ...... ।"[1]

इस प्रकार वीरसिंह 'आसमाता' का आशीर्वाद पाकर निश्चित हो गया कि अब तो मेरी इच्छा पूरी हो ही जायेगी, परन्तु कई दिन गुजरने के बाद भी उसे कोई काम नहीं मिला तो भी वह निराश न होकर उसी आस में बैठा रहा ।

लेकिन बिना प्रयास के कोई कार्य पूर्ण नहीं हो सकता । अतः एक दिन फिर उसे वहीं लड़की (आस) दिखाई दी और उसने अपनी इच्छा पूरी न होने का कारण पूछा तो उसने कहा कि -' बिना मेहनत करे कुछ नहीं मिलता । इस पर वीरसिंह ने अपनी कार्य के प्रति उत्सुकता दिखाई तो आसमाता ने उसे एक ऐसी पहाड़ी को पार करने को कहा जिस पर एक कदम भी चलना मुश्किल था, परन्तु मेहनती व साहसी वीरसिंह उस भयानक पहाड़ पर इसी आशा में की, इस पहाड़ को पार करते ही मेरी सब इच्छाएं पूरी हो जायेंगीं, चढ़ता चला गया ।

जब लक्ष्य पूरा होता दिखता है तो कठिन से कठिन मार्ग भी सुगम हो जाता है, वीरसिंह जल्दी पहाड़ी को पार करके नगर में पहुंचा, नगर में बड़ी धूमधाम थी, पता चला कि वहां पर आज राजा का चुनाव होना है ।

इससे वीरसिंह को क्या मतलब वह तो सिर्फ काम की तलाश में घर से निकला है । राजा का चुनाव होते ही काम भी मिल जायेगा, इसी विश्वास को लेकर हाथ-मुंह धोकर एक पेड़ के नीचे बैठ जाता है ।

---

1- मन्नू भंडारी, 'आसमाता,' पृ0 20

इतने में ही नगाड़े बजने लगे, नगर में एलान हुआ कि -" हमारे राजा की प्यारी हथिनी अपनी सूंड में माला लेकर जिसके भी गले में डाल देगी वही हमारा राजा होगा ।"[1]

सभी नगरवासी अपनी किस्मत को आजमाने के लिये खड़े हैं, परन्तु यह क्या हथिनी सभी को पार करती हुयी तेजी से दौड़ती हुयी आयी और वीरसिंह के गले में माला डाल दी, एक बार तो सबने इसे भूल स्वीकारा, परन्तु दुबारा भी जब वीरसिंह के गले में ही माला डाली तब सभी ने उसे अपना राजा स्वीकारा ।

पाँचवे दिन वीरसिंह का राजतिलक किया गया । वीरसिंह ने अपने मंत्री से तुरन्त ही अपनी माँ को लाने के लिये कहा और अपने राजकुमार होने का रहस्य खोला ।

वीरसिंह चाहता तो अपने पिता से अपने व माता के साथ किये गये अपमान का बदला ले सकता था, परन्तु उसके दिल में अपनों के प्रति बड़ों के प्रति सम्मान है, अतः वहकहता है -" नहीं-नहीं, यह मेरे पिता का राज्य है, उस पर मैं कभी आक्रमण नहीं कर सकता ।"[2]

वीरसिंह की आज्ञानुसार सैनिक गये, पर यह क्या चम्पा नगरी पर तो दूसरे राजा ने अपना अधिकार कर लिया था, माता-पिता का कहीं पता नहीं, वीरसिंह ने सुना तो बहुत गुस्सा आया, चारों तरफ सैनिक भेजे गये, परन्तु माता-पिता कहीं नहीं मिले ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भंडारी, 'आसमाता,' पृ0 24

2- वही, पृ0 28

इस बीच चम्पा नगरी से जबसे वीरसिंह आया, प्यारी रानी बहुत खुश थी, राजा भी जैसे उसकी हाथों की कठपुतली बन गया, यही कारण युद्ध में हार का मुख देखना पड़ा, और दोनों रानियों को लेकर जंगल की ओर भागना पड़ा, कष्टों में रहने वाले व्यक्ति को कष्ट का अनुभव अधिक नहीं होता, परन्तु सुख में रहने के बाद दुख आ जाये तो बड़ी परेशानी होती है। यही हाल प्यारी रानी का था, राजा भी पाश्चाताप से जला जा रहा था - "मेरी तो हिम्मत ही टूट गयी अब मुझसे नहीं होगा। मैंने अपने बेटे को निकाला, उसी पाप का फल भोग रहा हूं, और रो पड़ते।"[1]

बेचारी रानी उन्हें आस बंधाती, चलते-चलते वह वीरसिंह की नगरी में पहुंचे, काम तलाशा, जल्दी ही लकड़ी काटने का काम मिल गया, उधर वीरसिंह भी अपने माता-पिता के लिये काफी परेशान था, एक दिन वीरसिंह के पिता और बेचारी रानी लकड़ी के गट्ठे सिर पर रखकर महल के सामने से निकले तो वीरसिंह देखते ही उन्हें पहचान गया, और रोककर उनसे नाम व पता पूछा। राजा ने अपना रिचय परदेशी के रूप में दिया, वीर सिंह तो अपने माता-पिता को पहचान ही गया था, अतः उसने उन्हें अपने महल में ही रख लिया।

बेचारी रानी ने राजा का कमरा देखा तो आश्चर्य हुआ और फिर रोटियां देखते ही उसकी आंखों से आंसू बहने लगे, वीरसिंह से न रहा गया, उसने तुरन्त अपनी मां के पैर छू लिये, मां की ममता व बेटे का आदर सहित प्यार का मिलन शब्दों में नहीं बांध सकते, उसे तो सिर्फ देखा व अनुभव किया जा सकता है।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

चारों तरफ यह बात फैल गयी कि परदेशी ही महाराज के माँ-बाप हैं । राजा को भी अपने पुत्र की मातृ-पितृ भक्ति देखकर अपने व्यवहार पर दुख होता, तो बेचारी रानी कहती - " मैंने न तो भगवान को जाना, न भाग्य को । तू आस बंधाकर गया, उसी के सहारे सब दुख झेले । घर छोड़ा, नगर छोड़ा, आशा को एक पल भी नहीं छोड़ा । उसी ने यह सब दिखाया । "[1]

मन्नू भण्डारी ने आसमाता बाल उपन्यास की कथावस्तु में व्यक्ति को कठिन से कठिन समय में साहस से कार्य लेने की शिक्षा दी है, लक्ष्य हमेशा विश्वास और सहारा के सहारे ही मिलता है ।

( 6 ) कलवा ( बाल उपन्यास ) :

' कलवा ' किशोर मनोविज्ञान पर आधारित उपन्यास है । मन्नू भण्डारी ने शिक्षा के गुरुकुल के महत्व को समझाते हुये, यह स्पष्ट किया है कि शिक्षा ग्रहण करने के लिये गुरुकुल में छोटे-बड़े गरीब-अमीर का भेद नहीं होता । शिक्षा सबको एक सी मिलती है, पर ग्रहण अपने अपने ढंग से सब ही करते हैं ।

' कलवा ' उपन्यास में कथा का सूत्र तीन पात्रों से शुरु होता है । प्रथम पात्र है - राजपुत्र, द्वितीय साहूकार का बेटा और तीसरा पात्र है - कलवा चमार । तीनों के ही अपने-अपने सोचने के ढंग अलग-अलग हैं । एक ओर जहाँ राजकुमार भाग्य को महत्व देता है तो साहूकार धन को, वहीं कलवा मनुष्य को दुनिया की सबसे बड़ी शक्ति मानता है । " दुनिया में सबसे बड़ी शक्ति मनुष्य और सबसे बड़ा कर्ता है, मनुष्य का अपना पौरुष ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता है ईश्वर और भाग्य में उसका विश्वास । ईश्वर न कभी था, न आज है, अगर ईश्वर जैसी कोई शक्ति होती तो दुनिया में कभी इतना अन्धेर नहीं होता, इतना भेदभाव नहीं होता । इस अँधेर-भरी दुनिया का भी अगर कोई ईश्वर है तो महाराज, मुझे तो उससे भी लड़ना है । जो चतुराई मनुष्य को स्वार्थी बनाती है, उस चतुराई और उन चतुरों की जड़ खोदनी है । मैं एक ऐसी दुनिया बनाना चाहता हूँ, जहाँ आदमी न भाग्य का बनाया खाये, न बाप का दिया भोगे, सब अपनी अपनी मेहनत का ही खायें, बेईमानी की एक कौड़ी भी किसी से न लें और अधिकार की एक कौड़ी भी न छोड़ें । जहाँ धन की नहीं गुण की कदर हो । जहाँ ईश्वर की नहीं, आदमी की पूजा होती हो ।"[1]

इस प्रकार तीनों ही शिक्षा ग्रहण करके गुरुकुल से वापस जाते हैं । राजपुत्र का तिलक खूब धूमधाम से हुआ, चाहे इसके लिये गरीबों का शोषण किया गया हो । इससे राजकुमार को क्या मतलब ? उसे तो सिर्फ अपने राज्य से तथा अपने राजा होने का अभिमान था ।

इतने में ही साहूकार पुत्र राजकुमार के नगर में आ पहुंचता है । अपनी वाक-चातुर्यता से राजकुमार का मन मोह लेता है और अपनी स्वार्थ सिद्धि भी पूरी करता जाता है ।

"मक्कारी, धूर्तता और लूट-खसोट कर टिका यह राज्य ऊपर से तो चलता रहा, पर भीतर ही भीतर इसकी जड़ें खोखली होती गयीं ।"[2]

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भंडारी, 'कलवा', पृ0 11

2- वही, पृ0 24

पाप का घड़ा जब जरूरत से ज्यादा भर जाता है तो वह एक न एक दिन फूट पड़ता है । यही हाल राजकुमार का हुआ, राज्य की सैनिक शक्ति कमजोर पड़ गयी, खजाना खाली हो गया, इस कमजोरी का फायदा उठाकर दूसरे राजा ने आक्रमण कर दिया, यह देखकर साहूकार पुत्र तो अपनी जान बचाकर चला गया ।

राजकुमार जो कि राज्य को भाग्य की धरोहर समझता था, वही राज्य एक दिन में मिट्टी में मिल गया और राजकुमार जंगली की ओर जान बचाकर भाग निकला । भाग्य के भरोसे जीने वाला आदमी कुछ करने लायक तो रह नहीं जाता, सो बस भाग्य का मारा वह घमण्डी राजकुमार अब घास छीलता और दिन काटता ।

दूसरी तरफ कल्वा सोचता कि -" यह कैसा नियम है, जो मेहनत करता है, वह भूखा मरता है, जो जितनी मेहनत करता है, वह उतना ही ज्यादा भूखों मरता है, और जो कुछ भी नहीं करता वह उतना ही ऐश करता है ।"[1]

मन में इस भावना को बदलने का निर्णय लेकर वह गाँव पहुँचा । मन में, कुछ कर गुजरने का उत्साह था, एक दिन जंगल में वह लकड़ी काट रहा था, उसने देखा एक गाड़ी (पालकी )जा रही है । पालकी जब आगे निकल गयी तो उसे एक हार पड़ा दिखाई दिया, भागा-भागा वह उस पालकी तक पहुँचा, पालकी में कोई राजा-महाराजा न होकर देबू नायक बनजारा था । उसने कल्वा की ईमानदारी से खुश होकर उसे वह हार उपहार में देना चाहा, परन्तु कल्वा ने उसे लेने से इन्कार कर दिया । उसके लिये पाई चीज व पराई चीज लेना हराम है, अधिक कहने पर उसने कहा कि वह रास्ते में किसी राजा को भेंट करते जाएं तो न मेरे पास रहेगा न तुम्हारे पास ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भंडारी, 'कल्वा,' पृ0 27

बनजारे ने चम्पा नगरी में जाकर हार को राजा को भेंट किया तो राजा ने भेंटकर्ता का नाम पूछा, जिसे बनजारे ने कलवा चमार बताया, राजा ने इसे कलवा की नम्रता समझी, अब राजा ने भी लौटते में बनजारे के हाथों कलवा के लिये एक सुन्दर हार भेजा, जैसे ही बनजारा कलवा के पास हार लेकर पहुँचा। उसने उसे लेने से इन्कार कर दिया । उसने कहा - "यदि राजा को देना ही है तो कोई ऐसी चीज देते जिसमें न जनता का पैसा हो न गरीबों का खून । अपनी मेहनत का कुछ देते, यदि देने का ऐसा ही शौक चर्राया है तो । उनसे कहो कि सालभर के लिये अपना राज दे दें, एक बार सबको दिखा दूं कि राज कैसे किया जाता है ।"[1]

बनजारा वापस चम्पा नगरी पहुँचा । राजा को प्रणाम कर हार वापस किया और राजा के बार-बार आग्रह पर देबू ने कलवा की इच्छा जाहिर कर दी । राजा इस प्रस्ताव को सुनकर काफी प्रसन्न हुआ । उसे तो अपनी बेटी की शादी करना ही थी ।

कलवा चमार की तरफ से देबू बनजारे ने सारी तैयारी की - "इस पगले की तो किस्मत जागी सो जागी, सारे गाँव वालों के भाग जागे । ठौर-ठौर घूमने वाले के पास धन-दौलत का कोई पार न था, कलवा पर ऐसा प्रेम उमड़ा कि लोगों को असली बाप को पहचानना मुश्किल हो गया ।"[2]

इस प्रकार कलवा को राज्य व पुत्री सौंप कर राजा जंगल की ओर चला गया । कलवा का राज्य न होकर सबका अपना राज्य था । वह कहता -

---

1- मन्नू भंडारी, 'कलवा', पृ० 37

2- वही, पृ० 41

"आप भगवान को भी भूल जाओ, भाग्य को भी और राजा को भी, हम सभी भगवान हैं, अपना-अपना भाग्य बनाना अपने ही हाथ में है। मैं आपका राजा नहीं, सेवक की तरह ही आपके सुख-दुःख का ख्याल रखूंगा। जिस दिन मेरे काम की शिकायत हो मुझे हटा दीजिये और अपने लिये कोई योग्य सेवक चुन लीजिये, सेवक चुनने का हक आपका है। और चुना हुआ सेवक आपका सुख-दुःख बंटाये, यह कर्तव्य उसका है।"[1]

मन्नू जी ने कलवा की कथावस्तु के माध्यम से सत्य, ईमानदारी, मेहनत की शिक्षा के महत्व को एक आयाम दिया है, साथ ही भगवान का स्वरूप स्वयं मनुष्य में है, जो सद्गुणों पर आधारित है, बाल उपन्यास में शिक्षा का जो रूप है, वह बहु-आयामी बताया है।

कहानी संग्रह –

मन्नू जी का कथा साहित्य ( कहानी संग्रह ) :

हिन्दी कथा साहित्य में श्रीमती मन्नू भण्डारी का योगदान एक नये स्वर एवं वातावरण के रूप में है। कथाकार के रूप में उन्होंने ख्याति प्राप्त कर नये युग का प्रारम्भ किया है। उनका साहित्यिक व्यक्तित्व कथा-साहित्य पर निर्भर है। अब तक उनका निम्नलिखित कथा-साहित्य प्रकाशित हो चुका है :

| क्र० | कथा संग्रह | सन् | प्रकाशक |
|---|---|---|---|
| 1- | मैं हार गयी | 1957 | राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली |
| 2- | तीन निगाहों की एक तस्वीर | 1959 | श्रमजीवी प्रकाशन, इलाहाबाद |
| 3- | यही सच है | 1966 | अक्षर प्रकाशन, दिल्ली |
| 4- | एक प्लेट सैलाब | 1968 | तदैव |
| 5- | त्रिशंकु | 1978 | तदैव |

मन्नू जी के समस्त कथा-साहित्य के चयन कर तीन अलग-अलग प्रकाशकों ने उनके विशेष कथा-संग्रह प्रकाशित किये हैं :

| | | | |
|---|---|---|---|
| 6- | श्रेष्ठ कहानियाँ | 1969 | अक्षर प्रकाशिन, दिल्ली |
| 7- | मेरी प्रिय कहानियाँ | 1979 | राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली |
| 8- | सप्तपर्णा | 1982 | नेशनल पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली |

इसके साथ ही 'असामयिक मृत्यु,' मनोरमा कहानी मासिक में 1977 में प्रकाशित हुयी । 'अंकुश' कहानी कर्मयुग में 9 अप्रैल 1961 में प्रकाशित हुयी थी । इस प्रकार मन्नू जी की 50 से अधिक कथायें प्रकाशित हो चुकी हैं ।

आज भी दूरदर्शन छायांकन हेतु कथा।उपन्यास साहित्य पर नाट्य रंगमंच की दृष्टि से संवार आदि लिख रही हैं ।

कथा शिल्पी श्रीमती मन्नू जी के कथा-संग्रह 'मैं हार गयी' ये 12 कथायें हैं । इनमें 'ईसा के घर इन्सान,' 'गीत का चुम्बन,' 'जीती बाजी हार,' 'एक कमजोर लड़की की कहानी,' 'सयानी बुआ,' 'अभिनेता,' 'शमशान,' 'दीवार,' 'बच्चे और बरसात,' 'पंडित गजाधर शास्त्री,' 'कील और कसक,' और 'दो कलाकार' हैं । मन्नू जी का यह कथा-संग्रह प्रथम है । अंतिम कथा 'मैं हार गयी' के आधार पर कथा-संग्रह का नाम है ।

## ईसा के घर इन्सान :

पहाड़ियों के घिरे शहर में मिशनरी लड़कियों का कालेज है । स्टाफ में नन्स ही हैं । एक-आध अन्य व्यक्ति का भी कार्य कर रही हैं । इसमें रत्ना है । रत्ना को कालेज और फादर के प्रति बेहद कौतूहल तथा भय है । ऐनी और वेन हँसमुख हैं । लूसी और मेरी परेशान हैं, उनके चेहरे

मन्नू जी के समस्त कथा-साहित्य को चयन कर तीन अलग-अलग प्रकाशकों ने उनके विशेष कथा-संग्रह प्रकाशित किये हैं :

| | | | |
|---|---|---|---|
| 6- | श्रेष्ठ कहानियाँ | 1969 | अक्षर प्रकाशिन, दिल्ली |
| 7- | मेरी प्रिय कहानियाँ | 1979 | राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली |
| 8- | सप्तपर्णा | 1982 | नेशनल पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली |

इसके साथ ही 'असामयिक मृत्यु,' मनोरमा कहानी मासिक में 1977 में प्रकाशित हुयी। 'अंकुश' कहानी कर्मयुग में 9 अप्रैल 1961 में प्रकाशित हुयी थी। इस प्रकार मन्नू जी की 50 से अधिक कथायें प्रकाशित हो चुकी हैं।

आज भी दूरदर्शन छायांकन हेतु कथा।उपन्यास साहित्य पर नाट्य रंगमंच की दृष्टि से संवार आदि लिख रही हैं।

कथा शिल्पी श्रीमती मन्नू जी के कथा-संग्रह 'मैं हार गयी' ये 12 कथायें हैं। इनमें 'ईसा के घर इन्सान,' 'गीत का चुम्बन,' 'जीती बाजी हार,' 'एक कमजोर लड़की की कहानी,' 'सयानी बुआ,' 'अभिनेता,' 'शमशान,' 'दीवार,' 'बच्चे और बरसात,' 'पंडित गजाधर शास्त्री,' 'कील और कसक,' और 'दो कलाकार' हैं। मन्नू जी का यह कथा-संग्रह प्रथम है। अंतिम कथा 'मैं हार गयी' के आधार पर कथा-संग्रह का नाम है।

ईसा के घर इन्सान :

पहाड़ियों के घिरे शहर में मिशनरी लड़कियों का कालेज है। स्टाफ में नन्स ही हैं। एक-आध अन्य व्यर्थ का भी कार्य कर रही हैं। इसमें रत्ना है। रत्ना को कालेज और फादर के प्रति बेहद कौतूहल तथा भय है। ऐनी और वेन हंसमुख हैं। लूसी और मेरी परेशान हैं। उनके चेहरे

पर उदासी रहती है। जूली नामक लड़की ने एक दूसरी लड़की को चूम लिया। इस लड़की का फादर ने शुद्धिकरण भी किया। जूली, जो पहले चहकती रहती थी, अब उदास रहने लगी, तीन दिन में ही वह जिन्दा लाश सी बन गयी। रत्ना इस बात को समझ नहीं पायी कि फादर ने आत्मशुद्धि कैसे की है। रत्ना सिस्टर्स को हिन्दी पढ़ाने चर्च जाती है, उसे नन - एंजिल और फादर के सम्बन्ध में जो कुछ देखने-सुनने को मिलता है, उस ढोंग को वह स्पष्ट करती है। फादर के काबू में एंजिला नहीं आती, उसकी खूबसूरती पर फादर आशक्त है। रत्ना के पूछने पर एंजिला बताती है कि मुझे कोई नहीं रोक सकता। फादर फालतू बातें नहीं करेंगे।

इस घटना के तीसरे दिन लूसी भाग गयी। इसके कारण चर्च की दीवारें ऊँची-ऊँची उठने लगीं। चर्च का जीवन घुटा-घुटा-सा है। जीवन के सब सुखों से वंचित रहने का नाटक चर्च में होता है। धर्म के नाम पर होने वाले नारी-शोषण की कथा एंजिला के माध्यम से विरोध का स्वरूप प्रकट होता है, जहाँ सुलभ भावनाओं की अभिव्यक्ति को अधिकार मिलता है।

मन्नू जी ने नारी-शोषण एवं सहज प्रेम की अभिव्यक्ति कथा के माध्यम से की है।

## गीत का चुम्बन

आज की नारी आधुनिक और प्राचीन परम्पराओं के मध्य छटपटा रही है। 'गीत का चुम्बन' की कथावस्तु नारी की इस व्यथा कथा पर आधारित कथा है। कनिका जो कि 'गीत का चुम्बन' की प्रमुख पात्र है, आधुनिक युवती के रूप में उसका मौन और अव्यक्त प्रेम में कुंठा है।

कनिका एम॰ए॰ का अध्ययन कर रही है, वह अच्छा गाती है, उसकी मौसी उसके साथ ही रहती है, जो उसके क्रिया कलापों पर ध्यान रखती है। माथुर साहब के यहाँ आयोजित समारोह में शहर के कवि, साहित्यिक, चित्रकार एवं गायक भी आये, यहीं कनिका का परिचय कवि निखिल से हो गया। जिनके गीत वह गाती थी। मिसेज माथुर के आग्रह पर कनिका ने निखिल का गीत गाया, जिसे निखिल को बहुत अच्छा लगा।

इस समारोह के बाद निखिल कनिका के घर आने लगे, इस सम्पर्क से वह रेडियो पर गाने लगी और उसकी चर्चा भी फैल गयी। स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की चर्चा हुयी, कनिका ने नये वातावरण की सबको जानकारी दी, साथ ही कहा - बीवी आये और किसी दूसरे से शारीरिक सम्बन्ध रखे तो उसे बर्दाश्त नहीं करेंगे। उसका कहना है, बातें करना तो सरल है, कोरे सिद्धान्त से कुछ नहीं होता। इसी खुली चर्चा के बाद एक दिन निखिल ने कनिका को बाहों में भरकर चूम लिया। तब इस घटना के कारण कनिका ने निखिल को एक चाँटा मार दिया। दूसरे दिन निखिल ने कनिका से माफी माँग ली और वह चला गया।

एक सप्ताह के बाद निखिल का पत्र कनिका के पास आया, उसमें लिखा कि तुमने मेरी आँखें खोल दीं कि शारीरिक सम्बन्ध से परे लड़के-लड़की की मित्रता का कोई आधार हो सकता है, और इसीलिये मुझे उस दिन का अपना व्यवहार कचोट रहा है। मुझे तुम पर जरा भी गुस्सा नहीं, अपने पर ही ग्लानि है।

कनिका ने निखिल के पत्र के टुकड़े-टुकड़े कर दिये और तकिये में मुंह छिपाकर सिसकती रही ।

निखिल के जीवन में अनेक लड़कियां आयी हैं । उसके मतानुसार कोई भी लड़की स्पर्श, आलिंगन, चुम्बन तक की छूट, सहज रूप से देती है, कनिका निखिल से प्रेम करती है । निखिल के व्यवहार से नाराज नहीं होती । उसकी प्रतीक्षा करती है । उसके जीवन में निखिल एक पुरुष है, अनेक नहीं । वह नयी मान्यताओं को स्वीकार करती है, पर अंगीकार नहीं कर पाती ।

इस प्रकार एक लड़की के रूप में कनिका कमजोर है । आधुनिक एवं प्राचीन नैतिक मूल्यों के मध्य कनिका का चरित्र मुख्य रूप से छटपटाहट के रूप में है ।

## जीती बाजी की हार

विवाहित लड़कियों की चर्चा का मुख्य विषय पति और परिवार रहता है, यह जीवनचर्या का एक अंग है । नलिनी, आशा और मुरला कालेज जीवन में घनिष्ट मित्र थी, पुस्तकालय, साहित्यिक चर्चा के साथ भावी जीवन के ख्वाब में निमग्न रहती । होता भी यही है कि प्रारम्भ में यारी विवाह से पूर्व एक स्वप्न होता है, उसके बाद पति एवं परिवार उसका हिस्सा बनकर रह जाता है । कभी-कभी ऐसे वातावरण में लड़कियों के विचारों पर तरस आता है । पढ़ाई पूरी होने के पहले ही नलिनी का विवाह हो गया । आशा एम०ए० करते करते ही प्रेम-विवाह में बंध जाती है । मुरला एम०ए० में प्रथम स्थान प्राप्त करती है तथा समाचार पत्रों में उसका नाम छपता है । अनेक युवकों ने विवाह प्रस्ताव भी रखे, पर उसने विवाह न

करते हुये, शोध-कार्य किया, उन्हीं दिनों आशा ने चर्चा के दौरान मुरला को विवाह की सलाह दी । मुरला ने इन्कार कर दिया । दोनों में विवाह के सम्बन्ध में शर्त लगी कि मुरला अविवाहित रहेगी तो आशा उसे मुंहमांगा इनाम देगी ।

मुरला शिक्षा विभाग के उच्च पद पर आसीन हो गयी । पन्द्रह वर्ष बाद मुरला किसी सभा का सभापतित्व करने इलाहाबाद आयी । यहाँ आशा से मुलाकात हुयी । आशा ने विवाह की शर्त की याद दिलाई और मुरला से मांगने का आग्रह किया । मुरला ने आशा की पाँच साल की छोटी प्यारी सी बच्ची माँग ली ।

आशा हँसी - "अरे माँग ले ना । बहुत बड़ा दिल पाया है, फिर तू तो यों भी कुछ माँग ले तो मना न करुँ, और अभी तो हारकर बैठी हूँ, किस मुँह से मना करुँगी ।"

मुरला ने पास बैठी हुयी आशा की सबसे छोटी लड़की को पास खींचकर प्यार करते हुये कहा - "तो अपनी यह बिटिया मुझे दे-दे" ।[1]

मन्नूजी ने नारी जीवन के विविध पहलुओं को एक नये आयाम के रुप में प्रस्तुत किया है, जहाँ शिक्षित नारी विवाह नहीं करती है, तो यह एक शिक्षित मानसिकता है, यह परिवर्तन पाश्चात्य सभ्यता की ही आधार है, जबकि भारतीय जीवन में नारी का पूर्ण जीवन विवाह ही माना गया है ।

---

1- मन्नू भंडारी, 'मैं हार गयी' कथा संग्रह की 'जीती बाजी की हार,' पृ0 41

## एक कमजोर लड़की की कहानी

आज से तीन साल पहले रूप की माँ का देहान्त हो गया । उसके पिता रमेश बाबू ने पुनः विवाह किया । नई माँ ने आते ही रूप का स्कूल छुड़वा दिया । पिता ने घर में ही उनकी पढ़ाई की व्यवस्था कर दी । रूप चाहती थी कि मैं इसका विरोध करूँ । परन्तु कुछ भी कहने का साहस नहीं कर पाती थी ।

नई माँ रूप को सारा दिन काम में ही लगाये रहती । पिता रमेश बाबू से रूप की यह हालत देखी नहीं गयी और उन्होंने रूप को उसके मामा के पास पहुँचा दिया । मामा-मामी रूप को पाकर बहुत प्रसन्न हुये । रूप भी इतने दिनों के बाद अचानक ढेर-सारा प्यार पाकर बहुत खुश थी ।

उस घर में एक अन्य सदस्य था । ललित जिसे कि मामा-मामी बेटा जैसा रखते थे । रूप ने मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की । सभी बहुत खुश हुये ।

पिता का पत्र आया, जिसमें उन्होंने रूप को अपने घर बुलाया था । रूप बहुत परेशान थी, लेकिन विरोध भी नहीं कर सकती थी, क्योंकि उसे लगता था कि यदि पिताजी को टूटा-सा जबाब दे दूँगी तो वह मेरे बारे में क्या सोचेंगे, लोग क्या कहेंगे ? इस पर ललित कहता है कि - " मैं बस यही तो तेरी कमजोरी है, घरवाले जरा-सा कह दें, हमारी रूप बिटिया जैसा है, कोई दुनिया में और फिर रूप बिटिया से चाहे कोई कुये में कूदने को कहे तो कूद जायेगी । "[1]

---

1- मन्नू भंडारी, ' मैं हार गयी 'कथा संग्रह की ' एक कमजोर लड़की की कहानी, ' पृ0 50

इसी प्रकार दिन बीतते-बीतते तीन वर्ष हो गये । ललित को उच्च शिक्षा के लिये विदेश जाना था । परन्तु वह रूप को छोड़कर जाना भी नहीं चाहता था । परन्तु मजबूरी थी । अतः रूप को अपने प्रेम के प्रति विश्वास दिलाकर और यह कहकर कि मेरी धरोहर तुम्हारे पास है, इसे संभालकर रखना, चला जाता है ।

रूप के जीवन में ललित के विदेश जाते ही एक और घटना घटती है । उसकी शादी बिना रूप से पूछे ही उसके पापा एक वकील साहब से तय कर देते हैं । रूप न तो विरोध कर पाती है, न ही मर पाती है । बुझे दिल से गृहस्थी को संभाले रहती है । वैसे वकील साहब के यहाँ सुख-सुविधाओं की कमी नहीं थी, परन्तु जिसकी सब साध दफना दी गयी हो, वह इन साधनों का क्या करेगा ? पति अत्यधिक व्यस्त रहते थे, थे काफी उदार हृदय ।

ऐसे ही दिन गुजर गये, एक दिन अचानक ललित रूप के यहाँ पहुँच जाता है । वकील साहब ने आदर सहित उसका स्वागत किया, अच्छी तरह से उसकी रहने की व्यवस्था करवा दी ।

" पूरे सप्ताह भर तक ललित रूप के मन को दृढ़ बनाता रहा । विदेश की स्त्रियों की स्वतंत्रता, तलाक, प्रेम की बातें बताकर उसने रूप को अपने साथ भाग जाने के लिये तैयार कर लिया । "[1] पहले तो संस्कारों की बेड़ी में बंधी रूप ने मना किया, परन्तु उसकी तर्कपूर्ण बातों ने रूप का मन भी विचलित कर दिया और वह उसके साथ जाने को तैयार हो गयी । घर से रूप और उसके पति रमेश बाबू से विदा लेकर ललित होटल में ठहर

---

1- पूर्वोक्त, पृ० 60

गया, रूप उसे 12 बजे स्टेशन पर मिलने वाली थी। आज दिनभर रूप भविष्य के सपने ही देखती रही। भोजन करते समय जब रूप ने रमेश से देर से आने का कारण पूछा तो उन्होंने कहा कि "मेरे दोस्त की बीबी अपने प्रेमी के साथ भाग गयी और रूप के प्रति विश्वास प्रकट करते हुये कहा कि अरे पढ़ी-लिखी तो तुम भी हो, भागने की बात तो दूर रही, दो साल हो गये, मुझे कभी याद नहीं पड़ता कि तुमने आँख उठाकर किसी पुरुष से बात की हो। यह भी कोई बात हुयी भला।"[1]

परिणाम स्वरूप कमजोर लड़की रूप भाग नहीं सकी। वह रमेश रमेश वकील साहब की ही पत्नी बनी रहने पर मजबूर थी।

मन्नू भंडारी ने प्रस्तुत कहानी में एक ऐसी लड़की का चित्र प्रस्तुत किया है, जो कि परिस्थितियों से विद्रोह करना तो चाहती है, परन्तु उसे यथार्थ में कार्यान्वित नहीं कर पाती है।

उसे अपनी नहीं लोगों की ज्यादा चिन्ता रहती है कि लोग क्या कहेंगे? वह अपने विषय में निर्णय लेने में भी अक्षम है।

अतः परिणामस्वरूप वह प्रेम के अन्तर्मन के सम्बन्धों को भी दूसरों के लिये समर्पित कर देती है।

## सयानी बुआ

मन्नू जी ने 'सयानी बुआ' कथा में जीवन को एक मशीन की तरह मात्र माना है। आवश्यकता से अधिक समय की पाबंदी एवं अति-व्यवस्था

---

1- पूर्वोक्त, पृ० 65

किस प्रकार मनुष्य को मनुष्य से मशीन बन जाने पर बाध्य कर देती है। प्रस्तुत कहानी इसी तथ्य को उजागर करती है।

'सयानी बुआ' जो कि अत्यधिक समय की पाबंद एवं अत्यधिक व्यवस्थित रहने वाली नारी है। बचपन से ही वह इस काम में दक्ष है। उन्होंने एक रबर जो कि चौथी कक्षा में खरीदी थी, वह कक्षा नवीं तक चलायी।

परिवार के सभी लोगों पर उनका कड़ा नियंत्रण था। "सब पर मानो बुआजी का व्यक्तित्व हावी है। सारा काम वहाँ इतनी व्यवस्था से होता, जैसे सब मशीन हों, जो कायदे में बंधी, बिना रुकावट अपना काम किया करती है।"[1]

शादी के पन्द्रह वर्ष बाद भी उनका सामान ज्यों का त्यों रखा था, ऐसा नहीं था कि उनका प्रयोग न होता है। किसी की क्या मजाल थी कि एक खरोंच भी लगा सके। बुआ को काफी बड़ा गर्व था अपनी इस व्यवस्था पर। वह भाई साहब जो बुआ के पति थे, उनसे कहा करती - "यदि वे इस घर में न आती तो बिचारे भाई साहब क्या हुआ होता।"

सयानी बुआ के इतने कठोर नियंत्रण के बावजूद एक दिन अचानक उनकी लड़की अन्नू बीमार पड़ गयी, डाक्टर ने घर की स्थिति को समझते हुये भाईसाहब के साथ पहाड़ पर अन्नू को ले जाने की सलाह दी, बुआ ने न चाहते हुए भी डाक्टर की सलाह के कारण, अन्नू को भाई साहब के साथ पहाड़ पर भेज दिया, लेकिन जाते समय खाने-पीने, पहनने, घूमने, यहाँ तक

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'मैं हार गयी' कथा संग्रह की 'सयानी बुआ', पृ0 67

कि रोज एक पत्र डालने की सख्त हिदायत दी गयी । अन्नू के जाने के समय बुआ के रोने से ऐसा लगा, जैसे मानो उनकी भयंकर कठोरता में कोमलता भी छिपी है । "[1]

भाई साहब का रोज एक पत्र आता, बुआ भी रोज पत्र डालती, अचानक एक महीने के बाद भाई साहब का तीन दिन तक कोई पत्र नहीं आया, बुआ की चिन्ता का पार नहीं था । रात भर फूट-फूटकर रोईं, सुबह नौकर पत्र लेकर आया, साहस करके मैंने (भतीजी ) पत्र पढ़ा, पत्र के अन्त में लिखा था - "धैर्य रखना मेरी रानी, जो कुछ हुआ, उसे सहने की और भूलने की कोशिश करना, कल चार बजे तुम्हारे पचास रुपये वाले सेट के दोनों प्याले मेरे हाथ से गिरकर टूट गये । "[2]

वास्तविकता जानकर, बुआ रोते-रोते हंसने लगी, मुझे (भतीजी ) को आश्चर्य लगा, पचिआने की सुराही तोड़ देने पर नौकर को मारने वाली बुआ, प्याले टूटने पर ऐसे हंस रही थी, मानों उन्हें उनकी खोई अमूल्य वस्तु मिल गयी हो ।

प्रस्तुत कहानी के माध्यम से मन्नू भंडारी ने एक ओर जहाँ अत्यधिक व्यवस्थित एवं समय की पाबंद नारी को चित्रित किया है, वहीं उसके अन्दर छुपे ममत्व को भी दर्शाया है ।

---

1- पूर्वोक्त, पृ० 68

2- वही, पृ० 71

## अभिनेता

मन्नू भण्डारी के प्रारम्भिक जीवन से जीवन के अन्त तक किसी योजना के प्रारम्भ का यथार्थ बिन्दु मात्र है अभिनय जीवन का यथार्थ मंच है, कभी-कभी वह यह अभिनय दूसरे के लिये करता है जिसमें उसका उद्देश्य स्वयं का है, जहां वह अभिनय के इस रोग में व्यथा के समान बंध जाता है।

"मैं तो केवल रंगमंच पर ही अभिनय करती हूं, पर तुम्हारा तो सारा जीवन ही अभिनय है। बड़े ऊंचे कलाकार और सधे हुये अभिनेता हो, तुम मेरे दोस्त।"[1]

प्रस्तुत कहानी में एक अभिनेत्री ( रंजना ) जो कि सिर्फ रंगमंच पर ही अभिनय करती है। इसके अलावा उसे किसी से मिलना-जुलना पसंद नहीं, वैसे उसे चाहने वालों की कमी न थी, परन्तु ऐसा कोई नहीं था, जिसे वह चाह सके।

एक दिन रंजा की मित्र कामिनी के घर पार्टी में उसकी मुलाकात दिलीप ओझा से होती है। दोनों एक दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं। दिलीप अभिनय पसंद नहीं करता। वह रंजना को यह काम छोड़ देने को कहता है। निष्कपट रंजना उस पर दृढ़ विश्वास कर बैठती है। परिणामस्वरूप वह दिलीप को कोरा चैक देने के लिये भी तैयार है। दिलीप ने चैक पर बारह हजार रुपये भरे और पन्द्रह दिन की कहकर देहरादून चला गया। लौटते ही शादी करने का वायदा किया है दिलीप के जाने के बाद तीन-चार पत्र आये, इसके बाद रंजना प्रतीक्षा ही करती रही। एक दिन वह

---

1- मन्नू भण्डारी, 'मैं हार गयी' कथा संग्रह की 'अभिनेता', पृ0 84

दिलीप के बंगले पर पहुँचती है, वहाँ कोई खबर न पाकर घबरा जाती है। तार देने के लिये कागज के लिये दराज खोलती है तो देखती है, कई पत्र जो कि देहरादून से किसी रेखा द्वारा लिखे गये हैं, सबमें एक ही बात पूछी गयी है कि शादी कब कर रहे हो ? और दूसरे पत्र पिताजी के जिसमें उसकी पत्नी व बच्चों के समाचार थे।

यह सब देखकर, पढ़कर रंजना को लगा कि मैं तो केवल रंगमंच पर अभिनय करती हूँ। परन्तु जो दिलीप अभिनय से इतनी नफरत करता था, उसका तो सारा जीवन ही अभिनय है।

स्त्री और पैसा, दोनों ही दृष्टियों से दिलीप भ्रष्ट था।

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी में पुरुष द्वारा संवेदनशील नारी के साथ छल, कपट को चित्रित किया है, जिसमें कि पुरुष अपने स्वार्थ के लिये दूसरों के दिल को खिलौने की तरह प्रयोग करता है।

## श्मशान

मन्नू जी ने श्मशान कहानी में जीने की आकांक्षा को प्रेम-भावना से अधिक महत्वपूर्ण बताया है। श्मशान कहानी में एक युवक तीन बार अपनी पत्नियों को लेकर श्मशान आया, हर बार उसका विलाप एक ही था कि वह इस पत्नी के बिना जीवित नहीं रह सकता, परन्तु तीसरी बार वह विलाप करते हुये कह रहा था कि -" तीसरी पत्नी से ही उसका प्रेम सच्चा था, पहली दो स्त्रियों का प्रेम बचपना था, ना-समझी थी। पहली पत्नी उसकी अनुगामिनी, दूसरी सहगामिनी और तीसरी उसकी प्रिया, मित्र, पथ-प्रदर्शिका

थी, जिसके बिना मैं एक पल भी आगे नहीं बढ़ सकता ।"[1]

मनुष्य के इस अलौकिक प्रेम को देखकर श्मशान का हृदय पत्थर हो गया, पहाड़ी को उसे समझाते हुये कहा कि इन्सान को अपना जीवन अधिक प्रिय है । नारी तो उसके जीवन की पूर्णता का एक साधन मात्र है । वरना पुरुष पुरुष ही है । उसमें प्रेम, वास्तविक प्यार कहां ।

'श्मशान' कहानी में स्त्री-पुरुष ( पति-पत्नि ) के बीच आकर्षण व प्यार की गहराई का व्यंग्यात्मक वर्णन है ।

मन्नू जी ने श्मशान कहानी में श्मशान व पहाड़ी के माध्यम से मानवीय संवेदनाओं का यथार्थ चित्रण किया है कि श्मशान में शव लाया जाता है । उस पर रिश्तेदार विलाप करते हैं कि विलाप वर्तमान में सच व भविष्य में झूठ होता है । श्मशान सोचता है कि मनुष्य की सबसे बड़ी निधि प्रेम है, परन्तु यथार्थ में अनुभव करता है कि यह गलत है । वास्तविकता में तो जीने की आकांक्षा प्रेम भावना से प्रबल है ।

## दीवार, बच्चे और बरसात

मन्नू जी ने 'दीवार, बच्चे और बरसात ' कहानी में सामाजिक मूल्यों व रूढ़ियों में बंधी नारियों की भावना एक शिक्षित नारी के विषय में क्या रहती है ? इसको स्पष्ट किया है ।

शैल और शन्नो दो शिक्षित लड़कियां हैं । शैल के घर में दिनभर मोहल्ले की औरतें गपशप करती हैं । एक शिक्षित दम्पित्ति उसी मोहल्ले में

---

1- मन्नू भण्डारी, ' मैं हार गयी ' कथा संग्रह की ' श्मशान,' पृ0 91

आकर रहने लगता है। पत्नी लेखिका होने के कारण मीटिंग में चली जाती है। मीटिंग में देर हो जाने से दोनों में झगड़ा हो जाता है और पति उसे घर से निकलने के लिये कहता है।

स्त्री जब सम्पूर्ण दायित्वों को निभाने के बाद भी पति का विरोध व अपमान पाती है तो वह घर छोड़ने पर मजबूर हो जाती है। इस घटना को लेकर भग्गो भाभी जो मौहल्ले भर का समाचार पत्र है। सभी को नमक-मिर्च लगा-लगाकर शिक्षा व स्वतंत्रता की उपेक्षा कर रही है।

नारी को केवल पुरुष से ही नहीं बल्कि नारी से भी टक्कर लेनी होती है। आज की नारी ही नारी की शत्रु बन गयी है। सामाजिक मूल्यों से बंधी नारियां अपने को पुरुष की सम्पत्ति मानती हैं। "अरे तुम अपने घर में मरदों को ही संजोया सुख नहीं दे सको तो तुम्हें क्या पूजने को ब्याहा है।"[1]

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी में बच्चों द्वारा दीवार को तोड़कर अर्थात् बच्चे नयी मान्यताओं का प्रतीक है व पुरानी परम्पराओं को तोड़कर नयी पौध के माध्यम से व्यक्ति में नयी भावनाओं को उत्पन्न करने का प्रतीक माना है।

अपने अस्तित्व व स्वतंत्रता की रक्षा के लिये आवश्यक है कि हमें समाज से संघर्ष करना होगा, शन्नो सोच रही है कि "मैं तो उस नन्हीं सी पौध को देख रही थी, जिसने इतनी बड़ी दीवार को धड़ाधड़ गिराकर घर में कोहराम मचा दिया था।"[2]

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ० 96

2- वही, पृ० 102

पं० गजाधर शास्त्री

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी में शास्त्री जी के अहं को प्रस्तुत किया है। एक साहित्यकार जिसके तीन कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके है, शास्त्री जी से समुद्र के किनारे मुलाकात होती है। पंडित जी ने स्वयं अपना परिचय बड़े ही नाटकीय तरीके से देते हुये अपने को हिन्दी साहित्य का बड़ा ही ज्ञाता व लेखक बताते हैं।

उनकी आज से सात साल पहले एक पत्रिका में एक कहानी छपी थी। 'अमीरी-गरीबी' नाम की एक कहानी प्रकाशित हुयी थी। उस कहानी पर प्रशंसा व आलोचना के पत्रों का आना स्वाभाविक है।

शास्त्री जी ने लेखक को पत्रिका दिखाई व साथ ही आलोचना लिखने को कहा, परन्तु लेखक को इतना साहस नहीं कि वह शास्त्री जी की आलोचना कर सके। अत: झूठी प्रशंसा करते हुए किताब वापस कर दी।

दूसरे दिन बातों में लेखक द्वारा जब उन्हें यह ज्ञान हुआ कि लेखक की कहानी के तीन संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं तो कहने लगे - 'तुम यहां घूमने आये हो ?' या कहानी का मसाला ढूंढने ?'

'' मेरा तो बस समझिये जीवन ही कहानी के लिये है। कहानी ही जीवन के लिये है, जीवन ही कहानी है, कहानी ही जीवन है। ''[1]

एक दिन सबेरे समुद्र के किनारे खड़े किसी युवती को स्नान करते हुये देख रहे शास्त्री जी लेखक से बोले आपके मन में कुछ विचार आये ? नहीं ना। देखिये हर जगह मैं कहानी का प्लाट तैयार कर सकता हूं और उन्होंने एक

---

1- मन्नू भंडारी, 'मैं हार गयी' कहानी संग्रह की 'पं०गजाधर शास्त्री,' पृ० 108

लम्बी सी कहानी का प्लाट सुना दिया । दूसरे दिन शास्त्री जी विक्टर ह्यूगो का 'ला मिजरबे' का चोरी वाला हिस्सा लिख लाये और लेखक इस पर कुछ कहे, स्वयं बोले - मेरी कहानी ह्यूगो जैसी है ।

लेखक ने देखा कहानी में नारी के प्रति सहानुभूति बताने वाले शास्त्री जी रात के अंधेरे में निर्दोष होटल के नौकर को पीट रहे थे । अनजाने में ही यह आत्मप्रशंसा में लिप्त शास्त्री जी लेखक की कहानी के मुख्य पात्र बन बैठे ।

मन्नू जी ने पं०गजाधर शास्त्री के माध्यम से उन सभी लोगों पर व्यंग्य किया है जो कि मैं और मैं की प्रशंसा से समाज में हास्य के पात्र बन जाते हैं ।

## कील और कसक

प्रस्तुत कहानी में मन्नू जी ने ऐसी नारी को चित्रित किया है जो कि पति की उपेक्षा के कारण पराये पुरुष के प्रति आकर्षित होती है, परन्तु उससे भी उपेक्षा ही पाने पर आक्रोश से भर उठती है ।

रानी का जो कि इस कहानी की मुख्य पात्र है । उसका विवाह कैलाश जो कि एक प्रेस में काम करता है, उससे हुआ, रानी को बड़े सपने थे नयी ससुराल के, परन्तु नीरस भावनाहीन कैलाश को पा उसकी सारी अपेक्षा जाती रही । कैलाश तो एक मशीन की तरह रात- दिन बस प्रेस में ही जुटा रहता । उस पर बारह हजार के कर्ज का भूत कोड़े लगा-लगाकर काम करवाता ।

इसी मकान में एक किरायेदार शेखर जो कि कैलाश के ही यहाँ खाना खाता है, रहता है । दिखने में काफी स्वस्थ व सुन्दर है, वह रानी को भाभी मानता है । रानी उसकी इस सहानुभूति से उसकी ओर आकर्षित होने लगती है ।

एक दिन शेखर की बड़ी बहन आकर शेखर का विवाह एक देहाती सुन्दर कन्या से करा देती है। इस उपेक्षा के कारण रानी शेखर की पत्नी से रात-दिन लड़ने लगती है। उसकी आँखों में शेखर की पत्नी काँटा लगती है। वह हर समय भूखी शेरनी की तरह उसके पीछे पड़ी रहती है। एक दिन शेखर से भी उसका झगड़ा हो गया। कैलाश ने इस बात पर रानी को मारा भी, उसी दिन परेशान होकर कैलाश ने नया मकान ढूँढ लिया। रानी का अतृप्त इच्छाओं की वेदनामयी कसक के कारण जाते समय वह शेखर की पत्नी को लक्ष्य करके कहने लगी - "अब खूब फैल-फैलकर रहना, सारे दिन नहान घर में घुसी रहना, सारी छत पर कोयले फैला-फैलाकर रखना, तुम्हें कोई कुछ कहने नहीं आयेगा।"[1]

मन्नू जी ने इस कहानी में रानी के माध्यम से एक ऐसी नारी को चित्रित किया है जिसकी अतृप्त इच्छाओं की कील की कसक इतनी गहरी थी कि वहाँ से जाने के बाद भी उसे उससे मुक्ति नहीं मिली।

## दो कलाकार

दो कलाकार कहानी में मन्नू जी ने एक में प्रदर्शन के बल पर प्रशंसा पाना तथा दूसरे को यथार्थ के धरातल पर कर्म करने की कला को प्रस्तुत किया है।

चित्रा और अरुणा, दोनों ही घनिष्ट मित्र हैं, चूँकि दोनों के विचारों में भिन्नता है। एक समाजसेवी है तो दूसरी चित्रकार। पर इतनी मित्रता से कालेज की अन्य लड़कियाँ भी जलती हैं।

---

1- मन्नू भंडारी, 'मैं हार गयी' कथा संग्रह की 'कील और कसक,' पृ० 130

अरुणा, जमादार, दाइयों और चपरासियों के बच्चों को पढ़ाती है। गरीबों के दु:खों से अरुणा दु:खी होती है जबकि चित्रा आज की दुनिया के उलझेपन को चित्रों द्वारा प्रदर्शित करती है।

परीक्षा के समय जबकि भीषण बाढ़ आयी थी जहाँ अरुणा सेवा द्वारा उनके दु:ख को कम व दूर करने का प्रयास करल रही थी वहीं चित्रा अपने ब्रुश से उनको चित्रित कर रही थी।

चित्रा को विदेश जाना था, जब गुरु से मिलने गयी तो रास्ते में बैठने वाली भिखारिन मर गयी थी, उसके बच्चे रो रहे थे, चित्रा ने ब्रुश से रफ स्केच खींचा, जिसके माध्यम से उसने काफी प्रसिद्धि पायी, उधर अरुणा, अपने कर्म के लिये वहाँ से खिसक गयी।

तीन साल बाद दिल्ली में जब चित्रा के चित्रों की प्रदर्शनी लगी तो उसकी मुलाकात अरुणा से हुयी। अरुणा के साथ दो छोटे-छोटे प्यारे बच्चे थे, दस साल का लड़का और आठ साल की लड़की, अरुणा से पूछने पर कि यह किसके बच्चे हैं,? उसने कहा यह मेरे अपने हैं। बच्चे चित्रा के साथ प्रदर्शनी देखते-देखते अनाथ चित्र के पास पहुँचे। बच्चों के यह पूछने पर कि इनकी माँ के मरने के बाद इनका क्या हुआ, अरुणा के पति आकर बच्चों को अपने साथ ले गये। चित्रा को अरुणा ने बता दिया कि यही वह बच्चे हैं जो इस चित्र में हैं।

मन्नू भंडारी ने प्रस्तुत कहानी में जहाँ एक को चित्रलोक में विहार कराया है, वहीं अरुणा यथार्थ में जीती है, उसे कर्म के द्वारा ही आत्मिक संतुष्टि मिलती है। लेखिका का भी उद्देश्य यही है कि व्यक्ति को मानसिक व आत्मिक संतुष्टि प्रशंसा की अपेक्षा कर्म से अधिक प्राप्त होती है।

## मैं हार गयी

मन्नू जी ने 'मैं हार गयी' कहानी के माध्यम से वर्तमान राजनीतिज्ञों पर करारा व्यंग्य किया है। साथ ही वर्तमान युग में आदर्श नेता की कल्पना करना भी निरर्थक है।

'मैं हार गयी' कहानी में एक कवि सम्मेलन में एक कवि 'बेटे का भविष्य' नामक कविता पढ़ते हैं, जिसमें बेटा अभिनेत्री का फोटो चूमता है, शराब पीता है, और थोड़ी देर बाद अत्यन्त गंभीरता से 'गीता' लिये बाहर निकलता है। बेटे के इस व्यवहार को देखकर बाप कहता है - 'यह साला तो आजकल का नेता बनेगा।'

कहानी में 'मैं' एक नेता की लड़की है जो कि इस अपमान का बदला लेने के लिये एक योजना (कहानी) बनाती है, जिसमें कि नेता को सर्वगुण-सम्पन्न होना है। अत: उसने अपने नेता का जन्म गाँव के एक किसान के घर में चित्रित किया, जिसमें स्कूली जीवन में पहुँचते ही नेता की मृत्यु हो जाती है। अंधी माँ और बीमार बहन की जिम्मेदारियाँ और परिस्थितियाँ उसे चोरी करने पर मजबूर कर देती है। अपनी कहानी में चोरी-चपाटी का चित्र प्रस्तुत होते देख लेखिका ने उसके पृष्ठ फाड़ डाले, क्योंकि उसका पात्र अपराधी प्रवृत्ति का होता दिख रहा था।

लेखिका ने सोचा शायद यह पात्र गरीबी के कारण अपराध वृत्ति का हो गया, अत: उसने दूसरी बार अपनी कलम द्वारा नेता का जन्म सम्पन्न-परिवार में कर दिया। शुरु में तो वह आदर्शवादी रहा परन्तु कालेज तक आते-आते वह भी अनैतिकता की ओर अग्रसर होने लगा। लेखिका जो एक आदर्श नेता बनाना चाहती थी, वह तो न कभी बन सकता था, न बन सकता है। लेखिका का अहं चूर हो गया। लेखिका हार गयी। "अपने सारे अहं को

तिलांजलि देकर बहुत ईमानदारी से मैं कहती हूँ कि मेरा रोम-रोम महसूस कर रहा था कि कवि भरी सभा में शान से जो नहला फटकार गया था, उस पर इक्का तो क्या, दुग्गी भी न मार सकी, मैं हार गयी।"[1]

(2) श्रेष्ठ कहानियाँ :

मन्नू भण्डारी नारी-अस्तित्व के पारिवारिक और सामाजिक पक्ष के प्रति सजग हैं। नागरिक सभ्यता की मशीनी जिन्दगी में 'क्षय' होती युवती खुला आकाश खोजने वह भागे भले ही प्रकृति की गोद में, परन्तु शीघ्र ही यह भी महसूस करती है कि जिसे उसने उलझनों, घुटन से दूर खुला विस्तार समझा था, वह वास्तव में ऊँघे पानी की मच्छर पोषित काहिया सत है ........ आकाश वहीं खोजना होगा जहाँ प्रवाह है, भँवर है तो क्या हुआ ? रूढ़ि विद्रोही कथानकों, भाव धरातलों का चयन, स्वानुभूति की प्रामाणिक सहजता मन्नू की शक्ति भी है, और सीमा भी[2] इन श्रेष्ठ कहानियों के क्रम में 'मेरा हमदम - मेरा दोस्त,' रानी माँ का चबूतरा,' 'चश्में,'' अकेली,' 'मैं हार गयी,' 'क्षय,'' एखाने आकाश नाई ...', 'यही सच है, ''सजा,' को सम्मिलित किया गया है। 'मैं हार गई' कहानी 'मैं हार गयी' कहानी संग्रह में भी है।

मेरा हमदम - मेरा दोस्त

'मेरा हमदम मेरा दोस्त' की कथा मन्नू जी एवं यादव जी की कथा ही है। जीवन की सच्चाई को एक स्थान दिया जाना चाहिये, यह बात

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी,' मैं हार गयी' कथा संग्रह की' मैं हार गयी,' पृ0 15

2- मन्नू भण्डारी, 'श्रेष्ठ कहानियाँ,' प्रमुख स्वर, पृ0 6

मन्नू जी ने इस कहानी में स्पष्ट की है। मानव-जीवन की व्यथा कथा स्त्री-पुरुषों के आपसी सम्बन्धों पर अधिक निर्भर है।

" मन्नू के बारे में मैं चाहे जो कुछ भी सोचूं, लेकिन वह मेरे बारे में क्या सोचती है, यह मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूं। उससे संसार के सबसे अधम व्यक्ति का नाम पूछा जाय तो निःसंकोच कहेगी। " राजेन्द्र यादव। " उसी सांस में उससे संसार के सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति का नाम पूछा जाय तो बेलाग कहेगी - राजेन्द्र यादव। हां, हो सकता है उसे इस समय मुझे सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति मानने में संकोच हो, क्योंकि यह सब मैं गुण्डों की राष्ट्रीय पोशाक यानी लुंगी-बनियान पहनकर लिख रहा हूं और जो भी यह कपड़े पहनता है, उसका कोई गुण मन्नू को स्वीकार्य नहीं है। पता नहीं किसने कहा था - पति के रूप में सर्वगुण सम्पन्न मर्यादा पुरुषोत्तम राम की कल्पना करते हुये हर स्त्री कहीं मन में यह विश्वास भी पाले रहती है कि उसे वह अपने मन मुताबिक ढाल लेगी और इस ' ढलाई ' की प्रक्रिया में जो लेख लिया जा रहा है, उसकी आप अंतिम पंक्ति पढ़कर समाप्त कर रहे हैं।[1]

यादव जी ने इस कथा में अपने यथार्थबोध को जो स्थान दिया है, उसमें जीवन की हर स्थिति बिल्कुल साफ है। जीवन की समस्यायें कुछ भी हों, इन समस्याओं को स्त्री पुरुष दोनों की होने के कारण भी दोनों के पास रुझान भी है। यादव जी ने यह बात जीवन के सत्य से जोड़ी है, जो मन्नू जी की ही बात है।

## रानी मां का चबूतरा

गुलाबी स्वयं जीता-जागता ममत्व है। " रानी मां का चबूतरा " उस गुलाबी की कहानी है, जिसे कभी रानी मां के चबूतरे पर जाने की आवश्यकता नहीं थी। गुलाबी ने बच्चों के हित में उससे अधिक काम किया

---

1- मन्नू भण्डारी ' श्रेष्ठ कहानियां ' कहानी संग्रह की ' मेरे हमदम-मेरे दोस्त ' पृ0 26

और तीन दिन भूखी रही । गुलाबी, बच्चों की माँ भी थी, बाप भी थी । अर्थोपार्जन करना उसे संभालना भी, लोकनिंदा की गुलाबी ने कभी चिन्ता नहीं की । गुलाबी का अपना जीवन एक पहिये की तरह है, जिसे उसे हाँक रहा है, उसका अपना ही जीवन । इस यथार्थ को मन्नू जी ने गुलाबी के इस कथा से सार्थक कर दिखाया । "हंस-बोलकर मुझे किसी को रिझाना नहीं है । बड़े आये हैं सीख देने वाले । तुम्हें तो नहीं कोस रही कोस रही हूं उस दारुखोर को जो मेरी जान को ये कीड़े-मकोड़े छोड़ गया ।"[1]

इसके बाद भी उसका जीवन स्वाभिमान, हिम्मत के साथ परिस्थिति का मुकाबला कर रहा है । गांव के लोग गुलाबी पर ताने मारते हैं, कुछ दया भी दिखाते हैं । गुलाबी को न लोक निन्दा की परवाह है, और न ही उनकी दया की कायल है । वह जानती है कि लोग कोरी सहानुभूति जताते हैं । शराबी पति को झाड़ू मारकर घर से निकाल दिया है, तभी से मजदूरी करती है । नगर सेठ की पत्नी ने अपने बेटे को शीतला माई के कोप से दूर रखने के लिये साधू के कहने पर अन्न जल का त्याग किया । बच्चा जब अच्छा हो गया, तब सेठ जी ने चबूतरा बना दिया, पर वह कभी उस चबूतरे पर नहीं गयी, जबकि हर पूर्णमासी को औरतें वहाँ दीप जलाने जाती रहीं तथा मनौती मनाती हैं । गुलाबी का चरित्र एक स्वाभिमानी की तरह अपने आपमें उज्जवलता का प्रतीक है ।

## चश्में

मन्नू जी ने 'चश्में' के माध्यम से आज के पुरनषा वर्ग की स्वकेन्द्रित जीवन-दृष्टि का भण्डाफोड़ एक नये आयाम के रूप में किया है । क्योंकि

---

1- मन्नू भण्डारी, 'श्रेष्ठ कहानियाँ,' कहानी संग्रह की 'रानी माँ का चबूतरा,' पृ0 31

प्रत्येक मनुष्य का अपना अतीत होता है। अतीत की घटनायें क्रमश: घटित होती हैं, ये घटनायें दु:ख-सुख के आधीन है, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। अतीत को दो हारों की जरूरत नहीं है, फिर भी तो लोग अतीत की तरफ भागते हैं। "आते समय उसके कदम शिथिल और भारी हो रहे थे, लौटते समय उतनी ही स्फूर्ति के साथ वह चला जा रहा है। वह उस समय कमरे से काफी दूर आ गया है, फिर भी लगता है जैसे खिड़की में से झांकते दो आँसू भरे व्यक्ति नयन उसकी पीठ में चुभे जा रहे हैं। वह सीधा रास्ता छोड़कर अकारण ही मुड़ जाता है।"[1]

अति व्यस्तता का प्रदर्शन करने वाले मिस्टर वर्मा और सीधा-सादा जीवन बिताने वाली साहित्य प्रेमी भावुक वृद्ध या मिसेज वर्मा की कथा चश्में में पत्नी अपने लिये पति से बौद्धिक साहचर्य मांगती है। मिसेज वर्मा पति वर्मा का मोटा चश्मा उतार देती है, जिसके बगैर वे फाइलें नहीं देख सकते और वे अपनी लिखी गयी कहानी सुनाने लगती है। कहानी का आधार समाचार पत्र में छपी हुयी खबर है, किसी लड़की ने फांसी की सजा प्राप्त कैदी से शादी कर ली है। मिसेज वर्मा की कहानी मि0वर्मा के अतीत की कहानी का ही हिस्सा है।

मि0वर्मा तब निर्मल वर्मा थे, और उनकी प्रेयसी शैल थी। निर्मला वर्मा को चिकनपाक्स निकली, यह छूत की बीमारी होने के बावजूद शैल निर्मल के बिस्तर पर आकर रोज घंटों बातें करती। निर्मल को विश्वास था कि वह शैल के बिना नहीं रह सकेगा। शैल को टी0बी0 हो गयी। शैल ने निर्मल को बताया कि उसकी मम्मी की मृत्यु टी0बी0 से हुयी थी। निर्मल की शादी 23 मई को होने वाली थी, डाक्टर का मत कि शैल का विवाह हो गयी तो

---

1- मन्नू भण्डारी, 'श्रेष्ठ कहानियाँ,' कहानी संग्रह 'चश्में,' पृ0 51

अच्छी हो सकती है । निर्मल शैल से मिलने कमरे में जाने लगा कि उसे मना कर दिया । निर्मल ट्रेनिंग में पिता के कहने से चला गया । 23 मई को शैल की अचानक मृत्यु हो गयी ।

अचानक याद आयी शैल की याद ने उन्हें बेबस कर दिया और पत्नी से कहा मेरा चश्मा दो ।

अकेली

मन्नू जी ने 'अकेली' कथा में नारी जीवन के उस यथार्थ को प्रस्तुत किया है, जब नारी को अकेला रहना पड़ता है । तब नारी अब गुजारा जैसे-तैसे करती है । आने-जाने का भाव भी कम हो जाता है । पर जाने की इच्छा मरती नहीं । पर बिना बुलाये जाने का प्रश्न भी है ।

बुढ़िया सोमा बुआ पिछले बीस वर्षों से अकेली रहती है । उनका इकलौता जवान बेटा असमय ही चल बसा है । इसके कारण पति तीर्थयात्रा पर निकल पड़े और सन्यासी बन गये । एक कोठारी का किराया आता है, उसी से जैसे-तैसे वह अपना गुजारा कर लेती है । सोमा बुआ के सन्यासी पति वर्ष में एक महीना घर आते हैं । अब उनको वह सुहाता नहीं । पति का स्नेहहीन व्यवहार और बुआ के प्रतिदिन के कार्य व्यवहारों पर पति द्वारा किया जाने वाला अंकुश उन्हें कष्ट देता है । बुआ पड़ौस के भरोसे अपने जीवन का निर्वाह करती है, दूसरे के सुख-दु:ख के साथ अन्य कार्यों में हाथ बढ़ाती हैं । जब पति घर पर होते हैं तब बुआ का अन्य घरों में आना-जाना बन्द रहता है । राधा को पति के नाराज होने की बात भी बताती है । वह कहती हैं, 'एक महीने के लिए सुन लिया करो और क्या ?' सोमा बुआ कहती है, पति हरिद्वार रहते हैं, घर यदि उसके काम है, तो बुलावे के लिये, बैठी रहूं, हरखू और किशोरी में अन्तर नहीं समझती । हरखू के मर जाने से मेरा जीवन और अकेला है ।

सोमा बुआ के दूर के रिश्ते में शादी है। वे पैसे वाले हैं। विधवा नन्द ने कहा - है, बुआ का नाम है, मैंने लिस्ट में नाम देखा है। बुआ प्रसन्नता से शादी में सामान देने के लिये जुट गयी। अंगूठी बेचकर सामान मंगा लिया, चाँदी की सिन्दूरदानी, एक साड़ी, ब्लाऊज, राधा से मंगवाया। बुआ ने लाल-हरी हाथ में चूड़ी पहन ली। निमंत्रण की प्रतीक्षा में सात बज गये। बुआ को विश्वास नहीं होता कि सात कैसे बज गये, मुहरत तो पाँच बजे का था। खाने के विषय में केवल राधा से इतना कहती, दो जनों का तो खाना है, क्या खाना क्या पकाना।

फिर उन्होंने धूली साड़ी को उतारा। नीचे जाकर अच्छी तरह उसकी तह की, धीरे-धीरे हाथों की चूड़ियाँ खोलीं, थाली में सजाया हुआ सारा सामान उठाया, और सारी चीजें बड़े जतन से एकमात्र सन्दूक में रख दीं।

क्षय

परिस्थितियों से विवश कुंती की इच्छा एवं आदर्शों के क्षय की कथा है। कुंती पर परिवार का आर्थिक बोझा है। पिता टी०वी० से रोगग्रस्त है, आठवीं में पढ़ने वाला छोटा भाई टुन्नी है। घर संभालने को रमा बुआ है। कुंती स्कूल में मेहनत से पढ़ाती है, छात्रों में इसीलिये प्रिय है। मंद बुद्धि सावित्री धनवान बाप की पुत्री है। सावित्री की माँ के आग्रह तथा धन के लिये सावित्री की ट्यूशन करती है। सावित्री की माँ समाज के उस वर्ग की है जो पैसे से ही सबको सब कुछ समझाती है।

घर, स्कूल, ट्यूशन से कुंती थक जाती है, उसके नीरस जीवन में वायलिन बजाने का उसे शौक है, जो उसे शांति देता है। टुन्नी आठवीं में फैल होता है, पिताजी कहते - यदि कुंती प्रधानाध्यापक के पास जाती, तो साल बेकार

नहीं जाता । समय ने पिताजी के सिद्धान्त बदल दिये । इसी प्रकार सावित्री की माँ का दबाव कि सावित्री के लिये अध्यापिकाओं से मिल ले । कुंती परिस्थितियों के आर्थिक दबावों के सामने विवश हो गयी । सावित्री के लिये वह स्कूल गयी, संबंधित अध्यापिकाओं से मिली । मिलकर जब बाहर निकली तो उसे खांसी आने लगी । उसे लगा कि यह खांसी का रोग उसे पिता से मिला है और वह अपने आपसे अजनबी हो उठी । "एकाएक कुन्ती को लगा कि उसकी यह खांसी, यह खोखली-खोखली आवाज, पापा की खांसी से कितनी मिलती-जुलती है .... हूबहू वैसी ही तो है । ..... सहमकर उसने गाड़ी के शीशे में देखा, कहीं उसके चेहरे पर भी तो वैसा कुछ नहीं जो उसके पापा के चेहरे पर .... ।"[1]

## एखाने आकाश नाई

शहरी और ग्रामीण परिवेश में नारी की विभिन्न समस्याओं को अलग-अलग ढंग से प्रस्तुत करने में मन्नू जी की अपनी विशेषता है । वे यह भली भाँति जानती है कि शहरी एवं ग्रामीण जीवन में रह रही नारी सन्तुष्ट नहीं है । उसकी असंतुष्टता का अहसास उस पर पड़ रही जिम्मेदारी है, जो उसे असन्तुष्ट बनाये है । जो नारी सुशिक्षित है, स्वावलम्बी है, विवाहित है, जीवन से पूर्ण सन्तुष्ट है, किन्तु तिहरी जिम्मेदारियों ने उसका रस निचोड़ लिया है, वह हड्डियों का ढांचा मात्र रह गयी है ।

लेखा, शिप्रा, सुषमा, प्रीति की समस्यायें एक ही तरह की हैं, उनमें थोड़-थोड़ा अन्तर है । शिप्रा पति हेमेन्द्र से अलग होकर स्कूल चलाती

---

1- मन्नू भण्डारी, 'श्रेष्ठ कहानी संग्रह' की कहानी 'क्षय', पृ0 86

है । सुषमा के लिये अर्थार्जन शाप साबित हुआ । माता-पिता उसका विवाह करना ही चाहते थे । सुषमा ने महिम के साथ कोर्ट मैरेज कर ली । प्रीति संयुक्त परिवार को निभाते हुये, नौकरी नहीं कर पाती, जिससे पति नाराज है । लेखा दिनेश के साथ शहर रहते हुये, गाँव में आकर आराम से शोध प्रबन्ध के टंकन पन्नों को ठीक करना चाहती है ।

लेखा के देवर सुरेश गौरा, नन्द गौरा गाँव के वातावरण से भागना चाहते हैं । सुरेश गौरा मुक्ति की तलाश में है । हर व्यक्ति की अपनी समस्या है, वह उससे मुक्ति चाहता है । लेखिका ने इस वातावरण को नया आयाम दिया है ।

## यही सच है

' यही सच है ' कथा, मन्नू भण्डारी की डायरी शैली में लिखी बहु-चर्चित कथा है । मन्नू जी ने नारी को नये रूप में प्रस्तुत किया है । प्रेम के अन्तर्द्वन्द्व में जो नयापन है, वह यथार्थ के रूप में है । दीपा जो नारी है, उसके जीवन का सच्चापन, वास्तविकता के आधार पर है ।

मन्नू जी ने नारी-मन में पुरुष के प्रति जो भाव उत्पन्न होते हैं, उन्हें डायरी शैली में व्यक्त किया है । आज का एक प्रतिशत पुरुष नहीं बदला, सामंती पुरुष एवं आधुनिक नारी के मध्य तनाव है । अनेक नारियों के प्रति एक ही समय आकर्षित होने का एकाधिकार पुरुष वर्ग का है और नारी को एक समय एक की पुरुष को चाहना चाहिये, यह दोहरे मापदण्ड भले ही प्रकट रूप से हों, किन्तु पुरुष मन और नारी-मन दोनों में मन तो एक ही है ।

मन स्वतंत्र ही नहीं स्वच्छंद भी है। परिस्थितिवश और परम्परा की मानसिकता के कारण नारी बंधन को स्वीकार करती है। आधुनिक नारी का सोच भी यही है, जो 'यही सच है' के रूप में दीपा के माध्यम से दिखाई देता है।

दीपा कालेज में पढ़ी, सहपाठी निशीथ के साथ घूमती है। दोनों एक-दूसरे के नजदीक आ गये। दीपा के पिता की मृत्यु के बाद निशीथ से अनबन हो गयी। पटना से दीपा कानपुर शोध कार्य हेतु आ गयी। दीपा की कानपुर में हंसमुख वेपरवाह संजय से मुलाकात होती है। दीपा को मुलाकात का समय देकर वह देर से आता, उसकी पसंद के ढेर सारे रजनीगंधा के फूल लाता है और चुम्बन, आलिंगन से उसे शिकायत का मौका ही नहीं देता। दीपा सोचती है, उसे संजय से प्रेम है।

दीपा साक्षात्कार हेतु कलकत्ता जाती है। जहाँ निशीथ से भेंट होती है। वह दीपा की मदद करता है। दीपा जब जाती है तब निशीथ दीपा के हाथ पर हाथ रखकर जरा-सा दबाकर छोड़ देता है। दीपा को लगता है, यह स्पर्श, यह सुख यह क्षण ही सत्य है।

दीपा को निशीथ का पत्र मिलता है, जिसमें वह नियुक्ति के लिये हार्दिक बधाई देता है। दीपा किसको चाहती है? वह स्वयं नहीं जानती। वह एक साथ दोनों को चाहती है। एक मन को शांति देता है, तो दूसरा शरीर को। वास्तव में दीपा इन दोनों को नहीं चाहती। ऐसा नारी मन का अन्तर्द्वन्द्व ही है।

मन्नू जी ने नारी में भी आधुनिक नारी के मन की व्यथा-कथा को एक नया आयाम दिया।

## सजा

'सजा' की कथा न्याय प्रक्रिया पर एक तीखा मार्मिक व्यंग्य है। आर्थिक ढाँचे के कारण परिवार में जो बिखराव है, उसके लिये व्यक्ति क्या नहीं करता, और गबन जैसी प्रक्रिया के अभिशाप भी हैं। महाभारत या रामायण की कथा का उदाहरण भले ही सन्दर्भ में दिया जावे, पर एक कारण नहीं हो सकता। इस कारण एक व्यक्ति से सम्पूर्ण परिवार को बिना किसी अपराध के व्यथित होना पड़ता है, परिस्थितिवश एक सुखी परिवार टूटकर बिखर जाता है। इस व्यथा को सजा के रूप में मन्नू भण्डारी ने प्रस्तुत किया है।

कथा के मूल पात्र आशा के पिता हैं, जिन पर आफिस के बीस हजार रुपये गबन करने का आरोप है। न्यायालय में केश चल रहा है। फैसले में कई वर्ष हो गये। भ्रष्टाचार का आरोप झूठा साबित हुआ, किन्तु तब तक सारा परिवार आर्थिक अभाव के कारण टूट-सा गया। न्यायालय की सजा से बढ़कर यह सजा थी। आशा के पिता पर न्यायालय में जब मुकद्दमा चला, तब उसके दादा ने 25) रुपये का हिसाब का कार्य करने लगे। आशा ने स्कूल की बस छोड़कर स्कूल पैदा जाने लगी, छोटा भाई मन्नू गाँव में ही पढ़ने लगा। माँ बीमार रहने लगी, और उसे राज-यक्ष्मा के रोग ने घेर लिया। पिताजी घर पर रहते, इलाज का कोई साधन नहीं।

आशा दसवीं में पास हो गयी। दादाजी का काम छूट गया। मन्नू को इलाहाबाद उमेश चाचा के पास भेजा गया। लीला चाची कठोर थीं, इसीलिये माँ ने आशा को भी चाची के पास ही भेज दिया। आशा की पढ़ाई छूट गयी। वह दिनभर घर में काम करती और चाचीको खुश

रखने का प्रयत्न करती । मन्नू भी पढ़ाई में अव्वल नहीं रहा । उसे पढ़ाई का समय ही नहीं मिलता, उसे विट्टू को हरदम संभालना पड़ता । आशा ने मामा से जाना कि माँ इलाज के लिये कलकत्ता में है और पिताजी ने मजदूर बस्ती में किराये का घर लिया है । फैसले में आशा के पिता जी को निर्दोष करार दिया गया । आशा खुश हुयी । दादा-दादी रो पड़े । भ्रष्ट व्यवस्था से जो बिखराव आ गया था । उससे पिताजी दुखी थे । यथार्थ तो यह है कि समाज आरोपित व्यक्ति को गिरी हुयी नजर से देखता है भले ही आरोपित आधार निराधार ही क्यों न हो ।

"पप्पा आप बरी हो गये । सुनते हैं, आपको सजा नहीं हुयी ....... सजा नहीं हुयी है आपको ।" पर पापा वैसे ही रहे, मानों उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा हो कि उन्हें सजा नहीं हुयी है ।[1]

मन्नू जी ने कथा के अन्त में यथार्थ की स्थिति स्पष्ट की है । सजा के पहले जो सजा परिवार बिखराव की मिली है, उसका क्या होगा ?

(3) त्रिशंकु :

मन्नू जी ने त्रिशंकु के प्रारम्भ में कवि अजित कुमार जी से जो बातचीत की है, उसमें उन्होंने स्पष्ट किया कि "यह महज संयोग की बात है कि मैंने जब लिखना शुरु किया तो 'नई कहानी' के सूत्रधार अपने पूरे चढ़ाव पर थे । उन सभी से मेरा बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध संपर्क था, सो मेरा नाम भी जुड़ गया । इसे मेरी मासूमियत मत समझिये, सच्चाई है कि मुझे तो आन्दोलन का 'क ख ग' भी नहीं आता था उस समय ।"[2]

---

1- मन्नू भण्डारी, 'श्रेष्ठ कहानियाँ,' कथा संग्रह की 'सजा', पृ0 152

2- मन्नू जीससे बातचीत कवि अनिल कुमार की ( त्रिशंकु), पृ017

यदि मन्नू जी की बात इतनी सत्य है तो उन्होंने भोगे हुये, देखे हुये अथार्थ को कहानी में पिरोया है। उनका अपना विचार है, नारी-समस्या का व्यक्तिगत स्वर पर शारीरिक और मानसिक रूप से पुरुष निर्भरता से मुक्ति की समस्या है। ' त्रिशंकु ' में मन्नू जी ने आते-जाते यायावार, दरार भरने की दरार, स्त्री-सुबोधिनी, शायद, त्रिशंकु, रेत की दीवार, तीसरा हिस्सा, अलगाव, ए खाने आकाश नाई, कहानी सम्मिलित की है।

## आते-जाते यायावार

मन्नू जी ने कहानी के प्रारम्भ में एक महत्वपूर्ण बात कही है - '' कभी सोचा भी नहीं था, कि महज मजाक में कही हुयी बात ऐसा मोड़ ले लेगी। '' मोड़ और इस शब्द पर मुझे खुद ही हंसी आने लगी। मेरी जिन्दगी में अब न कोई उतार-चढ़ाव आएगा, न मोड़। वह ऐसे ही रहेगी, सीधी, सहज और सपाट। हाँ, कभी-कभी उस सपाट जिन्दगी में एक दरार डालकर उसके पास बसी दुनिया को देखने के लिये लालच उठता है, पर जब-जब ऐसा किया, मन का बोझ बड़ा ही है। ''[1] पुरुष प्रकृति से यायावर है। अभिनय उसका धर्म है, नारी को छलना उसका नियम है। पुरुष आधुनिकता के नाम पर भारतीय नारी को छलता है और विवाह के लिये पारम्परिक संस्कारयुक्त, शरीर से पवित्र, आधुनिक विचारों से दूर गुड़िया जैसी लड़की स्वीकारता है। वह अतीत के सम्बन्धों से मुक्त हो जाता है, क्योंकि जो जुड़ता ही नहीं, उसके लिये टूटने की अहमियत ही क्या होती होगी भला।[2]

---

1- मन्नू भण्डारी, ' त्रिशंकु,' कथा संग्रह की ' आते-जाते यायावार,' पृ0 37

2- अनीता राजूरकर, ' कथाकार मन्नू भण्डारी,' पृ0 60-61

मन्नू जी की नायिकायें शिक्षा क्षेत्र से जुड़ी रहने पर भी उनकी समस्यायें शिक्षा क्षेत्र से सम्बन्धित नहीं हैं। वे निजी जीवन की समस्याओं से जुड़ी हुयी दिखाई देती हैं। शिक्षा ने मन्नू जी के नारी-पात्रों में अपने अस्तित्व के प्रति सचेत होकर व्यक्तित्व को निखारने की लालसा उत्पन्न की है।[1]

आते-जाते यायावर की नायिका मिताली शिक्षिका है, और होस्टल में रहती है। वह अविवाहिता है। उसके सहपाठी ने प्रेम के नाम पर उससे शारीरिक सम्बन्ध स्थापित कर लिया। सहपाठी ने कहा कि 'अब जानोगी कि जीना क्या होता है'। कुछ दिनों बाद उसने मिताली को बताया कि 'खींचकर लाना मेरा काम था, अब इस खुली दुनिया में अपना रास्ता तलाश करना तुम्हारा काम है।' रमला जो कि मिताली की सहेली है, नरेन से परिचय कराया, जो कि अपनी पत्नी से विवाह-विच्छेद कर अमरीका से आया। नरेन के मुक्त जीवन और विचारों को जानकर भी मिताली उसके प्रति आकर्षित हुयी। फिर एक बार छली गयी। कहानी की स्थिति में स्थिति का निर्माण आधुनिक धरातल पर हुआ है जो नारी के अन्तर्द्वन्द्व को व्यक्त करती है।

## दरार भरने की दरार

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी के माध्यम से मनुष्य की मानसिक वृत्ति पर प्रकाश डाला है। कोई भी मनुष्य जब किसी के दाम्पत्य जीवन में पड़ी दरार को भरने के लिये अपने को महत्वपूर्ण समझता है तो उसमें अहं भावना

---

1- पूर्वोक्त, पृ0 92

घर कर जाती है। वह अपने लिये नहीं, दूसरों के लिये ही अपना जीवन समर्पित करना चाहता है, उसके मन में यही भ्रम रहता है कि मेरा इनके जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है, लेकिन जब उसके इस विश्वास को ठेस पहुंचती है तो वह किस प्रकार अपने आपको अपमानित महसूस करता है। इसी का चित्रण इस कहानी के माध्यम से किया है।

नंदिता और श्रुति घनिष्ट मित्र हैं, जबकि श्रुति उम्र में नंदिता से 7 साल बड़ी है, बहुत बड़ी चित्रकार है। श्रुति की अपने पति से हमेशा अनबन रहती है, वह नंदिता से कहती है कि हमारा कभी मेल नहीं हो सकता, भीतर से कुछ न होते हुये भी बाहर से निभाये जा रहे थे। श्रुति दी के आंसुओं से नंदी अपने को बड़ा समझने लगी, वह दाम्पत्य जीवन की दरार को पाटने के लिये उनकी मदद करना चाहती है। समझौता कराना चाहती है। परन्तु अनबन अलग मकान ढूंढने पर विवश कर देती है।[1] नंदी मकान ढूंढती है, परन्तु साथ ही वह इसमें खुश नहीं थी, वह हमेशा उन्हीं के बारे में सोचती रहती, जैसे उसका अपने से तो कोई मतलब था ही नहीं।

तीसरे दिन अचानक विपु-श्रुति साथ में नंदि के घर आये तो मिठाई और साड़ी लाये, वह बाहर घूमने जाने वाले थे, अब नंदी को लगा कि जैसे उसका उनके बीच में बढ़ना निरर्थक था, वे अपने आपको अपमान्ति महसूस करने लगी, उसे लगा - "जैसे बच्चे को पहले तो कोई बहुत बड़ा आश्वासन दे और फिर एक दो टाफी से बहला कर चलता बने।"[2]

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी में मनुष्य-मन की विरोधी मानसिकता का सूक्ष्म चित्रण किया है।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'त्रिशंकु' कहानी संग्रह की 'दरार भरने की दरार,' पृ० 64

2- वही, पृ० 64

## स्त्री सुबोधिनी

मन्नू जी ने 'स्त्री सुबोधिनी' कहानी में एक ऐसी स्त्री का चित्रण किया है, जिसे स्वयं की स्थिति और एक पुरुष की मानसिकता क्या होती है ? इसका बड़ा ही सूक्ष्म व गहरा अनुभव हुआ है और इसीलिये अपने इन अनुभवों को दूसरी किशोरियों को बचाने के लिये प्रस्तुत कहानी में चित्रित किया गया है ।

कहानी की शैली मैं पर आधारित है । मैं यानि कहानी की नायिका आयकर विभाग में कार्यरत महिलाओं के होस्टल में रहती है, घर का सारा आर्थिक भार उसी पर है । आफिस का नया शिंदे अफसर होने के साथ-साथ कवि भी है । वह खूबसूरत है, शिंदे मैं को अपने प्रेमजाल में आठ साल तक फसाये रखता है, परन्तु जब एक दिन मैं को उसके विवाहित होने का पता चलता है तो वह उससे सम्बन्ध तोड़ना चाहती है तो शिंदे उससे अपनी शादी ट्रेजडी व दुबाऊ पत्नी बताता है, उससे तलाक लेने की बात कहता है, उसे नये-नये उपहार लाकर देता है, मैं को समर्पित करके एक कविता-संग्रह भी लिखता है, जिस पर हाथ से लिखा है - 'प्राण को' ।

एक दिन शिंदे के नूतन गृह प्रवेश का आमंत्रण मैं को मिलता है, उसके हँसते खेलते परिवार को देखकर वास्तविकता को जाना कि उसकी स्थिति सिर्फ छक्के पंजे की तरह है भी, प्रेम के इस खेल में वह एक सधे खिलाड़ी की तरह खेला और मैं निहायत अनाड़ी की तरह । इस स्थिति को उसने जल्दी ही अपनी शादी करके संभाल लिया और अन्य किशोर युवतियों को पुरुषों की मानसिकता से अवगत कराते हुये कहती है कि :

(1) इस देश में प्रेम घर-परिवार में ही फलता-फूलता है ।

(2) विवाहित पुरुषों से प्रेम करना बहुत बड़ी भूल है ।

(3) शादी-शुदा औरत विवाहित पुरुष से प्रेम कर सकती है क्योंकि प्रेम पर शादी का ताला है । [1]

मन्नू जी ने इस कहानी के माध्यम से पुरुष वर्ग की मानसिकता से परिचय कराया है ।

## शायद

'शायद' कहानी में मन्नू जी ने पारिवारिक व्यथा को चित्रित किया है कि किस प्रकार अर्थोपार्जन व्यक्ति को उसके परिवार से अलग कर देता है, वह अपने ही घर में अजनबी-सा महसूस करने लगता है, उसकी अपनी मजबूरियाँ उसे मशीन की तरह बना देती हैं, जो कभी परिवार से जुड़ता है और टूट जाता है ।

प्रस्तुत कहानी में राखाल जो एक जहाज मैकेनिक है, वह तीन साल बाद घर आता है, पिछली बार जब वह आया तो उसकी पत्नी गर्भवती हुयी, आस-पड़ोस के लोगों ने संभाला, लड़की हुयी और मर गयी ।

उसकी पत्नी भला सब बच्चों की जिम्मेदारी संभालती है, वह पड़ोस में किसी-न-किसी के वक्त पड़ने पर आर्थिक सहायता लेने से भी हिचकिचाती नहीं है, राखाल अपने घर में दूसरे को महत्व देना बर्दाश्त नहीं कर पाता है, वह अपने को इस घर में अजनबी सा महसूस करता है,

---

1- मन्नू भण्डारी, 'त्रिशंकु' कहानी संग्रह की 'श्री सुबोधिनी,' पृ0 77

वह पारिवारिक स्थितियों से जुड़ना चाहता है और दो महिनों में सम्बन्धों में कुछ दृढ़ता आती है, उसे अपना स्थान महत्वपूर्ण लगने लगता है, तभी छुट्टियाँ समाप्त हो जाती हैं और फिर यही राखाल माला, बच्चों को उपदेश देता हुआ जहाज पर चला जाता है ।

राखाल को परिवार से लगाव है, उसके मनो-मस्तिष्क में परिवार का चित्र घूम रहा है, मित्र के टोकने पर फिर वह मनोयोग से काम में लग जाता है ।

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी के माध्यम से पारिवारिक व्यथा तथा किस प्रकार मनुष्य परिस्थितियों के अनुसार अपने को ढाल लेता है, इसको चित्रित किया है, सभी अपने में व्यस्त हैं, जैसे दोनों की अपनी-अपनी मजबूरियाँ हों ।

## त्रिशंकु

' त्रिशंकु ' कहानी जहाँ एक ओर आधुनिकता व स्वच्छंद विचारों को महत्व देती है, तो वही दूसरी ओर कहीं उसमें रूढ़िवादिता की झलक भी दिखाई पड़ती है ।

एक ओर तो वह बेटी को आधुनिकता व स्वच्छंद वातावरण में रहना सिखाती है, वहीं दूसरी ओर पुरानी पीढ़ियों की रीति को भी वह मानती है ।

माँ ने प्रेम-विवाह किया, इसलिये वह बेटी पर अंकुश लगाना नहीं चाहती, जबकि नाना से माँ का काफी झगड़ा हुआ था । नाना के विरोध के बावजूद माँ ने अपना प्रेम-विवाह किया था ।

घर में सभी आधुनिकता और स्वतंत्रता की बातें करते हैं। वह बेटी को भी स्वतंत्र विचारों की बनाना चाहते हैं। मौहल्ले में सामने ही कालेज के लड़के रहते हैं। मम्मी घर बुलाकर तनु से दोस्ती कराती है। वह कहती है - 'मुक्त रहो और बच्चों को मुक्त रखो'।

एक ओर जहाँ वह अपने को आधुनिक जताने का प्रयास करती रही, वहीं जब शेखर और उसके मित्र रोज आते तो उन्हें बुरा लगता। यहाँ तक की शेखर के कमरे में अकेले होने पर टोह लेती रहती है। मम्मी के तनु से पढ़ाई करो कहने के बाद शेखर तनु को पढ़ाने लगा। एक दिन तनु की भूलवश शेखर की लिखी पर्चियाँ मम्मी को मिल जाती हैं, अत्यधिक स्वतंत्र विचारों वाली मम्मी ने नाना का रूप धारण कर लिया। शेखर ने आना बन्द कर दिया। एक दिन फिर मम्मी ने ही शेखर को बुलाया। शेखर एक दो दिन के बाद आने लगा, मौहल्ले वालों ने मम्मी को तनु का शेखर के घर आना जाना बताया, फिर तो मम्मी बुरी तरह उखड़ गयीं, लेकिन कुछ दिनों बाद फिर शेखर को बुला लायीं।

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी में एक ऐसी स्त्री का चित्रण किया है जो कि स्वतंत्रता, आधुनिकता को मानती तो है, परन्तु साथ ही पुरानी पीढ़ी के विचारों की झलक भी यदा-कदा उसमें समाहित है।

## रेत की दीवार

'रेत की दीवार' कहानी यथार्थ को छूती है, एक ओर जहाँ आज बेरोजगारी ने छात्र के मन में निराशा रूपी कुंठा को जन्म दिया है, वहीं दूसरी ओर पुरानी पीढ़ी आज भी बेटे की पढ़ाई के लिये सब कुछ त्याग करने को तैयार बैठी है।

मन्नू जी ने 'रेत की दीवार' कहानी में रवि जो कि इन्जीनियरिंग के अंतिम वर्ष का छात्र है, पिता एक रेल्वे क्लर्क की समस्याओं के सम्बन्ध में बड़ा ही अच्छा उल्लेख किया है। रवि की पढ़ाई के लिये अपने परिवार के अन्य सदस्यों को गौण रूप देकर एक साल के लिये सभी की आवश्यकताएं मुल्तवी कर देते हैं। चन्दा को भी कालेज में भर्ती नहीं कराते, यहां तक कि टोनी बीमार है, उसे भी सनिटोरियम में भर्ती नहीं कराया। उनकी आशा है कि रवि के इंजीनियर बनते ही नौकरी रूपी कामधेनु उन्हें मिल जायेगी।

दूसरी ओर रवि के मन में बेरोजगारी के कारण अनेक कुंठाए घर कर गयी है, जिसमें वह बाबूजी को तेज, घाघ समझाने लगता है। उसके दोस्त ने एक बार कहा था - " यहां कोई भविष्य नहीं है, इन लोगों का ......... आजकल सैंकड़ों इंजीनियर्स मारे-मारे फिरते हैं, किसी तरह फारेन जाओ, एक बार जाने को मिल जाए, पर बच्चू इस सबके लिये पुल और पशु चाहिये - मेरिट को कोई नहीं पूछता। "[1]

उसके बाबूजी आफिस तक ही सीमित रहते हैं उनकी किसी से पहचान नहीं है, वह घरवालों की सहनशीलता, त्याग, सभी को षड्यंत्र समझता है।

मन्नू जी ने 'रेत की दीवार' कहानी में आर्थिक व सामाजिक स्थिति का पारिवारिक स्थिति पर प्रभाव चित्रित किया है। साथ ही दोनों ही पीढ़ियां एक-दूसरे को समझ सकने में असमर्थ लग रही हैं, जहां एक ओर पिताजी को बेटे से स्वार्थ है, आशा है, वहीं बेटे के मन में बेरोजगारी ने अनेक कुंठाएं घर कर ली हैं, जिससे उसे अपने स्वयं के परिवार के लोग चालाक लगने लगते हैं।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'त्रिशंकु' कहानी संग्रह की 'रेत की दीवार', पृ0 136

## तीसरा हिस्सा

डा० विश्वम्भर नाथ गुप्त ने अपने उपन्यास का समाजशास्त्र में लिखा है कि " आज की जटिल सामाजिक परिस्थितियों में व्यक्ति और समाज के मध्य अलगाववादी प्रवृत्तियाँ सक्रिय हुयी हैं। वह व्यक्तिवादी बन गया है और केन्द्रित होकर समाज के महत्व को अपेक्षा की दृष्टि से देखता है। "[1] किन्तु 'तीसरा हिस्सा' के नायक शेरा बाबू व्यक्ति की अपेक्षा समाज को ही सब कुछ समझते हैं, इसलिये वे लोग उन्हें 'सिनिक' कहते हैं।

मन्नू जी ने एक भोगे हुये यथार्थ की ओर अपनी दृष्टि दौड़ायी है, जहाँ व्यक्ति जमीन पर रहना, खड़ा होना चाहता है, जबकि जमीन भ्रष्ट हो चुकी है। सारे कार्यालय भ्रष्टाचार और व्याभिचार के गढ़ हैं, राजनीति में चापलूसी चलती है। पत्रकारिता में व्यापार और राजनीति है। इस प्रकार समाज का कोई भी हिस्सा साफ-सुथरा नहीं है। घर और बाहर मनुष्य की कीमत अर्थ से तोली जाती है। भ्रष्ट समाज ईमानदार आदमी के व्यक्तित्व में बाँट देता है। आम आदमी हर किसी से समझौता करने के लिये मजबूर है। यथार्थ में हर आदमी अपने खंडित व्यक्तित्व को जी रहा है।[2]

शेरा बाबू का वास्तविक नाम यह नहीं है। उन्होंने नौकरी छोड़कर मित्रों के आश्वासन के चक्कर में अपनी जमा पूंजी लगाकर एक पाक्षिक

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- विश्वम्भर दयाल गुप्त, 'उपन्यास का समाजशास्त्र,' पृ० 78

2- अनीता राजूरकर, 'मन्नूजी की कहानियाँ, अनुभूति के घेरे में अभिव्यक्ति के फेरे,' पृ० 67

पत्रिका निकाली थी । पत्रिका में उनके संपादकीय,लेख अच्छे होते, उनके मित्र एवं पाठक' वाह रे शेरे' की दाद देते । इस प्रकार संपादक शेरा बाबू बन गये, ढेर सारे कर्ज और कुछ समय के बाद पत्रिका का बन्द होना, उनकी शेर की तरह बोली भी बन्द हो गयी । पत्नी ने मायकेका हार भी कर्ज में दे दिया । उनकी पत्नी नौकरी करने लगी । बेटा सुधीर मटर-गश्ती करता । शेरा बाबू अपने आपको चिपकाये, नौकरी फिर से शुरु कर दी । नौकरी में सेक्रेटरी से झड़प ने उन्हें नौकरी से निकाल दिया, फिर एक नौकरी से समझौता कर लिया, जो बास कहते, करते, चाहे वह अच्छा हो या बुरा, यह क्रम उनकी मर्यादा के अनुकूल था, पर वह सबसहते रहे ।

## अलगाव

मन्नू जी ने' अलगाव' कहानी का विस्तृत रुप ही' महाभोज' उपन्यास में रुपांतरित किया है । परिवार के वातावरण के कारण ही मन्नू जी का बचपन से ही राजनीति में लगाव रहा है । जन-साधारण पर होने वाले अत्याचार की खबरें, के कारण उनका मन काफी विचलित रहा, ' बेलछी ' के हत्याकांड का असर ज्यादा गहरा । ' अलगाव ' इसी तथ्य का आधार है ।

खरोहा गांव में सड़क के किनारे पुलिया पर पड़ी लाश को लेकर गांव में उत्तेजना थी, इसके पहले हरिजन टोला में आग लगी थी, हत्यारा पकड़ा भी नहीं गया कि यह कांड का होना । बिपू कोई बड़ा आदमी न था, पर मध्यावधि चुनाव के कारण यह घटना महत्वपूर्ण थी । मुख्यमंत्री जब गांव आये, तब जन-जन को यह विश्वास दिलाया था कि किसी बड़े

अफसर से जाँच करायी जावेगी । बिधू के घर उसके बूढ़े बाप को आश्वासन दिया । बिधू की मौत भूलकर हीरा से ईर्ष्या करने लगे ।

दा साहब के जाते ही, एस०पी०सक्सेना को भेज दिया । दा साहब ने बताया था कि बहुत धीरज और सहानुभूति से पेश आना लोगों से । विश्वास जमा कर कार्य करना । हीरा को बिधू ने जेल भिजवाया था, जोगेसर साहू, जोरावर के जो जानकारी दी, उसके बाद पोस्टमार्टम की रिपोर्ट के अनुसार पेट से जहर निकला था, इससे जाहिर हो गया कि बिधू ने खुदकुशी की है । महेश शर्मा रिसर्च प्रोजेक्ट लेकर गाँव में कार्य करने आया, उसका बयान भी लिया गया । व्यवस्था में हस्तक्षेप करने की अनुमति न होने पर भी बिधू ने उसे मोह लिया था । गरीबों की लड़ाई कौन लड़ेगा ? भाग-दौड़कर आगजनी के प्रमाण जुटाकर दिल्ली जाने की तैयारी में जुटे बिधू की मौत ने सारी बस्ती के हौसले को ही मार दिया । बिधू की हत्या के बयान ने दा साहब की प्रशंसा से लबालब भर गया । पुलिस अफसर तो आज तक नहीं देखा, गाँव वालों के मन में विश्वास जमा गया । बिधू की लाश को राजनीति के गिद्धों को लगाव था । जो आधुनिक राजनीति का लेखा-जोखा ही है ।

( 4)   <u>यही सच है</u>

कथा-साहित्य को एक नया आयाम देने में मन्नू भण्डारी का विशिष्ट स्थान है । मन्नू जी ने जीवन को सीधे समझाने जनाने के लिये ही कहानी लिखी है । कहानीकार का हर पात्र जिन बदलती परिस्थितियों में जी रहा है, उसका चित्रण बखूबी किया है, जिसमें यथार्थ तो है, पर यथार्थ का जीवन सत्य भी है । कहानी संग्रह का नाम ' यही सच है' इसका मूल आधार यही है ।

'यही सच है' कहानी संग्रह में जिन कहानियों को लिया गया है, उसमें क्षय, तीसरा आदमी, सजा, नकली हीरे, नशा, इन्कमटैक्स और नींद, रानी माँ का चबूतरा, यही सच है। इन कहानियों में क्षय, सजा, रानी माँ काचबूतरा, यही सच है, अन्य कहानी संग्रह में भी सम्मिलित हैं।

'यही सच है' की अन्य कहानियों में - तीसरा आदमी, नकली हीरे, नशा, इन्कमटैक्स और नींद, मुख्य हैं।

## तीसरा आदमी

मन्नू जी ने पुराने और नवीन मूल्यों की टकराहट को कहानी का उद्देश्य के रूप में लिया है। पुराने जीवन मूल्यों के अनुसार पराये पुरुष से एकांत में बातचीत मात्र से पति अपनी पत्नी पर लांछन लगा सकता है, किन्तु सामाजिक व्यवस्था में यदि पुरुष जो पति है, किसी स्त्री या पत्नी से बातचीत करे तो आज हास्यास्पद ही है।

'तीसरा आदमी' कहानी में सतीश और शकुन पति-पत्नी हैं, एक दूसरे को बहुत चाहते हैं, एक कमरे में रहते हैं, उन्हें दूसरे का आना बहुत अखरता है, शादी के दो-तीन साल तक तो वह काफी खुश थे, तीन साल बाद मातृत्व सुख हेतु शकुन डाक्टर के पास जाँच हेतु जाती है, डाक्टर सतीश की जाँच भी आवश्यक बताती है, सतीश डाक्टर के पास जाने का आश्वासन तो दे देता है, पर उसकी जाने की हिम्मत नहीं होती। शकुन निराश हो गयी, वह चुप रहती, ऐसे में घर में एक तीसरा आदमी 'आलोक' आया। सतीश को यह अच्छा नहीं लगा, उसके अन्दर हीन-भावना उत्पन्न होने लगी। आलोक एक दिन के लिये आया था, रात की

गाड़ी से जाने वाला था, उसके दिल में जहाँ एक ओर पत्नी के प्रति शंका होती है तो वहीं दूसरी ओर अपनी पौरुषहीनता का एहसास होता और शकुन का व्यवहार उचित लगता। आफिस में जल्दी आने पर वह दरवाजा भी न खटखटा सका, वह सड़कों पर भटकता रहा।

आलोक को विदा करके आया तो वह खुश था, उसका मन स्वच्छ था। वहीं शकुन घर के काम की चिन्ता न करके आलोक का नया उपन्यास पढ़ रही थी।

मन्नू जी ने मानसिकता के चिन्तन को एक नया रूप दिया है, जहाँ आदमी फिर वापिस लौटकर अपना जीवन जीना चाहता है, ऐसा लगता है कुछ हुआ ही नहीं। "ओह तुम। मैं तो डर गयी थी" और किताब के नीचे सरकाती हुयी वह उठकर बैठ गयी। यही तो अपनापन है। शकुन का यहाँ आत्मीय भाव ही है।

## सजा

मन्नू जी ने 'सजा' कहानी के माध्यम से न्याय में विलम्ब होने से एक परिवार किस प्रकार छिन्न-भिन्न हो जाता है, इसका चित्रण किया है, साथ ही न्याय व्यवस्था पर भी तीखा व्यंग्य किया है।

आशा के पिता पर बीस हजार के गबन का आरोप लगाया गया, मुकद्दमा दायर हुआ, दादा 25) रुपये में हिसाब करने लगे, आशा पैदल स्कूल जाती, फिर पढ़ाई भी छोड़ दी, मन्नू गाँव में रहकर पढ़ता है। माँ को राजयक्ष्मा होते हुये भी उनका इलाज नहीं हो पा रहा था। एक साल बीत गया, मन्नू को इलाहाबाद चाची के पास भेज दिया गया, चाची कठोर स्वभाव की थी, मन्नू दिनभर उनके ही बेटे को सँभालता,

---

1- मन्नू भंडारी 'यही सच है' कथा संग्रह की 'तीसरा आदमी' पृ० 52

उसका पहला नम्बर अब प्रमोट में बदल गया, उसे पढ़ाई का समय ही कहाँ मिलता था । इसी तरह एक साल और बीत गया । फैसले का दिन भी आ पहुँचा, आशा के पिता को निर्दोष करार दिया गया, परन्तु जब तक सारा परिवार टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गया था, आशा के पिता को कोई खुशी नहीं हुयी, उन्हें अपने परिवार की अस्तव्यस्ता की जो सजा इन दो-तीन सालों में मिली वो इस न मिलने वाली सजा से कहीं अधिक मंहगी पड़ी ।

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी में भ्रष्ट अधिकारी किस प्रकार निर्दोष व्यक्ति को आरोपों के कठघरे में खड़ा कर देते हैं और फिर जब तक न्याय होता है, वह व्यक्ति ही नहीं, उसका पूरा परिवार छिन्न-भिन्न हो जाता है । यहाँ तक कि वह चाहते हुये भी फिर अपने परिवार को जोड़ नहीं पाता है ।

## नकली हीरे

मन्नू जी की 'नकली हीरे' कहानी का उद्देश्य केवल साधनों के द्वारा ही मनुष्य अपने को पूरा नहीं समझ सकता है, जब तक वह मन से प्रसन्न न हो ।

मिसेज सरल और इन्दु दो बहिनें हैं । इन्दु ने अपनी पसन्द से स्कूल मास्टर से, जिसकी तनख्वाह 500) रुपये मासिक है, शादी की है । वहीं सरन के पति अनेक मिलों के मालिक हैं, इस कारण महिने में पन्द्रह दिन बाहर ही रहते हैं, पत्नी को सभी सुख सुविधाएं दे रखी हैं, पत्नी ने भी इसी परिस्थिति अनुसार अपने को ढाल लिया है । महिला क्लब, पार्टियों में मस्त रहती हैं । बाहरी चमक-दमक से उसे लगाव है, कुछ बीना

और निक्की जैसी महिलायें व्यंग्य बाण भी उम्र भर चलाती हैं, परन्तु जैसे वह इनकी अभ्यस्त हो चुकी है, कोई कुछ भी कहे, इसकी कोई परवाह नहीं ।

इन्दु और सरन दो वर्गों का प्रतिनिधित्व प्रस्तुत कहानी में कर रही हैं, जहाँ सरन संभ्रान्त परिवार से सम्बन्ध रखती है, वहीं इन्दु मध्यमवर्गीय परिवार से सम्बन्धित है, उसके लिये बाहरी चमक-दमक से बढ़कर पति का प्यार है, वह अपने जीवन से संतुष्ट है । दोनों ही अपने-अपने दायरों में प्रसन्न हैं ।

इन्दु जीजाजी से ट्रंक पर बात करना चाहती है, तो नौकर कहता है कि वह अनीता मेमसाहब के साथ डांस के लिये गये हैं, तब मिसेज सरन को पति के प्रति अविश्वास होने लगता है, उसे पति द्वारा दिये हुये सारे साधन नकली लगने लगते हैं । यही यथार्थबोध मन्नू जी ने कहानी में नयेपन के साथ प्रस्तुत किया है । नहीं-नहीं, ये हीरे नहीं हो सकते । इतने फीके और मन्दे, बिल्कुल सादे कांच के टुकड़ों की तरह ...... ।[1]

## नशा

मन्नू जी की 'नशा' कहानी भारतीय संस्कृति का परिचय देती है कि किस प्रकार एक स्त्री के लिये उसका पति चाहे जैसा हो, उसका परमेश्वर है, वह उसकी इच्छा के बिना कुछ नहीं कर सकती है ।

'नशा' कहानी मन्नू जी की अलग ढंग से लिखी हुयी कहानी है, जिसमें शंकर को पीने की लत है तो आनन्दी को पिलाने की । वह उसे

---

1- मन्नू भंडारी, 'यही सच है,' कथा संग्रह की 'नकली, हीरे,' पृ088

पीने के लिये पैसे देती है । यहाँ तक कि उसका पुत्र किशन अपने साथ ले जाती है तो वहाँ भी आस-पड़ौस के कपड़े सीकर पैसे भेजती है । "नानीजी अम्मा ने यह रसीद भेजी है, देख लीजिए, पूरे बीस रुपये भेज दिये हैं ।"[1]

इस कथ्य से लगता है कि दूर जाने पर भी उसे अपने पति की खुशी की अधिक चिन्ता है । जबकि इसी पीने की लत के कारण धन बच्चों का भविष्य सब बर्बाद हो गया था, दो बच्चे मर गये, तीसरा किशनू वह भी 14 साल की उम्र में ही पिता से झगड़ा करके चला गया ।

बारह वर्ष बाद किशन माँ को साथ लेकर चला जाता है, उसके मन में पिता को भी ले जाने की इच्छा है, परन्तु उनकी आदतों के कारण वह मजबूर है, आनन्दी की हर सुख-सुविधा का बेटे बहू ख्याल रखते हैं, फिर भी आनन्दी खुश नहीं, वह पड़ौस के कपड़े सीने लगती है । किशन सोचता है कि ठीक ही है, इसमें माँ का मन लगता रहेगा, पर वास्तविकता में आनन्दी उन पैसों को शंकर के लिये भेजती है, जब इसका पता किशन को लगता है तो वह कहता है - "रात-दिन सिलाई बुनाई करने की क्या जररुरत थी, मुझसे कहा होता ।"[2]

मन्नू जी की 'नशा' कहानी भारतीय संस्कृति में ढली हुयी कहानी है, पति परमेश्वर की कल्पना से ही अनुप्राणित आनन्दी का नशा शंकर के नशेने से भी बढ़कर है, वह पति की इच्छा के लिये ही जीने वाली नारी है, वास्तविकता में यही भारतीय संस्कृति है ।

---

1- मन्नू भण्डारी, 'यही सच है,' कथा संग्रह की 'नशा', पृ0 100

2- वही

## इन्कम टैक्स और नींद

मन्नू जी ने 'इन्कम टैक्स और नींद' कहानी के माध्यम से इस कथन को स्पष्ट करना चाहा है कि व्यक्ति को वर्तमान परिस्थिति एवं समय की माँग के अनुसार अपने को बदल लेना चाहिये, नहीं तो समाज व अन्य लोगों के बीच उसकी स्थिति हास्यास्पद बन जाती है।

प्रस्तुत कहानी में एक ऐसे ही पात्र हैं, डा0 दयाल प्रसाद चतुर्वेदी, होम्योपैथिक, बाल रोग विशेषज्ञ। डा0दयाल के पास दिन में दो-चार ही मरीज आते हैं। अर्थ का अभाव है, परन्तु वास्तविकता को जानते हुये भी वह इसे स्वीकार नहीं करते हैं। उनके भाई जो लखनऊ में रहते हैं, उनकी लड़की महिमा एलोपैथी डाक्टर है। डा0दयाल के लड़के को भी वह डाक्टर बनाना चाहते थे, परन्तु डा0 दयाल उसे इंजीनियर बनाना चाहते हैं, परन्तु डा0 दयाल यथार्थ में वह (महिमा) का इन्कम टैक्स बचाने के लिये किसी सेठ का हिसाब रखने का कार्य करने लगा है।

डा0दयाल की लड़की 'सरोज' जो मैट्रिक की छात्रा है, उसकी शादी का प्रयास किया जा रहा है, डा0दयाल का ख्याल है कि लड़कियाँ घर-गृहस्थी के कार्य में दक्ष होना चाहिये। वे सोचते हैं कि -"भाई साहब ने इस लड़की की जिन्दगी खराब कर दी, छब्बीस बरस की बिन ब्याही लड़की घर में बिठाकर रख ली।"[1]

वैसे उन्हें महिमा पर गर्व है, परन्तु उनका अहं उसकी हर बात को अनुचित बताता है। महिमा के सामने ही डा0दयाल के नाम इन्कम-

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'यही सच है,' कहानी संग्रह की 'इन्कम टैक्स और नींद,' पृ0 102

टैक्स आफिस से रिटर्न सबमिट करने का पत्र आता है, डा०दयाल इसकी परवाह न करके गहरी नींद में सो जाते हैं ।

डा०दयाल और महिमा दोनों ही अलग-अलग वर्गों के प्रतीक हैं, महिमा वर्तमान समय के अनुसार चलती है, वहीं डा०दयाल सब कुछ समझाते हुये भी अनभिज्ञ रहना चाहते हैं और इसीलिये उनकी कोई भी बात पर परिवार का सदस्य ध्यान नहीं देता ।

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी में मनुष्य की अहं भावना का चित्रण करते हुये स्पष्ट किया है कि मनुष्य में कभी-कभी अहंकार भावना इतनी बढ़ जाती है कि वह अपने सिवा किसी की सुनता ही नहीं है और इसी कारण समाज-परिवार में वह उपहास का पात्र बन जाता है ।

( 5) एक प्लेट सैलाब

साहस और बेबाक बयानी ने मन्नू भण्डारी को हिन्दी कहानी में एक विशिष्ट स्थान दिया है । नैतिक-अनैतिक से परे यथार्थ को निर्भ्रान्त निगाहों से देखते जाना उन्हें हमेशा नयी और आधुनिक बनाता है ।[1] 'एक प्लेट सैलाब' में मन्नू जी ने एक नया मोड़ दिया है, जटिल और गहरी सच्चाइयों को परख के साथ कहानी के माध्यम से प्रस्तुत किया है । जीवन का साक्षात् तभी होता है, जब उसे निकटता से देखा जावे । नई नौकरी, बंद दराजों के साथ एक प्लेट सैलाब, छत बनाने वाले, एक बजर और, संख्या के पार, बाँहों का घेरा, कमरे, कमरा और कमरे,

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- 'एक प्लेट सैलाब' के अग्रलेख से

ऊँचाई कहानियों में मानव जीवन का अंतर्द्वन्द्व अधिक है, यह अन्तर्द्वन्द्व जीवन का साक्षात भी है ।

नई नौकरी
---

नारी कुछ शी परिवार में उसके अलग अस्तित्व की बात, एक समस्या है । पत्नी को पति के ऊपर निर्भर रहना पड़ता है, एक शिक्षित नारी का जीवन का बदलाव भी है । रमा का व्यक्तित्व पुरुष प्रधान संस्कृति का शिकार है । रमा के पति कुंदन प्रारम्भ में आफिस जाते-जाते, उसे कालेज में छोड़ जाते हैं, वह इतिहास की प्राध्यापिका है । उनका बेटा बंटी पढ़ने में अच्छा है ।दोनों हमेशा साथ रहते हैं । सब आनन्द से हैं । रमा अपनी कालेज अपनी सहेलियों मिसेज वर्मा, संध्या, मालती के साथ हंसी-मजाक करती रहती हैं ।

कुन्दन को डा० फिशर ने नई नौकरी दी, जिससे उसके जीवन का बदलाव आ गया । कम्पनी विदेशी थी, पार्टियां रोज होतीं, कभी कुंदन के, कभी कम्पनी के अन्य लोगों के । कम्पनी का फ्लैट मिला, जिसके रख-रखाव का भार रमा पर आ गया और पार्टी में जाना-आना व्यवस्था आदि । व्यवसायिक कारणों का जीवन में जुड़ना ही कुन्दन के कार्यों में एक नयापन लगता है । जहाँ रमा को नौकरी छोड़नी पड़ी, क्योंकि घर की नौकरी उसकी अधिक थी, घर के कामों में इतनी उलझन जाती कि वह मात्र कुन्दन की परछाईं बन गयी ।

यथार्थ के धरातल पर कुन्दन की नौकरी ने कुंदन को जहाँ निखारा है, वहीं कुंदन के साथ रमा तो रहती, पर रमा के साथ कहीं भी कुन्दन नहीं था । रमा की घर की नौकरी ने उसके उसके अस्तित्व और व्यक्तित्व

को निगल लिया । पुरुष अपनी इच्छाओं की पूर्ति नारी से करता है, जबकि नारी यथार्थ जीवन में तनाव और टूटन में ही जाती है, वह भले ही शिक्षित क्यों न हो ।

## बंद दराजों का साथ

मन्नू जी ने 'बंद दराजों का साथ' कहानी में पहले और वर्तमान में स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के अन्तर को स्पष्ट करते हुये, यह बताने का प्रयास किया कि - पहले नारी-पुरुष के सम्बन्ध स्पष्ट और खुले थे, पत्नी के अलावा पति के किसी और नारी के मात्र सम्बन्ध स्पष्ट और समाज में मान्य थे, जैसे दूसरी पत्नी, तीसरी पत्नी और उपपत्नियाँ । नारी का शोषण था, किन्तु वह स्पष्ट था । आज पुरुष आधुनिक विचारों को प्रकट करता है, पत्नी के साथ प्यार-दुलार का नाटक करता है और इतनी सफाई से उसे धोखा देता है कि पत्नी विश्वास भी नहीं कर पाती ।

विपिन और मंजरी सुखी वैवाहिक जीवन बिता रहे हैं, अचानक एक दिन उसे विपिन की दूसरी जिन्दगी जिससे उसे एक बच्चा भी था, पता चला । वह इस विश्वासघात और विपिन के रवैये से तंग आकर सम्बन्ध-विच्छेद कर लेती है । अपने तीन साल के बेटे असित को लेकर तनहाई से जूझती रही । आखिर उसने असित को होस्टल में रख दिया और दिलीप से विवाह कर लिया । मंजरी ने नौकरी छोड़ दी, असित के छुट्टियों में घर आने पर उसका विशेष ध्यान रखती मंजरी उसकी हर फरमाइशों को पूरा करती । असित के फीस कार्ड के आते ही सहज रूप में दिलीप ने आर्थिक कठिनाई की बात कही । इससे मंजरी को अपने नौकरी छोड़ने का अफसोस हुआ । एक बार फिर दाम्पत्य जीवन में दरार पड़ गयी ।

उसका जीवन दो दरवाजों में बंटा हुआ था - " एक व्यक्तिगत, एक पारिवारिक, व्यक्तिगत में असित के फरमाईश पत्र, उसके चित्र, स्कूल रिपोर्ट वही विपिन के कुछ औपचारिक पत्र थे, जिसमें यह आश्वासन दिया गया था कि वह असित का आधा खर्चा दिया करेगा ।"[1]

मन्नू जी की प्रस्तुत कहानी बन्द दराजों का साथ आज के व्यक्ति के तनाव को पूरी गहराई से आंकती है । आज मनुष्य न तो टूटी हुयी जिन्दगी से अपने को मुक्त कर पाता है और न ही नई जिन्दगी में अपने को पूरी तरह व्यवस्थित कर पाता है । उसकी जिन्दगी क्षत-विक्षत दो पाटों के बीच दबी हुयी सी हो जाती है । लेखिका कहानी की नायिका मंजरी के माध्यम से पाठकों के समक्ष चित्रित किया है ।

## एक प्लेट सैलाब

मन्नू जी ने एक प्लेट सैलाब कहानी का सूत्र एक पात्र को केन्द्र-बिन्दु बनाकर नहीं जोड़ा है, बल्कि इसमें व्यवहारिक जगत के दर्शन कराये हैं ।

एक होटल के हाल में शाम के विभिन्न दृश्य, हर वर्ग के लोग और उनकी समस्याओं में भिन्नता, और उसमें उत्पन्न मानसिकता को चित्रित किया है ।

मन्नू जी ने शाम के समय होटल गैलार्ड में प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा इस कहानी को शब्दों में बांधा है ।

---

1- 'एक प्लेट सैलाब,' कहानी संग्रह -' बन्द दराजों का साथ,' पृ0 29

पुरुष आफिस से थककर, महिलायें घर के कार्य से ऊबकर, गर्मी से राहत पाने के लिये गेलार्ड में आते हैं। हर सीट पर से आती मादक गंध और फुसफुसाते स्वर साथ ही डायस पर एक लड़की झूमकर गा रही है, साथ ही एक लड़का जो झुनझुने बजा रहा है, लड़की हंसती है तो ऐसा लगता है, दोनों के बीच कुछ है, परन्तु वास्तविकता में कुछ नहीं।

एक टेबल पर कुछ लड़कियाँ बैठी हैं, जो गप्पें हाँकती हुयी काफी पी रही हैं, दूसरी ओर एक युवक-युवती बैठे हैं, युवक कुछ परेशान नजर आता है, कोने की मेज पर ढलती उम्र की महिला बैठी है जो कि काफी के बहाने समय बिताने आयी है। गाने का स्वर हाल में तैर रहा है। ऐसे में नर्सरी राइम गाते नन्हे,मुन्ने बच्चों के झुंड ने गेलार्ड में उस हाल की शिष्टता को भंग कर दिया।

यथार्थ रूप में यह सच है कि हमारे जीवन की शुरुआत किलकारियों से होती है, बढ़ते-बढ़ते अनेक समस्याएं जैसे युवा उम्र की प्रेम समस्या, राजनीति दांवपेंच, अधेड़ उम्र की बोरियत, किशोर उम्र की समस्या, आदि घर कर जाती है, हर वर्ग की अपनी अलग समस्या है और इस समस्या का वास्तविक रूप में वह स्वयं जिम्मेदार है, उसकी जन्म तो रंग-बिरंगे गुब्बारों के बीच रंगीन दुनिया में होता है।

मन्नू जी ने प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा इसे दृश्य बंध किया, जो कि यथार्थ के धरातल को छूती है।

## छत बनाने वाले

मन्नू जी ने प्रस्तुत कहानी में आधुनिक और प्राचीन विचारों, मान्यताओं के भेदभाव को स्पष्ट किया है, कहीं भविष्य की चिन्ता को चित्रित किया है, तो कहीं वर्तमान सुख में ही संतुष्टि दिखाई है।

शरद एक लेखक है, उसके पिता रामेश्वर शहर (लखनऊ) में रहते हैं। शरद एम0ए0 है, बहन हीरा डाक्टर बन गयी। शरद, घूमने के लिये मेरठ आता है। मेरठ में उसके ताऊ का एक मंजिला मकान है, उन्होंने दूसरी मंजिल बनवाने की योजना भी बना ली है, ताऊजी ने अपने अनुसार ही सारे परिवार को ढाल रखा है, नित्य मन्दिर जाना उस परिवार का नियम है। छोटी मैट्रिक में फर्स्ट पोजीशन पर आया। उसका प्यार एक कायस्थ लड़की से हुआ। ताऊजी ने उसकी परवाह न करके अपनी मर्जी से शादी कर दी।

एक तरह से पूरा परिवार ताऊजी की इच्छा पर निर्भर, ताऊजी के मुँह से यह सुनने पर कि खान-पान में अब अपनी मर्जी के मालिक हैं। शरद ने चाय की इच्छा जाहिर की, जिस पर उसे चाय के दोष सुनने को मिले। ताऊजी अपने ढंग से सभी को जीना सिखाना चाहते हैं। वह वर्तमान वातावरण से अछूते हैं। उन्हें अपनी आने वाली पीढ़ी पर भी विश्वास नहीं इसलिये कहते हैं -" कौन जाने आगे क्या हो यों भी अब छोटू-मोटू के बच्चे बड़े हो रहे हैं, मैंने तो इसी इरादे से ये छत छोड़ दी थी, बच्चे जब तक छोटे रहें, खेलकूद लें, बड़े होने लगे तो सिर पर छतें डलवा दो, कमरे बन जायेंगे।"[1]

---

1- मन्नू भंडारी, 'एक प्लेट सैलाब' कहानी संग्रह की 'छत बनाने वाले,' पृ054

मन्नू जी की यह कहानी आधुनिक व प्राचीन संस्कृति के भेद को स्पष्ट करती है कि एक ओर घूंघट है तो दूसरी ओर बिना बाँहों का ब्लाऊज, चाय है तो दूध और लस्सी। शिक्षा की छत ने वर्तमान में सीमेन्ट की छत को पाट दिया है। फिर भी प्राचीन संस्कारों में जकड़ा मनुष्य इसे स्वीकार नहीं कर पा रहा है। वह अपने ही दृष्टिकोण से चलना चाहता है।

## एक बार और

'एक बार और' कहानी में मन्नू जी ने नारी जीवन के प्रथम प्रेम का महत्व स्पष्ट करते हुये बताया है कि किसी के साथ टूटकर किसी और के साथ जुड़ना स्वाभाविक नहीं है। मन कोई स्थूल चीज नहीं है कि जिसके साथ चाहे जोड़ लो, और तोड़ लो।

हमारी संस्कृति, समाज प्रेम की परिणति विवाह में मानता है, एक स्त्री को अपने प्रेम पर पूर्ण विश्वास है, लेकिन जब उसकी इन मान्यताओं को ठेस लगती है तो नारी घुटन और जुड़ने की प्रक्रिया से किस प्रकार गुजरती है, इसका यथार्थ चित्रण है।

बिन्नी दर्शनशास्त्र की प्राध्यापिका अपनी सहेली सुषमा के साथ गाँव में रहती है, सुषमा उसकी 'पितु-मातु, सहायक, स्वामी, सखा' सब है। बिन्नी के कुंज के साथ चौदह वर्ष तक प्रेम-मैत्री सम्बन्ध होने के बावजूद भी कुंज ने नौ वर्ष बाद मधु से शादी कर ली, कुंज को समय मिलने पर बिन्नी के पास आता, बिन्नी इन सम्बन्धों को तोड़ना चाहती है, परन्तु कुंज के कारण तोड़ नहीं पाती। एक दिन कुंज अपनी पत्नी का निर्णय इधर या उधर सुनाते हुये बिन्नी से शादी भी करता है, जिससे उसे पहली बार अपने सम्बन्धों की स्थिति का ज्ञान हुआ। बिन्नी के भैया दिनेश

नंदन को भेजते हैं, उसका विवाह उससे करवाना चाहते हैं। सुषमा ने इसमें भरपूर सहयोग दिया। बिन्नी भी कुंज से मुक्त होकर नंदन को अपनाना चाहती है।

बिन्नी चाहकर भी नन्दन से अपने मन की बात नहीं कह पाती, हाँ यदि नन्दन कहता तो वह न नहीं करती, मन्नू जी की यह कहानी न नारी मन के अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित करती है कि नारी-मन का टूटना और जुड़ना सहज-स्वाभाविक क्रिया नहीं, वह तो जिसके साथ जुड़ जाता है, उसी के साथ पूर्ण रूप से समर्पित हो जाता है। इस नाजुक नारी भावना का चित्रण मन्नू जी ने बड़े ही मार्मिक रूप में चित्रित किया है।

## संख्या के पार

मन्नू जी ने 'संख्या के पार' कहानी में मानव-जीवन के उस यथार्थ को प्रस्तुत किया है जो भोग्या हुआ सत्य ही है। "माँ आयी और चली गयी। कहते हैं माँ के प्यार और उसकी ममता की कोई बराबरी नहीं कर सकता, पर मैं नहीं जानती माँ का प्यार क्या होता है, उसकी ममता कैसी होती है।"[1] मानव-मन के कुछ भाव ऐसे होते हैं, जिसकी कीमत नहीं। माँ-बाप के वात्सल्य के सामने पांच रुपये या दस हजार का धनादेश तुच्छ है। ममत्व का अपना महत्व है, इसके सामने किसी की कीमत नहीं।

प्रमिला के प्रति माँ का ममत्व और उसके दादा का उसकी माँ के प्रति वात्सल्य और पितृत्व समान है, किन्तु वे उसके प्रकट करने में जो तरीका अपनाते हैं, वह भिन्न है। प्रमिला कालेज में पढ़ती है, उसे उसकी

---

1- मन्नू भंडारी, 'एक प्लेट सैलाब,' कथा संग्रह की 'संख्या के पार,' पृ087

माँ याद नहीं । सुन रखा है, उसने उसकी माँ विधवा होने के बाद भाग गयी । वास्तव में उसके विधवा होने के बाद ससुराल वालों ने उसका सौदा कर दिया । प्रमिला बाबा और आजी अर्थात् नाना-नानी के पास रहती है । नाना प्रमिला की माँ के नाम से चिढ़ते । प्रमिला की माँ उसको शहर से देखने आयी है, इस कारण नाना को दिल का दौरा पड़ता है । वे प्रमिला को प्यार करते हैं पर उसे उसकी माँ से मिलने न देने के पक्ष में हैं ।

नाना (बाबा) ने अपनी पत्नी को दस हजार का चैक दिया कि प्रमिला की माँ को दे दे, पर वह उससे मिलने नहीं आये । प्रमिला की माँ अपनी माँ के पास मिली, प्रमिला को उसकी माँ ने गले से लगा लिया और उसके बालों पर हाथ भी फेरने लगी तथा उसके हाथ में पाँच का नोट दे दिया । और वह बाहर चली गयी । प्रमिला के हाथ में पाँच का नोट था, पास ही दस हजार का चैक पड़ा था । इन दोनों के मध्य वह प्यार को ढूंढ रही है, जिसका वात्सल्य रूप क्या है । वास्तव में वात्सल्य का कोई मोल नहीं होता । मन्नू जी ने इस कथा के माध्यम से जीवन में वात्सल्य के शाश्वत मूल्य की अनुभूतियों का सूक्ष्म रूप से चित्रण किया है ।

## बाँहों का घेरा

मन्नू जी ने अपनी कहानियों में जीवन की विभिन्न समस्याओं को आज के वातावरण के माध्यम से उठाया है, जिसमें नारी-जीवन की समस्या वास्तव में एक परिधि के रूप में है । दाम्पत्य जीवन का जो रूप है, इसी घेरे में है । भारतीय नारी के धार्मिक संस्कार पति के प्रति समर्पित भाव ही रखते हैं । पति अपने व्यवसाय में अधिक व्यस्त रहता है, जिसके कारण पत्नी की इच्छाओं के प्रति उपेक्षा एवं बच्चों के प्रति भी उपेक्षा रहती है, वह

कुंठित भी रहती है। इस कुंठित वातावरण में भी वह अपने जीवन में चलती रहती है। इससे भावना की कमी आती है।

कम्मो पांच वर्ष की है, जो अपनी सौतेली माँ का प्यार पाना चाहती है, जबकि माँ एक साल की टुन्नी की तरफ ही ज्यादा ख्याल रखती है। इसी पारिवारिक धरातल में कम्मो अठारह वर्ष की हो जाती है, उसका कुंवारा मन प्रेमी शैलेन के पत्र पढ़कर मिलने को आतुर है। पर इसके पहले ही कम्मो की शादी मित्तल से हो जाती है। शैलेन के साथ जो स्वप्न बनाये थे, वह पति मित्तल के साथ पूरा करना चाहती है, किन्तु मित्तल व्यवसाय एवं धन की बातें ही करता। कम्मो को पैसे की कमी नहीं है, पर प्यार का अभाव उसे खटकता है। सारी व्यवस्था में धन कम्मो के पास है। मन से वह प्यासी है।

कम्मो की भतीजी शम्मी और उसका मंगेतर इन्द्र आता है, जिनका उन्मुक्त प्रेम देखकर उसके मन की आग भड़क उठती है। दोनों अपनी शादी की वस्तुयें खरीदते हैं। शम्मी और इन्द्र के कारण उसे अपनी प्रेमी की याद आने लगी, उसे लगा कि इस अच्छी व्यवस्था के बाद भी, उसके मन की भावना, इच्छा को जानने वाला कोई नहीं उसकी इच्छा है कि उसे भी कोई प्यार करे। चार रात उसे नींद नहीं, तनाव बढ़ता रहा। इसी मध्य उसकी सास को बुखार आ गया। शोन बेटा पास ही सो रहा था, वह रात में चीखता हुआ, उसके पास आकर उसकी बाँहों से लिपट गया। वह बच्चों को अपनी बाहों में कस लेती है, प्यार करती है। वह आज तृप्त हो जाती है, वह ऐसी ही अनुभूतियों में जीना चाहती है।

जीवन के यथार्थ को मन्नू जी ने स्वाभाविक क्रिया से जोड़ा है। कम्मो इसकी एक कड़ी है।

## कमरे, कमरा और कमरे

' कमरे, कमरा और कमरे ' कहानी में व्यक्ति का अस्तित्व कभी सीमित दायरे में तो कभी असीमित दायरे में रहना चाहता है । मन्नूजी की यह कहानी मानसिक द्वन्द्व को स्पष्ट करती है, साथ ही प्राचीन, पारम्परिक मानसिकता को भी चित्रित करती है ।

नीलू अपने परिवार के साथ एक मकान, जिसमें पाँच कमरे हैं, रहती है । माँ के बीमार रहने से नीलू पर पूर्ण कार्य की जिम्मेदारी है । उसे पाँचों कमरों में घूम-घूम कर कार्य करना पड़ता है, जिससे वह थक जाती है, वह व्यवस्था लाना चाहती है, परन्तु कर नहीं पाती । नीलू बुद्धि की धनी है, सभी कार्य करने के बावजूद एम0ए0 प्रथम श्रेणी, द्वितीय स्थान में पास करती है ।

नीलू नौकरी बाहर रहकर करना चाहती है, साथ ही वह अपनी पढ़ाई भी जारी रखना चाहती है, नीलू की नियुक्ति दिल्ली महाविद्यालय में हो जाती है, पिता अत्यधिक प्रसन्न हैं, परन्तु परिवार के अन्य सदस्य अत्यन्त दुःखी हैं, कारण कि घर का काम कौन करेगा ? नीलू को दिल्ली में उसके मन माफिक एक कमरा जिसको उसकी सभी आवश्यकताएं समाहित हैं, मिल जाता है, कार्य जो वह करती थी, उसके लिये कालेज से ही नौकर की व्यवस्था है । अतः मनोवांछित रास्ते पर बढ़ती हुयी नीलू के दिल में घर के प्रति कोई लगाव न रहकर सिर्फ कर्तव्य भावना रह गयी थी ।

चार साल में पी-एच0डी0 की डिग्री हासिल के साथ ही लेखों, भाषण, परिचर्चा द्वारा प्रशंसा प्राप्त की । अब उसे कमरे का अकेलापन खलने लगा । उसकी मुलाकात श्रीनिवास से हुयी, वह नीलू के लिये जयपुर

छोड़कर दिल्ली आ गया । नीलू उसी के साथ फ्लेट में रहने लगी । श्रीनिवास का व्यवसाय काफी बड़ा होने से वह उसमें व्यस्त रहता । नीलू बोर होने लगी, जिससे वह श्रीनिवास के साथ कारोबार में हाथ बँटाती । एक दिन वह कुछ लिखने की सोच रही थी । श्रीनिवास बाहर से आया तो काफी उत्साहित था । वह और व्यवसाय बढ़ाना चाह रहा था । नीलू के कागजात पेपरवेट के नीचे फरफराते रहे ।

मन्नू जी प्रस्तुत कहानी में नीलिमा के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि किस प्रकार नारी पति की इच्छा के लिये अपनी इच्छाओं का दमन कर देती है, उसका अपना अस्तित्व, व्यक्तित्व हमारी पारम्परिक मान्यताओं के सामने तुच्छ जान पड़ता है । वह बुद्धिजीवी प्राध्यापिका बनना चाहती है, पर पति की इच्छा के कारण उसका कारोबार संभालना उसका पहला कर्तव्य बन जाता है और अपनी इच्छाओं का गला घोंटकर पति को खुश रखने के लिये उसके व्यवसाय में सहयोग प्रदान करती है ।

## ऊँचाई

मन्नू जी की 'ऊँचाई' कहानी एक विवादास्पद कहानी रही है । 'ऊँचाई' कहानी में आपने भोग्या हुआ सत्य प्रस्तुत न करके एक क्वेटेशन को अपनी रचना का माध्यम बनाया है । प्राचीन मूल्यों एवं नवीन जीवन-मूल्यों का टकराव इस कहानी में चित्रित है ।

शिशिर और शिवानी का दाम्पत्य जीवन बहुत सुखी है । बेटा प्रिटी हास्टल में रहता है । शिवानी की भेंट एक दिन पूर्व प्रेमी अतुल से होती है, वह अविवाहित है । शिवानी उससे कलकत्ता आने को

कहती है। वह मना कर देता है और उसे ही इलाहाबाद बुलाता है। शिवानी प्रिटी को होस्टल में छोड़कर अतुल से अकेले घर पर मिलती है। अतुल के बार-बार मना करने पर भी वह उसे शरीर सुख देकर ही वापिस लौटती है।

अतुल के साथ बीती इस घटना का शिशिर को चार माह बाद पत्र द्वारा मालूम चलता है। वह चाहता है कि जिस तरह विवाह के लिये दोनों की उपस्थिति अनिवार्य है, उसी प्रकार विच्छेद के समय भी दोनों को उपस्थित रहना चाहिये। वैसे शिशिर चाहता है कि शिवानी माफी माँग ले तो वह उसे क्षमा कर देगा। शिवानी ने माँफी न माँगते हुये इतनी ही बात कही कि मेरे जीवन में तुम्हारी जो स्थिति है, उसे अन्य कोई नहीं ले सकता, किसी के कितने ही निकट चाली जाऊँ, चाहे शारीरिक सम्बन्ध स्थापित कर लूं, पर मन की जिस ऊँचाई पर तुम्हें बिठा रखा है, वहां कोई नहीं आ सकता, किसी से तुम्हारी तुलना में करने में भी तुम्हारा अपमान है। शिशिर को भी अहसास हुआ कि वह उसके बिना रह नहीं पायेगा, वह शिवानी से सुलह कर लेता है।

मन्नू जी ने 'ऊँचाई' कहानी में अतीत के सम्बन्धों के कारण आयी टूटन के बाद पति-पत्नी सम्बन्ध में जो उद्विग्नता आती है, इसको चित्रित किया है। साथ ही पुरानी मान्यताओं को तोड़कर नये जीवन-मूल्य स्थापित करने का प्रयास भी शिवानी के माध्यम से लेखिका ने किया है।

(6) सप्तपर्णा :

'सप्तपर्णा' मन्नू भण्डारी द्वारा सम्पादित कहानी संग्रह है। इस कहानी संग्रह में मन्नू जी ने जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, जैनेन्द्र कुमार, यशपाल, डा० रांगेय राघव, भीष्म साहनी स्वयं मन्नू भण्डारी की प्रमुख कहानी है। प्रसाद की देवरथ, प्रेमचंद की 'सवा सेर गेहूं,' जैनेन्द्र कुमार की 'पत्नी,' यशपाल की 'दु:ख', डा० राघव की 'गूंगे,' भीष्म साहनी की 'भाग्यरेखा,' मन्नू जी की 'हार' कहानियां किसी न किसी उद्देश्य को गति देती हुयी हैं, इसमें परिवार-समाज व्यक्ति की अपनी व्यथा कथा है।

आरम्भिक कहानियों की कथा यात्रा में वेद, उपनिषाद, पंच तंत्र, पुराण की कहानी को लिया गया। इसी सन्दर्भ से व्यक्ति की अपनी कहानी 'आधुनिक हिन्दी कहानी जुड़ गयी। इंशा, अल्ला खां की रानी, केतकी की कहानी (1903) को हिन्दी की पहली कहानी मानते हैं। सृष्टि के आरम्भ में जब न समाज था, न जीवन में कोई व्यवस्था, तब पेट भरने के लिये और प्रकृति के उत्पातों से बचाने के लिये मनुष्य को बड़ा संघर्ष करना पड़ता था। इस संघर्ष के दौरान उसे चित्त के नये अनुभव होते होंगे, जो कभी उसे भयभीत कर देते होंगे, तो कभी पुलकित। कभी अपनी सफलता उसे प्रसन्न करती होगी, तो कभी अपनी हार उसे दु:खी और निराश। अपनी इन्हीं भय, पुलक, प्रसन्नता, दु:ख और निराशा की बातें वह दूसरों को सुनाता होगा। और केवल सुनाता ही नहीं होगा, भीतर ही भीतर चाहता होगा कि सुनने वाले भी कहीं न कहीं उन्हीं भावनाओं और अनुभवों से गुजरें, जिनसे वह गुजर चुका है यही तो कहानी कहनी पड़ी, सुननी पड़ी।[1]

---

1- संपादक मन्नू भण्डारी, 'सप्तपर्णा' कथा संग्रह- कहानी का जन्म कहानी की यात्रा,' पृ०

भारतेन्दु काल में हिन्दी कहानी का रूप स्थिर नहीं था। इस समय की अंबिका दत्त व्यास कृत कथा कुसुम कालिका (1988) राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद कृत 'वामा मनोरंजन' (1886), चंडी प्रसाद सिंह कृत 'हास्य रत्न' (1886), इन सबकी रचनायें लोक-कथाओं, इतिहास, पुराण पर आधारित नीति और हास्य प्रधान कथायें हैं, जो कथात्मक रोचक शैली में लिखी गयी। कुछ तो इन्हें निबन्ध मानते हैं। हिन्दी कहानी की सही भाग तो सन् 1900 में ही प्रारम्भ हुआ। पं०रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास में कुछ मौलिक कहानी के नामोल्लेख किये हैं, जिनमें पं० किशोरी लाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' (1900), माधव प्रसाद मिश्र की 'मन की चंचलता' (1901), पं० रामचन्द्र शुक्ल की अपनी कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903) जयशंकर प्रसाद की 'ग्राम' (1911), इसके साथ सन् 1907 में बंग महिला की दुलाई वाली। कुछ का कहना है कि माधव राव सप्रे की 'टोकरी भर मिट्टी' पहली कहानी है।

हिन्दी की साहित्यिक पत्रिका 'सरस्वती' एवं 'इंद्र' ने कहानी के रूप को एक निश्चित धरातल दिया तथा कई एक कहानी उस समय सामने आयी, जिसमें चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद ने एक दिशा दी। जिसमें मात्र तीन कहानी चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की महत्वपूर्ण है। प्रेम-कर्तव्य, भावना और बलिदान की कहानी, जिसमें व्यक्ति मृत्यु के समय जो सोचता है, उसमें उसका अपना ही जीवन है, 'उसने कहा था,' कहानी यथार्थ के सही धरातल पर लिखी गयी सजीव स्मृति शैली की महत्वपूर्ण कहानी है। यह एक कटु सत्य है कि प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद जैसे कथाशिल्पी ने साहित्य को एक नई दिशा दी है। प्रेमचंद ने आसपास का अपना संसार था तथा जयशंकर प्रसाद के पास भावनात्मक संसार ला, जिसे कहानी में पिरो दिया। इस

कथा संग्रह में मन्नू जी जयशंकर प्रसाद की कहानी ' देवरथ,' प्रेमचन्द की ' सवा सेर गेहूं,' जैनेन्द्र कुमार की ' पत्नी,' यशपाल की ' दु:ख,' डा० रांगेय राघव की ' गूंगे ', भीष्म साहनी की 'भाग्यरेखा,' मन्नू जी की स्वयं की ' हार ' कहानी है।

## देवरथ

बहुमुखी साहित्यिक प्रतिभा के धनी जयशंकर प्रसाद की कहानी ' देवरथ ' में क्षोभ और पीड़ा से निकला सुजाता का यह वाक्य ही इस कहानी का मूल तथ्य है। " तुम्हारा धर्म-शासन घरों को चूर-चूर करके विहारों की समृद्धि करता है। सुजाता भिक्षुणी है, भैरवी है, तन-मन से संघ की सम्पत्ति है, देवताओं की वस्तु है। सुजाता की अपनी भावनाओं का कोई मूल्य नहीं है। इसका सारा का सारा कथ्य तथ्य, उत्तर बुद्ध काल का है। इसमें उस काल का वैभव, उत्थान और पराभव-अवसान भी है। सारे भारत में बौद्ध धर्म का बोलबाला, जगह-जगह, बिहार और संघ बने हैं। आर्य मित्र और सुजाता के स्नेह की धुरी इस कहानी का केन्द्र-बिन्दु भी है। आर्य मित्र की वाग्दत्ता पत्नी किसी प्रकार विहार में लायी गयी, तथा भैरवी बना दी गयी। धर्म की आड़ में स्थविर की भोग्या। आर्य मित्र की सुजाता को खोजता-खोजता बौद्ध भिक्षु बनकर नील विहार पहुंच जाता है। उसकी सुजाता से भेंट जब होती है, जब वह बीमार है। आर्य मित्र बार-बार सुजाता को निकल जाने का आग्रह करता है, वह अपने प्रेम और भावनाओं का वास्ता देता है, मगर वह यही कहती है " आर्यमित्र तुमने विलम्ब किया। मैं तुम्हारी पत्नी न हो सकूंगी। " सुजाता अपने को आर्य मित्र के योग्य नहीं समझती। देवरथ को आततायी और नृशंस व्यवसाय के रूप में चित्रित किया है।

आर्यमित्र और सुजाता के प्रेम पर हमेशा स्थविर की काली छाया ही रहती है। आर्यमित्र के प्रति सुजाता के प्रेम और समर्पण को महा स्थविर स्वीकार नहीं करते तथा उसे मृत्यु दण्ड देता है। सुजाता इससे दु:खी होकर अपने को देवरथ के नीचे अर्पण कर देती है। जीवन का यह अन्त भले प्रखर न हो पर आत्म सम्मान के लिये सुखद है। सुजाता की निरीह मृत्यु पर प्रसाद जी कहानी का अंत नहीं करते वे यह सिद्ध कर देते हैं कि सुजाता कमजोर नहीं है, पर आत्म-सम्मान में जनसमूह में वह फांद जाती है, और एक दीपा में ही उसका शरीर देवरथ के भीषण चक्र से पिस जाता है, जो मात्र इस बात का संकेत है कि अब कुछ नहीं बचा। जो अत्याचार है, उसके फलस्वरूप ही काला पहाड़ नाम के आतंकवादी नेता की से विहारों को ध्वंस कर रही है।

जय शंकर प्रसाद की कहानी बुद्ध काल के एक हिस्से को चित्रित करती है, इसमें उस काल के वैभव, पराभव की दोनों स्थिति है।

## सवा सेर गेहूं

प्रेमचंद जी के साहित्य का प्रमुख स्वर है - समाजसुधार। कला का गुण मनोरंजन नहीं, सामाजिक सौदेश्यता है, यही मंत्र आपकी कला का आधार रहा है।[1] एक ओर प्रेमचंद में है, वह है, उनकी कहानी अत्यन्त सरल-सहज शैली है, उनकी भाषा भी उतनी सजीव, पारदर्शी है। मुहावरों का सटीक प्रयोग से भाषा का प्रभाव में एक जीवन है। यह भी सत्य है कि उनकी यथार्थ में रूप निखरा हुआ है।

कल -आजकल की जो समस्या है, बंधुआ मजदूरी की उसकी बात भले ही, जोर-शोर से उठायी जाती रही हो, पर कमजोर सी है।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- सं0मन्नू भण्डारी, 'सप्तपर्णा' कहानी संग्रह की प्रेमचंद की कहानी -

प्रेमचंद ने 'सवा सेर गेहूं' में भारतीय किसान जीवन का चित्रण किया है, जो एक सच्चाई है। 'सवा सेर गेहूं' में प्रेमचंद जी ने जिस समस्या को लिया है, वह न जाने कब से लेकर आज तक भारतीय किसान जीवन की एक भयावह सच्चाई है। आज भी बंधुआ मजदूर की बातें जोर-शोर से हैं, उसे अपने जीवन एवं परिवार की गुलामी पीढ़ी दर पीढ़ी के लिये गुलामी का दस्तावेज लिखना पड़ता है। धर्म और साहूकार बंधुआ मजदूर एवं किसान के जीवन की ऐसी बेड़ियां हैं, जिसे उसे यातना को सहन करने पर मजबूर करती है।

विप्र - लेकिन यह तो 60 रुपये ही हैं।

शंकर - हाँ महाराज इतने अभी ले लीजिये, बाकी मैं दो-तीन महीने में दे दूंगा, मुझे उरिन कर दीजिये।

विप्र - उरिन तो तभी होगे जबकि मेरी कौड़ी-कौड़ी चुका दोगे। जाकर मेरे 15 रुपये और लाओ।

शंकर - महाराज इतनी दया करो, अब सांझ की रोटियों का भी ठिकाना नहीं है, गांव में हूं, तो कभी दे ही दूंगा।[1]

किसान एवं महाजन के मध्य सम्बन्ध में शोषण की मानसिकता, जहाँ धार्मिक संस्कारों और विश्वासों का खोखलापन है, जिसमें निर्दय अमानवीयता है। किसान भागने पर भी भाग नहीं पाता, पिसता है, पिसता रहता है। साधू की सेवा के लिये उधार लिया गया 'सवा सेर गेहूं' सात साल में साढ़े पांच मन हो ही जाता है। यह पांच मन गेहूं साठ रुपये के कर्ज से बदलकर एक सौ अस्सी रुपये कर देता है। तब हारकर शंकर गुलामी मंजूर कर लेता है। शंकर की मृत्यु के बाद इस गुलामी को ढोता है।

---

1- 'सप्तपर्णा' प्रेमचन्द की कहानी 'सवा सेर गेहूं', पृ० 37

अपने प्रत्यक्ष अनुभव और वास्तविकता के अध्ययन से प्रेमचंद ने वही नतीजा निकाला जिसे मार्क्स ने वर्षों पहले बताया था । धर्म एक ऐसी अफीम है, जिससे विवेक और तर्क सुन्न हो जाते हैं, और आदमी पर लोक या आत्मा के सुख के लालच और भय के शिकंजे में शिकार की तरह कस जाता है ।[1] वास्तव में किसान, या मजदूर का आर्थिक एवं श्रमगत शोषण तो हो रहा है, उसके पीछे एक मानसिकता है जो धर्म की है, उसे छलनी किये जा रही है । प्रेमचन्द ने वास्तव में जीवन के उस यथार्थ को जो श्रम से जुड़ा है, 'सवा सेर गेहूँ' कहानी में अभिव्यक्त किया है ।

## पत्नी

जैनेन्द्र कुमार की कहानी में एक नयी दिशा है, तभी तो हमें उसमें दर्शन और मनोविज्ञान तो मिलता ही है, साथ ही जीवन के विषय की परिस्थितियों का चित्रण भावना के केन्द्र बिन्दु के आधार पर मिलता है । सुनंदा भारतीय मध्यवर्गीय पत्नी है । मध्यवर्गीय स्थिति में शिक्षा होना जरूरी नहीं है । फिर सुनन्दा तो निम्न-मध्यवर्गीय पत्नी है, उसकी शिक्षा तो ही नहीं । उसके अपने व्यक्तित्व में पति ही सब कुछ है । यह हम कहें कि उसकी चेतना और विचार का आधार पति ही है । सुनंदा यह जानती है कि उसका पति एक बड़े काम में लगा है । अ आ ई ई उसकी समझ में नहीं आती । परिवार में चौके का महत्व है, जो सनातन सत्य है, सुनन्दा जानती है ।

---

1- पूर्वोक्त, पृ0 32

"दो प्राणी इस घर में रहते हैं, पति और पत्नी। पति सवेरे से गये हैं कि लौटे नहीं और पत्नी चौके में बैठी है।"[10]

वह (सुनंदा) सोचती है - नहीं, सोचती कहाँ है? अलसभाव से वह तो वहाँ बैठी ही है। सोचने को है, तो यही कि कोयले न बुझ जायें।"[1]

पति (कालींदीचरण) की प्रतीक्षा करती है। कालिंदी के न आने का समय है न जाने का। वह रात के एक बजे घर दोस्तों को लेकर भी आ सकता है। पत्नी की दुनिया पति है। वास्तव में पत्नी घर की एक सुविधा है। पत्नी में अब खीज, मजबूरी, खालीपन को सरल ढंग से व्यक्त किया है। कचोटती है तो पात्र सुनन्दा को अकेलेपन और ऊब। जब पति घर आते हैं, दोस्त भी हैं तो उसमें उत्साह अधिक है। उत्साह की सी भाभी अपरिचित है।

जैनेन्द्र ने भारतीय नारी के आदर्श गुणों को सुनन्दा में चित्रित किया है, सुनन्दा का धैर्य, त्याग, समर्पण मानसी गंगा की तरह है। वास्तव में सुनन्दा का न कोई जीवन है अपना, न व्यक्तित्व ही। बिना जोर से बोले ही वह तेज-तर्रार युवकों के सामने अनजाने ही गांधीवादी सेवा समर्पण, त्याग और आत्मविसर्जन का कार्य करती है। जैनेन्द्र ने पत्नी के जीवन के यथार्थ को भोगते हुए यथार्थ से जोड़कर एक भावना को अवश्य सुनिश्चित किया है।

एक मित्र ने कहा -'अचार और है? अचार और मंगाओ यार।'

कालिंदी ने अभ्यासवश जोर से पुकारा -'अचार लाना भाई, अचार।' मानो सुनन्दा कहीं दूर हो पर वह तो बाहर लगी खड़ी ही थी। उसने चुपचाप अचार लाकर रख दिया।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- 'सप्तपर्णा' कथा संग्रह की जैनेन्द्र कुमार की कहानी 'पत्नी', पृ० 45

जाने लगी तो कालिंदी ने तनिक स्निग्ध वाणी से कहा - 'थोड़ा पानी भी लाना।' और सुनन्दा ने पानी ला दिया। पानी देकर लौटी और फिर बाहर द्वार से लगकर ओट में खड़ी हो गयी, जिससे कालिंदी कुछ माँगे तो जल्दी से ला दे।[1]

जैनेन्द्र जी ने यह सब इतने सहज और निर्व्याज ढंग से गूँथ दिया है कि ऊपर से बेहद ही सरल और स्वाभाविक लगने वाली यह कहानी जरा ध्यान देने पर अनेक परतें खोलने लगती है। इस दृष्टि से पत्नी कला ही कला का उत्कृष्ट उदाहरण है।[2] सहज एवं स्वाभाविक भाषा में जिसमें घरेलू बोलचाल की भाषा भी है। निश्चय ही जैनेन्द्र के अपनत्व का बोध कराती है।

## दुःख

प्रेमचन्द जी के बाद यशपाल जी की कहानी ने अपना जो परिचय दिया, उसमें जीवन के रोमांचकारी अनुभव है। आपने वर्तमान समाज की आर्थिक विषमता को, शोषण को और धार्मिक रूढ़ियों के प्रति अपनी लेखनी को कसकर पकड़े रखा तभी तो आपने यह स्वीकार किया कि पूँजीवाद ही समाज की अनेक बुराईयों की जड़ है। इन पूँजी वालों ने सारे साधनों पर कब्जा कर रखा है, साथ ही नीचे के लोगों का जीवन नरकमय बना दिया है।

दुःख की कथावस्तु में गरीबी को केन्द्र बिन्दु माना है। गरीबी से बढ़कर कोई बीमारी नहीं है, क्योंकि सारे दुःखों की जड़ तो गरीबी

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 52

2- वही, पृ0 44

ही है । "पर जिनके पास खाने-पहनने को पूरा है, वे कैसे छोटी-छोटी बातों को दु:ख का कारण मानकर दु:खी होते हैं । ऐसे लोगों को दु:ख की धारणा कितनी गलत और निराधार होती है । वे दु:ख से नहीं दु:ख की कल्पना से पीड़ित होते हैं ।"[1]

दिलीप ने पत्र खोला । पत्र की पहली लाइन में लिखा था - "मैं इस जीवन में दु:ख ही देखने के लिये पैदा हुयी हूँ ..... ।"

दिलीप ने आगे न पढ़, पत्र फाड़कर फेंक दिया । उसके माथे पर बल पड़ गये । उसके मुँह से निकला - काश । तुम जानती, दु:ख किसे कहते हैं ? तुम्हारा यह रसीला दु:ख तुम्हें न मिले तो जिन्दगी दूभर हो जाये ।"[2] यशपाल ने दु:ख कहानी के माध्यम से एक ओर बड़े सत्य की तरफ ध्यान दिलाया है जिसमें सुख-दु:ख आदमी की अपनी पहचान है । दु:ख वास्तव में आदमी को एक-दूसरे से जोड़ता है, अपना दु:ख हल्का करने के लिये वह दूसरे से व्यक्त करता है । कहानी के नायक दिलीप की पत्नी सिर्फ इतनी सी बात से दुखी हो जाती है कि वह उसकी मित्र (सहेली ) के साथ सिनेमा देखने चला गया । दिलीप भी पत्नी के दु:ख से दुखी कि उसे बाहरी दु:ख गरीबी का दिखाई देता है । सर्दी की रात में ठिठुरते हुये, खेलने-खाने की उम्र में ही सौदा बेचने वाले लड़के का दु:ख । दु:ख की परिभाषा तो हर जगह दिखाई देती है । आम आदमी का दु:ख कहीं न कहीं है, पर उसमें अपनत्व तब आता है जब वह उसे अपने आप ही किसी खास को व्यक्त करता है, जीवन का यह सत्य यशपाल ने भोगा है, तथा दु:ख कहानी में व्यक्त भी किया है ।

---

1- यशपाल, 'दु:ख,' ( मन्नू भण्डारी द्वारा संपादित - सप्तपर्णा ), पृ० 55

2- वही, पृ० 63

" लड़का नंगे पैर गली के कीचड़ में छप-छप करता चला जा रहा था । दिलीप को कीचड़ से बचकर चलने में असुविधा हो रही थी । लड़के की गति को कम करने के लिये दिलीप ने फिर प्रश्न किया, तुम्हें जाड़ा नहीं मालूम होता ?

लड़के ने शरीर को गरम करने के लिये चाल और तेज करते हुये उत्तर दिया, नहीं । "

दिलीप ने फिर प्रश्न किया - ' जगतू की माँ क्या करती थी ? '

लड़के ने कहा - ' जगतू की माँ स्कूल में लड़कियों को घर से बुला लाती थी । स्कूल वालों ने लड़कियों को घर से लाने के लिये मोटर रख ली है, उसे निकाल दिया । "[1]

लेखक का मुख्य उद्देश्य दुःख की ऐसी अभिव्यक्ति से है, जो कहीं न कहीं, किसी न किसी जगह अवश्य दिखाई देती है । दुःख के लिये मनुष्यता की सभी दीवार एक जैसी नहीं है । दुःख का साक्षात्कार कभी भी देखा जा सकता है । यशपाल ने इस कहानी में इसी बात पर अधिक जोर दिया है कि यह सारा विश्व ही सुख-दुःख की पहचान का एक हिस्सा है ।

## गूंगे

डा० रांगेय राघव ने मानव की मूल संस्कृति को एक पहिचान के रूप में प्रस्तुत किया है । यह समस्या विश्वव्यापी है । इस समस्या का आधार सीधा-साधा है कि हम मानव को पहिचान में भूल न करें । हर इंसान किसी न किसी रूप में गूंगा, बहरा या अपंग है, पर किस उम्र में?

---

1- पूर्वोक्त, पृ० 60

यह एक प्रश्नचिन्ह सा लगा हुआ है । इसलिये उनके व्यक्तित्व-कृतित्व एवं चरित्र में एक दृष्टि डाली जानी चाहिये ।

डा0रांगेय राघव की माँ कन्नड़ और पिता तमिल थे । पूर्वज तिरुपति के मंदिर से जुड़े होने के कारण भरतपुर राज्य (वैर ) में राजगुरु के रूप में आ गये । उन्होंने ब्रज जनपद और राजस्थान के जीवन पर प्रमाणिक कहानी - उपन्यास लिखे । मातृभाषा हिन्दी होने के बावजूद डा0राघव का तमिल एवं संस्कृति पर उनका पूर्ण अधिकार था । उन्होंने अपने छोटीसी लेखनावधि में 125 से अधिक पुस्तकें लिखी हैं । सूर, तुलसी, कबीर की जीवनियाँ उपन्यास में चित्रित की हैं । उन्हें मानव एवं भारतीय संस्कृति से पूरा-पूरा लगाव है, यही कारण है कि उनका साहित्य इससे भरा पड़ा है ।

डा0रांगेय राघव के रचना-क्षेत्र की तुलना हिन्दी में केवल राहुल सांस्कृत्यान से और उनके मानसिक जगत की समता जयशंकर प्रसाद से ही की जा सकती है । वे अत्यन्त कुशल चित्रकार और मधुर गायक थे । शैली के ओज और भाषा के प्रवाह के कारण वे हिन्दी में सदैव याद किये जायेंगे।"[1]

शारीरिक अपूर्णता के प्रति करुणा मन में आना सहज है । इससे व्यक्ति की बात को समझना भी एक समस्या है । इस समस्या के साथ मानवीय संवेदना अवश्य जुड़ी रहती है ।

" जन्म से ब्रज बहरा होने के कारण वह गूँगा है । उसने अपने कानों पर हाथ रखकर इशारा किया । सब लोगों को उसमें दिलचस्पी

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- 'सप्तपर्णा', कथा संग्रह की डा0रांगेय राघव की 'गूँगे,' पृ0 64-65

पैदा हो गयी, जैसे तोते को राम राम कहते सुनकर उसके प्रति हृदय में एक आनन्द-मिश्रित कुतूहल उत्पन्न हो जाता है।

चमेली ने अंगुलियों से इंगित किया - फिर ? मुंह के आगे इशारा करके गूंगे ने बताया - माई गयी।

जीवन का यह एक ऐसा सत्य है, जिसे झुठलाया नहीं जा सकता। संवादहीनता भी एक शारीरिक अवगुण है। इसके कारण असमानता विषमता और अत्याचार की सीमायें भी मानव को झकझोर देती है। जीवन क्या है ? इस सम्बन्ध में आज भी एक प्रश्न चिन्ह है। मनुष्य के आचार-विचार में तो अन्तर है, उसकी अपनी मानसिकता है। प्रतीक से बात करना भले मानव के इतिहास पुराने पृष्ठ हों, पर उसमें आज जो अंतर है, उस पर ही राघव जी ने अपनी कहानी 'गूंगे' में दृष्टि दौड़ायी है। गूंगे के प्रति एक संवाद से मानव की मानसिकता के बदलाव का अहसास स्पष्ट नजर आता है।

'मक्कार, बदमाश। पहले कहता था, भीख नहीं मांगता, और सबसे भीख मांगता है। रोज-रोज भाग जाता है, पत्ते चाटने की आदत पड़ गयी है। कुत्ते की दुम क्या कभी सीधी होगी ? नहीं। नहीं रखना है हमें, जा तू इसी वक्त निकल जा ....... ।'[1]

बात इतनी सी नहीं उसके बाद का सोच फिर बदल जाता है जो हमदर्दी का अहसास कराता है।

आज दिन कौन है जो गूंगा नहीं है। किसका हृदय समाज, राष्ट्र, धर्म और व्यक्ति के प्रति विद्वेष से घृणा नहीं छटपटाता, किन्तु फिर

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ० 73

भी कृत्रिम सुख की छलना अपने जकड़ों में उसे नहीं फांस देती, क्योंकि वह स्नेह चाहता है, समानता चाहता है ।[1]

रांगेय राघव ने जीवन के यथार्थ की परतें एक के बाद एक खोली हैं । अच्छा बुरा तो इसी संसार में है, पर जो कुछ है, उसकी शारीरिक असम्पन्नता का आधार भी कुछ है । प्रतीक तो आप भी हैं, वे रहेंगे ।

भाग्यरेखा

भीष्म साहनी हिन्दी के गतिशील सामाजिक यथार्थ के लेखक हैं । देश-विभाजन के बाद लाहौर से दिल्ली आ गये । दिल्ली के एक महाविद्यालय में वरिष्ठ प्राध्यापक के रूप में कार्यरत रहकर, जीवन का एक महत्वपूर्ण भाग साहित्यचिन्तन में लगा रहा । सात वर्ष तक मास्को में रहकर, उन्होंने टालस्टाय की रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद भी किया । जीवन में आस्था को उन्होंने अधिक महत्व दिया है । साम्यवादी विचारधारा उनके लेखन में जीवंत है । दलित-शोषित वर्ग के प्रति गहरी चिन्ता के साथ वर्तमान जीवन की विसंगतियों और अनुभूतियों का चित्रण उनके साहित्य में बिखरा पड़ा है, ऐसा लगता है कि उन्होंने यह जीवन निकट से देखा-परखा है । साक्षात् भी किया है । मध्यवर्ग के दिखावे के प्रति उनकी अभिव्यक्ति अनुभूति के आधार पर है, जो उनकी कथा क्रम में स्पष्ट दिखाई देता है ।

जब मेरी नींद टूटी तो मेरे नजदीक धीमा-धीमा वार्तालाप चल रहा था ।

---

1- पूर्वोक्त, पृ0 74

यहाँ पर भी त्रिकोन बनती है, जहाँ आयु की रेखा और दिल की रेखा मिलती है। देखा ? तुम्हें कहीं से धन मिलने वाला है।

मैंने आँखें खोलीं। वही दमे का रोगी घास पर बैठा, उंगलियाँ कटे हाथ की हथेली एक ज्योतिषी के सामने फैलाये अपनी किस्मत पूछ रहा था।

"लाग लपेट वाली बात नहीं करो, जो हाथ में लिखा है, वही पढ़ो।"[1]

भाग्यरेखा के विषय में मरीज बारबार ज्योतिषी से जिद् कर रहा है, फिर देख हथेली, तू कैसे कहता है कि भाग्य रेखा कमजोर है ? और फिर बाएं हाथ से छाती को थामे जोर-जोर से खांसने लगा।[2]

भाग्य रेखा कहाँ है ? इस विषय में हर आम व्यक्ति जानता है। फिर भी भविष्य के विषय में उसकी माथापच्ची है, जबकि भीष्म या अन्य आम आदमी अच्छी तरह जानता है कि खांसी और दमे का एक विशेष अर्थ दिया है बेकारी, लाचारी और अपंगता। वह एक शारीरिक बीमारी नहीं, बेकारी और आर्थिक असहायता की सामाजिक बीमारी है। यह तो जीवन की मात्र एक ऐसी ठहरी स्थिति है जिसका मुकाबला करना पड़ता है। आम आदमी में मजदूर की स्थिति तो इससे कहीं गुना अधिक खराब है, जबकि उसकी मशीन से उसकी उंगलियाँ कट गयी हैं। वास्तव में इस गरीब मजदूर की जिन्दगी में बीमारी भी जो दमे की है, उसे गरीबी की ओर बढ़ा देता है। वास्तव में एक ऐसा यथार्थ जीवन जिसे लेखक ने देखा है, उसकी सहज,सरल अभिव्यक्ति भाग्यरेखा के रूप में की है कि गरीब की भाग्यरेखा ज्योतिषी से नहीं जानी जा सकती, वह तो प्रत्यक्ष दिखाई देती है।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

## हार

मन्नू भण्डारी की कहानी 'हार' सप्तपर्णा में उनकी अपनी कहानी है, जिसमें उन्होंने स्त्री की शिक्षा, समानता, स्वतंत्र चिन्तन को आधार मानकर लिखी है। जनतंत्र और चुनाव, इस चुनाव में, आये दिन भाई-भाई, बाप-बेटे, और पति-पत्नी एक ही सीट के लिये अपना अलग मोर्चा लिये खड़े हैं। पति-पत्नी दो अलग अलग विरोधी विचारधाराओं वाली दो पार्टियों से जोड़े हैं तथा चुनाव क्षेत्र में सीधा उनका मुकाबला है। जबकि सामान्य जीवन में एक-दूसरे से प्यार करते हैं तथा एक-दूसरे की भावनाओं को समझते हैं, पर राजनीतिक मंच पर इन भावनाओं एवं प्यार का कहीं लेखा-जोखा नहीं है।

दीपा, शेखर की पत्नि है। वह परिवार के साथ जो लिहाज शब्द है, उससे जुड़ना नहीं चाहती, वह इसे कमजोरी का हिस्सा मानती है, इसे सिद्ध करने के लिये कभी-कभी पति की सीमा को ध्यान नहीं देती, वह पार्टी के प्रति अधिक वफादार बन जाती है। जबकि उसका पति शेखर स्त्री-पुरुष शिक्षा के प्रति उदार है। वह चाहता है कि स्त्री पुरुष को अपनी बात रखने का पूरा-पूरा अधिकार है। वास्तव में इस कहानी में स्वतंत्र व्यक्तित्व और मानवीय सम्बन्धों का द्वन्द्व है जिसमें नारी के अन्तर्विरोधी चेतना का मनोविज्ञान स्पष्ट उतरकर सामने आता है। ''सौ रुपये ? रुपये तो मेरे पास अब बिल्कुल नहीं हैं, जो कुछ जेवर थे, वह भी दे आयी।''

''कहीं से इंतजाम भी नहीं कर सकती। ? इतनी जरूरत है कि क्या बताऊं ? रुपये न होने से बड़ी गड़बड़ हो जायगी।''[1]

---

1- 'सप्तपर्णा', कहानी संग्रह की -'हार', पृ0 94

पत्नी दुर्बलता के प्रति समर्पित हो जाने वाली दीपायें पराजय के साथ-साथ दृढ़ता तथा विजय का रूप भी दिखाई देता है। चुनाव के एक दिन पहले छिपकर दीपा चुनती है, शेखर अपने मित्र से कह रहा है :

"इसी का तो गम है भाई, मेरी जीत की संभावना ही मुझे खिन्न बनाये दे रही है। सोचता हूँ मैं हार गया तो लज्जा को सह लूँगा। पुरुष हूँ और सहने का आदी।। पर जीत गया तो दीपा का क्या होगा ? तुम देखते हो, पगली हो गयी है, इसके पीछे। 'वह हार का धक्का बर्दाश्त नहीं कर सकेगी और सच पूछो तो इसीलिये चाहता हूँ कि मैं हार जाऊँ।"[1]

इतनी बात दीपा के लिये "पुरुष हूँ और सहने का आदी" चुनौती है। क्या नारी बर्दाश्त नहीं कर सकती। अपने आपको पहिचानने के लिये वह अपना वोट पति को डालती है।

मन्नू जी ने नारी के मनोविज्ञान को उसकी कमजोरी से जोड़ा है कि नारी का अहम ही तो उसे यह सब कुछ करने का साहस देता है, तभी तो अपने बात को बात रहे, यही वह सब कुछ करभी देती है।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ० 96

# अध्याय : प्रथम

## साहित्य ( विशेषत: कथा साहित्य ) में मनोविज्ञान

## हिन्दी उपन्यास और कहानी समीक्षा

## अध्याय : प्रथम

## साहित्य ( विशेषत: कथा-साहित्य ) में मनोविज्ञान हिन्दी उपन्यास और कहानी समीक्षा

साहित्य में जिसमें कथा साहित्य, जो कथावस्तु के एक अंग से जुड़ी है, पर विचार किया जावे, तब हम पायेंगे, कथावस्तु के मूल रूप को मनोविज्ञान ने काफी प्रभावित किया है, इससे रचनाकार की दृष्टि बदली है, यह सत्य है कि कथावस्तु उपन्यास में प्रथम रूप से है। हिन्दी कथा के साथ ही उपन्यास संरचना में जो बदलाव आया है, उसमें रचनाकार की अपनी मानसिकता है। "मनोविज्ञान ने उपन्यास की कथा-वस्तु में इतनी महान क्रांति उपस्थित की है कि उपन्यासों में उसका अस्तित्व नाममात्र का रह गया है। एक युग था, जब कथावस्तु ही उपन्यास की आत्मा होती थी, उसको सजानेने संवारने में ही उपन्यासकार उपन्यास के अन्य तत्वों की सहायता लेता था। किन्तु आज उसको अन्य तत्वों के निखारने के लिये ऐसा तोड़ा-मरोड़ा जा रहा है कि उसके पार्ट्स को जोड़-कर उसे समूचे रूप में देखना साधारण पाठकों के लिये एक समस्या बन गयी है।"[1] यही हालत कुछ कुछ कहानी की भी बन गयी है। कहानी में तो जीवन जगत के मध्य की दूरी का चिन्तन पक्ष ही बदल गया है।"[2]

जहाँ तक सारे कथानक की अन्विति, गठन, प्रवाह का प्रश्न है, वहाँ भी शिथिलता का दोष स्वीकार करने में मुझे कोई संकोच नहीं है। हाँ, इतना अवश्य कहूँगी, इसमें दोष हमारा नहीं, ऐसे प्रयोग में

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा०धनराज मानधने, हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास, पृ०136

2- रविवार, ( कहानी के नये आधार समीक्षा लेख)

इससे अधिक आशा रखना ही व्यर्थ है। हर अध्याय उपन्यास की क्रमबद्ध कड़ी कम और स्वतंत्र कहानी का प्रारम्भ अधिक लगता है।[1] यह बदलता हुआ आधार आज की युगीन चेतना ही है। निश्चित आधार पर बदलता हुआ हमारा वातावरण हमारे चिंतन का विषय बन गया है, जिसकी स्थिति का मूल्यांकन भी अब जरूरी है।

"एक सुनिश्चित ढाँचे में अनुभव को ढालने के बजाय उसे चरित्र-चित्रण, मूल्य संक्रमण और मानव स्थिति के प्रश्नों से जोड़कर प्रश्नों की खोजबीन का प्रयत्न किया गया है।"[2]

मनोविश्लेषण द्वारा मानसिक वृत्तियों में कुंठा, विद्रोह, वासना, प्रेम, शारीरिक भूख आदि का चित्रण, स्पष्ट किये जाने का प्रयत्न रचनाकार ने किया है। पहले उपन्यासों में वर्णन अधिक होते थे, अब चरित्र के साथ कथा का रूप जुड़ गया है। "वर्णन से घटना, घटना से चरित्र, चरित्र से समस्या, समस्या से व्यक्ति और व्यक्ति से मन, लगभग इस क्रम में उपन्यासों का विकास हुआ है।"[3]

जीवन की धुरी पर एक अकेला नहीं चल सकता, क्योंकि मन की धुरी बड़ी पैनी है। जीवन की घटनाओं के विश्लेषण में मानसिकता का बोझ हमारे सामने है। मूल अनुभव एवं विचार से कथा का विस्तार हुआ है। श्रीमती मन्नू भण्डारी ने अपनी रचना प्रक्रिया के सम्बन्ध में पांचजन्य नामक पत्र में लिखा है - "मेरे लिये लिखना दो तरह का होता है। एक

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'एक इंच मुस्कान,' (अपना वक्तव्य), पृ0 286

2- नरेन्द्र मोहन, 'आधुनिक हिन्दी उपन्यास,' पृ0 2

3- शैल रस्तोगी, 'हिन्दी उपन्यासों में नारी,' पृ0 131

वह जो मैं कलम लेकर कागज पर लिखती हूँ, और जो काफी अन्तराल के बाद ही सम्भव हो पाता है। दूसरा वह जो बिना कागज-कलम के दैनन्दिन कामों के साथ-साथ बैकग्राउण्ड म्युजिक की तरह मन की परतों पर निरन्तर ही चलता रहता है। बाहर वालों के लिये महत्वपूर्ण वह है, जो कागज पर लिखा गया है और उन तक पहुँच गया। लेकिन मेरे लिये तो 'मेरा मानसिक लेखन' ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके दौरान ही 'रा-मटेरियल' का वह भंडार जमा होता है, जिसमें से कुछ चीजें चुनकर, उन्हें काट-छाँट और तराश कर तैयार माल की तरह मैं बाहर ला पाती हूँ।''

'' मन्नू जी लौकिक पात्र एवं घटना से प्रभावित होती है और वह प्रभाव उनके चिन्तक मन-मस्तिष्क को मथता रहता है, उस मंथन से जब स्वानुभूति का नवनीत तैयार होता है, तभी वह कहानी के रूप में प्रकट होता है।'' यही कारण है कि उनकी कहानियाँ सजीव होकर सामान्य से बातें करने लगती हैं। लेखन उनका व्यवसाय नहीं है, अपितु अनुभूति और चिंतन का विस्फोट है।[1]

राजेन्द्र यादव ने लिखा है कि मन्नू के दिमाग में प्लाट मौलिक और सशक्त आते हैं। लिखने के पूर्व वह कई बार राजेन्द्र को सुनाती हैं। कहती भी जाती हैं कि मेरा प्लाट सुनकर तो तुम आत्महत्या कर लोगे, पर लिखती नहीं। लिखने का उसका अपना तरीका है। खाने की मेज पर बैठकर रसोई में उचित आदेश देती हुयी टिंकू को खेल में लगाकर पास बैठी हुयी, घर की सारी व्यवस्था देखती हुयी वह कहानी लिखती रहती हैं। ........ वैसे साँझ को नहा-धोकर, एकदम धोबी के धुले ~~कपड़द~~ कपड़े पहनकर बहुत अधिक चूने वाला पान खाते हुये, लिखना उसे सबसे अधिक

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- अनीता राजरकर. 'कथाकार मन्नू भण्डारी.' पृ० 13

प्रिय है ।[1]

साहित्य में मनोविज्ञान जिस परिधि से प्रवेश हुआ है, उसमें नारी-पुरुष के सम्बन्धों में अकेलापन एवं मानसिक तनाव रीति-रिवाजों, एवं अर्थ-व्यवस्था के कारण अधिक है ।

आज का पुरुष स्वार्थी अधिक है, यही कारण है कि नारी का तनाव बढ़ता चला जा रहा है । जीवन मूल्य में प्रेम के क्षेत्र में नैतिक दृष्टिकोण भी पहले जैसा नहीं रहा । आधुनिक युग में स्थिति में काफी बदलाव रहा है । स्त्री-पुरुष अलग-थलग के बाद भी जीना नहीं चाहते, वे एक ऐसे जीवन की तलाश में रहते हैं जहाँ उन्हें उनके हिसाब से सब कुछ मिल जाये ।

"कहानी और उपन्यास दोनों कथा-साहित्य की विधायें हैं, दोनों बाहर-भीतर के वास्तव को कहती है, पेश करती है या उजागर करती है, दोनों में कथानक, चरित्र-चित्रण, देश और काल की समस्याओं पर आधुनिकता ने सोचने के लिये बाधित किया है, लेकिन इनके ढंग अपने-अपने है ।"[2]

मनोविज्ञान धरातल पर पात्रों के चरित्र का निर्माण जब रचनाकार करता है, तब उसे परिवेश का ख्याल रखना पड़ता है । महानगर, नगर, देहात का बोध पात्रों के निर्माण में सहायक होता है । जीवन के प्रारम्भ से अन्त के मध्य की घटना का क्रम भी कोई न कोई आधार लिये होता है, जो शाश्वत है ।

---

1- राजेन्द्र यादव, 'औरों के बहाने,' पृ0 65

2- डा0इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिका और सृजनात्मक साहित्य,' पृ093

प्रेमचन्दोत्तर युग में लेखनी उठाने वाले कथाकार - यशपाल, जैनेन्द्र, भगवती चरण वर्मा ने मनोविज्ञान का आधार एक व्यक्ति विशेष के लिये नहीं लिया, क्योंकि उन्हें यह बात मालूम थी मनुष्य के व्यवहार के सम्बन्ध जैवकीय आधार भी है।

" By biological factors we mean those having to do in general with the genetic constitution of the human organism."

- Robert Bierstedt, The Social Order p.67.

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से व्यक्ति के व्यवहार का आधार तो मिलता ही है, साथ ही पात्रों के जीवन का आधार भी मिलता है। मनोविज्ञान या समाजशास्त्र कथा, उपन्यास के मूल में है। " अभी तक विजातीयता की शुरुआत उस काल से नहीं मानी गयी जब आदि मानव की पूछ बाहर से भीतर चली गयी और वह अपने कुदरती परिवेश से कट गया। अकेलेपन का बोध भी बहुत पुराना है।"[1]

अज्ञेय की कहानी गैंग्रीन या रोज में परिवेश पहाड़ का है। इसमें बोरियत की जो गहरी छाया इस पर मंडराती रहती है। परिवेश से कट जाने का जो ठण्डा अहसास है, घड़ियाल की मुनादी में अन्त के खुल जाने का जो बोध है। इसमें आधुनिकता का एक और स्तर उजागर होता है। कहानी में छाया शब्द को अनेक बार दोहराया गया है और हर बार इसका नया आयाम खुलता है, जो वास्तव की जटिलता को इंगित करता है।[2]

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- इन्द्रनाथ मदान, ' आधुनिकता और सृजनात्मक साहित्य,' पृ0 94

2- वही, पृ0 96

जीवन में एक रसता है, जिसका बोध आम आदमी को उसके आसपास मिल जाता है, कभी-कभी यह रसता जब उसे नहीं मिलती, तब संघर्ष शुरू होता है। कहानी की समीक्षा ने यह सिद्ध कर दिया। जब जब कोई घटना चक्र आया उसने जीवन को एक नया मोड़ दिया है, प्रेमचंद से आज तक की इस लम्बी यात्रा में कई बार रचनाकार को चिन्तन करना पड़ा होगा, पर यह निश्चित है कि वह भोगे हुये यथार्थ को नहीं छोड़ पाया और नयी कहानी ने जन्म लिया। इस सिल-सिले में डा०नामवर सिंह को बार-बार नयी कहानी की शुरुआत करनी पड़ी है, कमलेश्वर को इसे नित नयी कहानी कहना पड़ी है, मोहन राकेश ने तो इस मैदान को छोड़ दिया था, राजेन्द्र यादव ही इसमें डटने की कमजोर गवाही दे रहे हैं। इस तरह आधुनिकता के बोध को लेकर नयी कहानी का आन्दोलन उषा प्रियवंदा की कहानी वापसी के आधार पर बाकायदा चला गया। मन्नू भण्डारी ने तो इस सहयोग को यथार्थ से जोड़ा। तभी तो उनके हर पात्र आज के जीवन के आधार बन गये। सामंती वृत्ति जो पुरुष पात्र में थी, उसके प्रति उनका विद्रोह एक जीवंत उदाहरण है।[1]

आधुनिक पर्यावरण में रचनाकारों ने वर्तमान सन्दर्भ को एक नये रूप में देखा, समझा, जहाँ जीने की लालसा यथार्थ के धरातल पर की, विश्वास नहीं होता कि ऐसा सत्य जो जीवन में घट रहा था, उसे मनो-विज्ञान के आधार पर पात्रों के माध्यम से उतारा गया। समीक्षा के मापदण्डों ने इसे दूध का दूध पानी का पानी कर दिया। तभी तो धर्मवीर भारती, मोहन राकेश ने प्राचीन कथाओं को नया आवरण दिया। मन्नूजी ने पात्रों का जिस आधार पर चयन किया, उनमें सभी स्त्री-पुरुष कामकाजी

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिकता एवं सृजनात्मक साहित्य,' पृ० 97

है । शिक्षित होने के कारण इनकी समस्याओं का गृहस्थ जीवन से जुड़ने-टूटने का जो हिस्सा ही उनकी अपनी मानसिकता है ।

डा0धनराज मानधाने ने कामकाजी नारियों के सर्वेक्षण के आधार पर लिखा है -" यदि कोई पति यह मानता रहा कि नौकरी के बावजूद घर का सारा बोझ पत्नी उठाय, तब तो तनाव पैदा होगा ही । आज पत्नी को पत्नी, माँ और कामकाजी नारी की तिहरी भूमिका निभानी पड़ती है । इसीलिये उसके आचरण में जटिलता आ जाती है । उसे समझे बिना यदि पति उस पर अपनी रुचि को थोपने लगता है, उसका अनादर करने लगता है, तब संघर्ष आरम्भ होता है ।"[1]

उपन्यास में मनोविज्ञान का प्रारम्भिक स्पष्ट दर्शन 'गोदान' में है, जहाँ नयी दृष्टि है । 'शेखर एक जीवनी' अज्ञेय, जिसमें सहज जीवन का निरूपण किया गया, इसमें बहिन से रति की बात युगबोध की मानसिकता ही है । मोहन राकेश का 'न आने वाला कल', 'अँधेरे बन्द कमरे', नरेश मेहता का 'यह पथ बन्धु का', निर्मल वर्मा का 'वे दिन' श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी', राजकमल का 'शहर था शहर नहीं' रमेश बक्षी का बैसाखियों वाली इमारत, महेन्द्र भल्ला का 'एक पति के नोट्स', उषा प्रियंवदा का 'रुकेगी नहीं राधिका', श्रीकान्त का 'दूसरी बार', इसके साथ ही अन्य रचना-कृतियों का अपना महत्व है । मानसिकता कहीं कम, कहीं ज्यादा परिपक्व है, पर समस्या ज्यों की त्यों है, इसका निराकरण भी आवश्यक है, इससे उद्देश्य की पूर्ति होती है ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0धनराज मानधाने, 'साठोत्तर हिन्दी उपन्यासों में कामकाजी नारी,' 'संचेतना', पृ0 26

हिन्दी में कुछ उपन्यास रचना भी हैं, जिनमें फ्रायडीयन दृष्टि-कोण अपनाया गया है। वास्तविक जीवन अलग-अलग खण्डों में बँटा हुआ है, प्रेमचन्द जैनेन्द्र से लेकर अब तक के उपन्यासों में मनोविज्ञान क्षेत्र की पहिचान मानसिकता और उसके व्यवहारों से मानी गयी।

अंचल, डा०देवराज, राजेन्द्र यादव, नरेश मेहता, मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजकमल चौधरी, अमरकान्त, द्वारिका प्रसाद, योगेश गुप्त, राघवेन्द्र मिश्र, कान्ता सिंहा, तथा उषा प्रियम्वदा ने केवल मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के नारी पात्रों को उनकी मानसिकता और जीवन की परिस्थि-तियों में देखा गया है। इन उपन्यासकारों के नारी-पात्रों के यौन-व्यवहार के क्षेत्र को अमूर्त अभिप्रायों के विश्व में न ले जाकर गोचर विश्व की परि-स्थिति के भीतर ही देखने की कोशिश की गयी है। फ्रायड ने जिस मानसिक द्वैत के भीतर आदमी के व्यवहार को विभाजित कर दिया है, उससे हमारी वास्तविक समस्या का समाधान नहीं निकल पाता है।[1] जीवन के मापदण्डों को समझने के लिये एक व्यापक दृष्टि चाहिये। मन्नू भण्डारी ने इस दृष्टि को एक नया आधार दिया। यही कारण है कि जीवन के बदलते हुये मूल्यों को समझने के लिये नये आयाम की खोज की जा रही है, युगसापेक्ष ने इसे यथार्थ रूप दिया है।

आज की अधिकांश व्यवहारिक समीक्षायें इतिहास और मनोविज्ञान की संश्लिष्ट पद्धतियों को विकसित कर लिखी जा रही है और उनका एक सर्वथा स्वतंत्र सौन्दर्यशास्त्र निर्मित तथा विकसित किया जा रहा है, पुरानी पीढ़ी नयी पीढ़ी के कथा-साहित्य में मानव-चरित्र का विकास समय के जीवन मूल्यों के साथ हुआ है, जहाँ पाश्चात्य सभ्यता का पूरा-पूरा असर है। कुंठाग्रस्त, समस्या भी घटनाओं को एक नया मोड़ मिल

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा०राम विनोद सिंह, ' हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास में नारी चरित्र

रहा है। "इसीलिये नयी पीढ़ी के कथा-साहित्य में मानव-चरित्र की जगह व्यक्ति के कुंठाग्रस्त व्यक्तित्व का विश्लेषण प्रस्तुत किया जाता है। ऐसे उपन्यासों के केन्द्रीय पात्रों के कुंठाग्रस्त व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले तत्वों, घटनाओं तथा स्थितियों का सम्यक ज्ञान पा लेना ही,"[1] नयी पीढ़ी के लिये जो समस्या है वही रचनाकार की भी समस्या है।

मनोविज्ञान मानव को प्रतिक्रियात्मक जीव के रूप में मान्य करता है। मनोविज्ञान का आधार ही व्यवहार है। व्यवहार प्रतिक्रिया द्वारा निर्मित है, जहाँ उत्तेजनाओं के साथ सरल, साम्य भी है। मानव जीवन की समस्या का आधार पर उसका आचार-विचार व्यवहार ही है। डा० देवराज उपाध्याय का यह कथन -"हमने मनोविज्ञान के साथ समझौता तो किया है, परन्तु अपनी भूमि की एक इंच मिट्टी भी नहीं दी है। यह समझौता है, आत्मसमर्पण नहीं।"[2] मनोविज्ञान को निरपेक्ष होकर भी जाना जा सकता है, इसके लिये एक भूमि की आवश्यकता है। रचनाकार अपनी रचना के केन्द्रीय पात्र की मानसिकता का चित्रण उसकी जीवन स्थिति के अनुसार करता है। उसकी रचना में वह सब कुछ होता है, जिसमें घटना संकेत, प्रतीक स्वप्न, समस्या एक ऐसा आधार है जहाँ मानसिकता अपने आप जन्म लेती है।

"मानव की स्थिति क्या है ? इसके बारे में कुछ पता नहीं है। इस तरह उपन्यास में आधुनिकता का बोध उजागर होता है। इसमें अकेलेपन का जो बोध है, वह मध्यकालीन और छायावादी अकेलेपन के बोध से भिन्न है। मध्यकालीन बोध के अनुसार मानव आत्मिक स्तर पर अकेला है,

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ० 23

2- देवराज उपाध्याय, 'साहित्य का मनोविज्ञानिक अध्ययन,' पृ० 29

रोमांटिक बोध की दृष्टि से वह व्यक्ति के स्तर पर अकेला है।"[1]
यह सब कुछ हमें देखने को मिलता है, आधुनिकता के बोध में। निर्मल वर्मा का 'वे दिन', मोहन राकेश का 'अंधेरे बन्द कमरे', महेन्द्र भल्ला के 'एक पति के नोट्स', ममता कालिया का 'बेघर', कृष्णा सोवती का 'सूरज मुखी', इसके पहले बन्द मानसिकता, प्रेमचंद के 'गोदान' में, मेहता मालती के 'चुम्बन आलिंगन' में दिखाई देती है, जो सीमित थी, पर आज का खुला वातावरण कुछ खुलने की बात करता है।

आज का उपन्यासकार मनोविज्ञान की भाषा का पूरा-पूरा उपयोग कर रहा है। इसके लिये भाषा में शब्द कापनी तादाद में है, इसकी मजबूरी कुछ भी हो, पर प्रयोग सार्थकता से हुआ है।

प्रेमचंद के पात्र मनोवैज्ञानिक नहीं बन सके, क्योंकि उनका पक्ष सामाजिक है, समस्या के आधार पर मनोवैज्ञानिक है। यही कारण है, उनके रचना के पात्र किसी आन्तरिक जगत से समस्या उत्पन्न नहीं करते। जैनेन्द्र, जोशी, अज्ञेय, राजकमल चौधरी ने अपने पात्रों के माध्यम से माँग को पहचानने का प्रयास किया है। जयशंकर प्रसाद ने समाज को एक नया रूप दिया, जिसमें भारतीय संस्कृति की झलक स्पष्ट थी।

व्यक्तित्व निर्माण में संगति और वातावरण का भी सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। उदयन अपने बालमित्रों की संगति से प्रभावित है। अपराध की ओर प्रवृत्त होता है। वह अपने मित्र नन्दन के घर पापड़ चुराने में पकड़ा जाता है, और नंदन की माँ द्वारा पीटा जाता है। "मैंने मुश्किल से अभी पापड़ उठाया ही है कि बड़ी भाभी देख लेती है और चीख पड़ती है - सामूजी पापड़। और काकी माँ चील की तरह

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिकता और सृजनात्मक साहित्य', पृ0 172

झापट मारती है और मेरे हाथों से पापड़ छीन लेती है। कान उमेठ देती है। मैं सर्वहारा बना उपेक्षित, तिरस्कृत, अपमानित वहीं जड़ बना खड़ा रह जाता हूँ।"[1] डांट खाकर तिरस्कृत में अपराध भावना बढ़ती है। इस प्रकार कथाकार की अपनी मूलवृत्ति रचना में मनोविज्ञान के आधार से जुड़ी नजर आती है। रचनाकार का जो दायित्व है कि मूल स्वर को स्पष्ट कर दे, वह पात्रों के माध्यम से ही पूर्ण करता है।

मनोवैज्ञानिक रचना में कथा तत्व के साथ पात्रों के चरित्र पर विशेष ध्यान दिया जाता है। पात्रों के चरित्र को रेखांकित करने के लिये पात्रों का चयन में मनोभाव का जो आयाम है, वह निर्माण का ही आधार है। जैनेन्द्र का परख, सुनीता, त्यागपत्र, कल्याणी, सुखदा विवर्त, व्यतीत और जयवर्धन, में पुरुष एवं नारी पात्रों का लेखा-जोखा का एक ऐसा वातावरण पैदा करता है, जहां पात्र का चरित्र अपने आप में नयापन लाता है, जो प्रारम्भ में अच्छा है, वह किसी घेरे का उलझाकर गलत सा दीखता है। इसी प्रकार अन्य उपन्यासकारों की रचनाओं में जोशी का लज्जा, सन्यासी, पर्दे की रानी, प्रेत और छाया, निर्वासित जिप्सी, सुबह के भूले और जहाज का पंछी में कुंठाग्रस्तता का जो हिसाब प्रस्तुत किया है, उसे लगता है कि जोशी जी मनोग्रन्थियों के कलाकार हैं। भले ही जोशी जी की शैली आत्म कथात्मक क्यों न हो, पर निराश जीवन का चित्र ढंग से उतारा है।

अज्ञेय के उपन्यासों में अचेतन मन में दमित अभिलाषाओं की चिंगारियां हैं, जो अकेले ही सब कुछ करना चाहती है। वास्तव में अज्ञेय एक व्यक्ति के आन्तरिक जगत में पैदा होने वाले अनेक व्यक्तियों के कलाकार हैं। इनका साध्य व्यक्ति का अचेता मन है जो 'शेखर एक जीवनी,' 'नदी के द्वीप,'

---

1- पूर्वोक्त, पृ0 28

और' अपने अपने अजनबी' में स्पष्ट है। 'शेखर एक जीवनी' के अध्ययन से यदि शेखर की जगह किसी भी शिशु को स्थापित करके देखें तो निष्कर्ष कुछ वैसा ही आवेगा। केवल बच्चे की मानसिक बनावट तथा पारिवारिक या सामयिक परिस्थिति में अंतर होने के कारण शेखर तथा उसकी जगह स्थापित शिशु की जीवनयापन पद्धति में थोड़ा अन्तर आ जायेगा। शेखर के निर्माण में भय, वासना तथा अहम् का योगदान है। ऊंचे लेटरबक्स पर बैठकर दूसरे को साभिमान चिढ़ाना तथा डाकिये के उस पर से उतरने के लिये कहने पर उसके पांव की उंगलियों को कुचलते हुए, मानों विजेता बनकर भाग खड़ा होना, उसकी अहंता को व्यक्त करता है। अजायबघर के नकली बाघ से भागना भय की प्रेरणा को निर्देशित करता है और किसी अनुचित वर्जित दृश्य को देखकर वैसी ही भावना का अनुभव करना उसकी काम प्रेरणा को।"[1] यथार्थ तो है, मनोविज्ञानिक धरातल की पृष्ठभूमि पर कामप्रेरणा से वशीभूत होकर शेखर अपने मां-बाप के वासनात्मक कार्यों को देखना चाहता है। ऐसी आदत आम बच्चों में एक जैसी होती है। केवल परिस्थिति-विभिन्नता के कारण ही तो वासनात्मक प्रेरणा के कारण ही शेखर बहन सरस्वती को सरस एवं शशि को आलिंगन में आबद्ध करना चाहता है। घटना चक्र के साथ मानसिकता का बोध रचना में पात्रों के माध्यम से स्पष्ट है।

साधारण, असाधारण और विशेष की अलग-अलग इकाइयों को मानव के व्यवहार क्षेत्र में निश्चित करना, उनसे व्यक्तियों की श्रेणी बताना, स्थितियों पर ही निर्भर है। अधिकांश रचनाकार समय की परिधि में सामाजिक व्यवहार की स्थिरता को दैहिक प्रतिमानों, मानसिक

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0सत्यपाल चुघ, 'प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों की शिल्प विधि', पृ0 253

असंगतियों से आज नापना चाहता है। वैसे प्रेमचंद ने स्वयं अपनी कथा रचना में इन परिस्थितियों को पात्रों से उत्पन्न किया है। भावात्मक विह्वलन मानसिक संघर्ष जीवन में उत्पन्न अनेक स्थितियों का लेखा-जोखा पात्रों के चरित्र से ही जुड़ा हुआ है। अंचल का 'उल्का,' देवराज का 'अजय की डायरी,' राजेन्द्र यादव का 'कुलटा,' मन्नू भण्डारी की 'बंटी', राजेन्द्र यादव का 'शह और मात', तथा 'अनदेखे अनजान पुल,' राजेन्द्र यादव तथा मन्नू भण्डारी का 'एक इंच मुस्कान,' मन्नू भण्डारी का 'स्वामी,' नरेश मेहता का 'डूबते मस्तूल,' धूमकेतु एक कृति, 'दो एकान्त' और 'नदी यशस्वी है,' मोहन राकेश का 'अन्धेरे बन्द कमरे', कमलेश्वर का 'डाक बंगला', राजकमल चौधरी का 'मछली मरी हुई,' अमरकांत का 'कटीली राह के फूल,' द्वारिका प्रसाद का 'भाभी बिगड़ेगी', योगेश गुप्त का 'छविनाथ,' राघवेन्द्र मिश्र का 'पानी बिच मीन पियासी,' कान्ता सिंहा का 'अतृप्ता,' उषा प्रियंवदा का 'रुकोगी नहीं राधा'। इन रचनाओं में वर्तमान को छूती विधा कथा है। जीवन में व्यवस्था का अभाव है। नयी स्थिति उसकी पुरानी व्यवस्था को रौंद कर निर्माण का स्वरूप को बनाती है। इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास 'पर्दे की रानी' में जो बोध है, उसमें पैनी दृष्टि है, सचमुच ही यह निरंजना के लिये आत्म-गौरव है, क्योंकि आत्म-ग्लानि भाव का अभव अचेतन की प्रतिक्रिया है। निरंजना के व्यक्तित्व की जटिलता का एक और पहलू है। वह अपने गुरुजी के प्रति भी लैंगिक दृष्टि से समर्पित है। इसीलिये पीड़ा तथा संवेदना की स्थिति में भी गुरुजी का सामीप्य उसके भोग को प्रबुद्ध करता है। उनके पाषाण सदृश व्यक्तित्व के भीतर गुरुजी को देखने मात्र से ही एक सरस स्त्रोत मुक्तवेग से प्रवाहित होने को आतुर हो जाता है।"[1]

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0राम विनोद सिंह, 'हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में नारी-चित्रण,' पृ0 270

जब कल्पना मेरे मन को एक विकल-पुलक से गुदगुदा रही थी कि गुरुजी बगल में सोये हुये हैं। क्यों इस कल्पना मात्र से मैं पुलकायमान हो रही थी, मैं नहीं जानती। तब तक मुझे पता नहीं था कि गुरुजी का सामीप्य मुझे इतना अधिक हर्षित कर सकता है।"[1]

यह अस्तित्ववादी मनोविज्ञान हमारी सत्ता के सन्दर्भ में मानसिक स्थितियों और व्यवहारों की व्याख्या करता है, उसमें किसी अमूर्त अर्द्ध-चेतन मानस के लिये कोई गुंजाइश नहीं रहती। 'सार्त्र' ने अपनी पुस्तक 'सायकालोजी आफ इमिजिनेशन' में इसकी बड़ी अच्छी रूपरेखा प्रस्तुत की है। देह और मन की समस्या को अपनी सत्ता से पूरे सन्दर्भ में देखने की जो पहल कमलेश्वर की इरा को अन्य रचनाकारों की नायिका से अलग-थलग करती है। इरा असामान्य नहीं है, वह बीमार भी नहीं है, स्थिति कुछ भी हो पर जीवन का सन्दर्भ में एक नया आधार तो है ही।

कहानी और उपन्यास, दोनों कथा साहित्य की विधायें हैं, दोनों बाहर भीतर के वास्तव को कहती है, पेश करती है या उजागर करती है, दोनों में कथानक, चरित्र चित्रण, देश और काल की समस्याओं पर आधुनिकता ने सोचने के लिये बाधित किया है, लेकिन इनके ढंग अपने-अपने हैं। इसी तरह दोनों का न तो इतिहास इतना लम्बा है, और न ही परम्परा इतनी सम्पन्न है, लेकिन हिन्दी कहानी में आधुनिकता का बोध जितने गहरे में है, उतना शायद हिन्दी उपन्यास में नहीं है। इसका साक्ष्य इनकी राह से गुजरकर मिल जाती है। ऐसा क्यों है?- का जबाब मनोविज्ञान या समाजशास्त्र का पंडित बेहतर दे सकता है। इतना साफ है कि हर विधा की अपनी लय होती है।"[2]

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- इलाचन्द्र जोशी, 'पर्दे की रानी,' पृ0 104

2- डा0इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिकता और कहानी,' पृ0 94

हम यदि कहानी को मनोविज्ञान की दृष्टि से देखें तब उसकी शुरुआत प्रेमचंद की कहानी 'पूस की रात,' 'कफ़न,' से मानी जा सकती है। कफ़न में जहाँ यथार्थ को एक नये धरातल से जोड़ा है, वह 'पूस की रात' की कहानी, मनोविज्ञान का जीता जागता आधार है, जहाँ समस्या ही जीवन के मन से जुड़ी कथा के रूप में है। तभी तो 'पूस की रात' में हल्कू नील गायों को खेत से हटाने के लिये नहीं उठता, जो बाहर की स्थिति है पर मुन्नी के पूछने पर बहाना - पेट का दरद है, यथार्थ सीमा के भीतर जीता है। अज्ञेय की कहानी 'रोज़', उषा प्रियवंदा की कहानी 'वापसी,' मन्नू भण्डारी की 'छाय' निर्मल वर्मा की 'लन्दन की एक रात', मोहन राकेश की 'मिस पाल', इन सबमें मनोविज्ञान का आधार आधुनिकता से जुड़ा है।

जबकि राजेन्द्र यादव की कथा आदमी के तनाव की स्थिति को कहती है। प्रतीक्षा, ढोल जहाँ लक्ष्मी कैद है, अभिमन्यु की आत्महत्या में यही सब कुछ है। जबकि मनोविज्ञान से रची कहानी के लिये आज की पत्रिकाओं का योगदान भी महत्वपूर्ण है। यह बात कमलेश्वर की 'जोखम' में स्पष्ट है। 'जोखम' का मुख्य पात्र जिस अभिशाप को सह रहा है, वह मृत्यु संत्रास का नहीं, व्यवस्था संत्रास का है। आज की आम आदमी संत्रास में ही जी रहा है।

कमलेश्वर की कहानी में मनोविज्ञानिक बोध को एक नई दिशा मिली, तभी तो कभी अकेलेपन के बोध में है, कभी अस्मिता का प्रश्नचिन्ह, कभी जीवन के ठहराव में विजातीय का बोध। खोई हुयी दिशायें, रुकी हुयी घड़ी, दु:ख के रास्ते, ये कहानी एक नई कहानी कहती है।

रामकुमार की कहानी सेलर, बीच की स्थिति रमेश बक्षी की कहानी 'तलघर,' 'सजा,' 'यह सही ही है' कि कथानक कहानियों के कुछ नहीं है, पर हरब तरह के रोग का शिकार है, मुहब्बत से दुकान तक, छींकने से शुरू होती कहानी में एक नया बोध ही मानसिकता है ।

मधुकर सिंह की कहानी उसका सपना, बदी उलझनों की कहानी दुर्ग, चौथा ब्राह्मण, वल्लभ सिद्धार्थ की कहानी महापुरुषों की वापसी, बन्द दरवाजे, इन सभी को कथाओं में जिस मानसिकता का जिक्र किया गया, इसमें सरकार की नीतियों से गहरा और तीखा असन्तोष है । पारिवारिक सम्बन्धों में तनाव, मशीनी औरियत की स्थिति ही है । जबकि पृथ्वीराज मोंगा की कहानी दिशाहीन के साथ यदि मंगलेश डबराल की कहानी आया हुआ आदमी में इसमें आदमी कुछ सालों के बाद उस औरत से मिलने वाला है, जिसके यहाँ उसकी अवैध संतान है । इस वातावरण की स्वीकृति समाज में नहीं मिलती । मन्नू भण्डारी ने वर्तमान सन्दर्भ की ऐसी कई समस्याओं को कहानी का आधार ही नहीं बताया, बल्कि उसे साक्षात् भी किया है । तभी तो उनकी कहानी में देशगत का बोध है । बाहों का घेरा, ऊंचाई, कमरे कमरा कमरे, संख्या के पार इस पर्यावरण का ही आधार है, जहाँ नयी मानसिकता का बोध है ।

मन्नू जी की कहानी 'घुटन', 'हार,' उस नारी वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है जिन्हें पति से समझौता करना पड़ता है । 'घुटन' में पत्नि को पति के विपरीत स्वभाव होने पर भी समझौता करना पड़ता है । हृदय में घुटन और पीड़ा लिये सम्बन्धों का बोझ ढोते जाना नारी की नियति बन गया है । न्याय की स्वतंत्रता की उससे मुक्त करने में विफल है । जबकि 'हार' की कथा में नारी के राजनीतिक विचारों का ताना-बाना बुन गया है । नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व का आभास तो मिलता है,

पर उसमें नारी हृदय की जो मानसिक कमजोरी प्रति के प्रति है, उसके कारण अपना मन पति को देती आती है। इससे स्पष्ट है कि नारी चाहे कितनी भी स्वतंत्र व्यक्तित्व वाली क्यों न हो, परन्तु पति के प्रति उसका अपना दृष्टिकोण काफी सीमा तक पुरातन ही है ।

अन्य रचनाकारों की तरह मन्नू जी ने 'वात्सल्य', 'वृद्धा अम्मा' के प्रति प्रेम को भोगे हुये यथार्थ के रूप में प्रस्तुत किया है, ऐसा लगता है कि मन्नू जी के कहानी के पात्र बिना वजह किसी प्रकार को ओढ़े नहीं हैं। 'मजबूरी' असीम वात्सल्य की प्रतीक 'वृद्धा अम्मा' के वात्सल्य व प्रेम को अभिव्यक्त करती है। नयी पीढ़ी के स्वार्थ व पुरानी पीढ़ी के प्रेम का जो स्वरूप आज है, उसका ही चित्रण मन की गहराई को छू पाता है। अनादि काल से चल रहे सम्बन्धों की गाँठ इतनी मजबूत है कि उसे आज के हिसाब से तोड़ना मरोड़ना मुश्किल है। यह सही है कि पुरुष वर्ग नारी में किसी प्रकार की कमी को स्वीकार नहीं कर सकता, जबकि नारी वर्तमान की कठोरता को देखकर भी प्रत्येक परिस्थिति में पुरुष का साथ निभाना चाहती है।

आज आर्थिक व सामाजिक परेशानियाँ अधिक हैं, न्यायालय की प्रक्रिया तो इतनी लम्बी तथा बकवास हो गयी कि एक बार का उत्साह उसे ठंडा बना ही जाता है। धन, प्रेम में अन्तर है। दाम्पत्य सम्बन्धों में प्रेम को स्वीकार तो किया जा रहा है, पर उसमें भी तनाव है। तनाव के मूल कारण कुछ भी रहे, पर एक निश्चित आकार-प्रकार अवश्य रहा। जीवन मूल्य की परिधि में जीवन मूल्य में परिवर्तन होना स्वाभाविक है, पर रचनाकार इससे कैसे पीछे रह सकता था।

मन्नू जी ने जीवन के तमाम सारे आकार-प्रकार में जीवन जीने के लिये हैं, इसे मानसिकता के रूप में स्वीकार किया है। यही सब कुछ तो उनके कथा-साहित्य में भरा पड़ा है।

## अध्याय : द्वितीय

## उपन्यासों में भेदक लक्षण और आलोच्य उपन्यास एवं कहानी

## अध्याय : द्वितीय

## उपन्यासों में भेदक लक्षण और आलोच्य उपन्यास एवं कहानी

हिन्दी उपन्यास में और समकालीन हिन्दी उपन्यास में इसे किस तरह पहचाना जाय या किसी कसौटी पर इसे परखा जाय ? इस पर गहरा चिन्तन पश्चिम में किया गया है और किया जा रहा है । यह चिन्तन कभी उपन्यास में कभी अन्तर के बोध को लेकर है, कभी उद्देश्य को लेकर है । आजादी के पहले की कथा, उपन्यास की भले ही ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर रही हो, पर उसमें रोमांटिज्म की स्थिति थी, जो कि काव्य के धरातल पर स्पष्ट है । प्रेमचंद ने उपन्यास कथा को जो मौलिकता दी, उसमें ग्रामीण एवं शहरी जीवन की झलक यथार्थ की सीमा में होकर मर्यादित ढंग से आयी है, जहाँ रोमांटिज्म स्पष्ट है । 'गोदान,' 'गबन,' की कथायें भी इसी पृष्ठभूमि को छूती हैं । जैनेन्द्र ने 'त्यागपत्र' के माध्यम से जो नयापन दिया है, उससे लगता है कि व्यक्ति, प्रेम, समाज, परिवार का संघर्ष समस्या प्रधान अवश्य रहा होगा । "आधुनिक हिन्दी साहित्येतिहास में उपन्यास और कहानी, अपने रचना-संयोजन के कारण अधिक जटिल ख्यातिलब्ध और समृद्ध दिशायें हैं । समसामयिक साहित्य की बौद्धिकता तथा निर्वैतिकता के उभरते हुये चेहरे और मिजाज को आधुनिक उपन्यासों के परिदृश्य में बड़ी ही सहजता एवं स्पष्टता के साथ रेखांकित करने का प्रयास किया जाता रहा है । इससे जहाँ एक ओर तथ्यों की दुनिया सिमटकर छोटी हो गयी है, वहाँ शिल्प-संयोजन में प्रयोग बहुलता के कारण विविधता आयी है । उपन्यासों में पात्रों की संख्या कम की गयी, परन्तु उन्हें उनके व्यापक जीवन संदर्भ एवं मानसिकता में देखने-परखने की चेष्टा भी

की गयी है ।''[1] इससे यन्त्रयुग में चरित्र विस्तार एक नये आयाम के रूप में हुआ तथा यथार्थ भी भोगा हुआ सामने आ गया ।

इधर उपन्यास की कथा का संयोजन कुछ बदला है । भाई राजेन्द्र यादव ने 'शह और मात' में कथा तत्व से अधिक ध्यान शिल्प विधान पर दिया । यह उपन्यास डायरीनुमा शैली में है । इस उपन्यास में पत्रात्मक तथा आत्म-कथात्मक शैली भी कहीं-कहीं है । जबकि 'अनदेखे अनजान पुल' यादव जी के सभी उपन्यासों में शिल्प संगठन तथा मानसिक विश्लेषण की दृष्टि से सफल हैं । यह भी एक यथार्थ है कि एक कुरूप नारी के मानसिक प्रतिघातों का इतना सूक्ष्म विश्लेषण हिन्दी उपन्यास में है ।

सामाजिक नैतिकता के पीछे कानून का जितना बल होता है, उससे अधिक परम्परा, चलन और संस्कार का भी होता है, लेकिन सामाजिक गतिरोध के बीच निश्चित रूप से ऐसे मोड़ दिखायी पड़ते हैं जहाँ व्यक्ति की स्वतंत्रता इन नियमों को तोड़कर विद्रोही हो जाती है । ''शशि के पक्ष में लगभग यही भावना क्रियाशील है, उससे शशि की अनिच्छा बहुत भिन्न है । वह अनिच्छुक भी है, अप्रस्तुत भी है, और अपने को अन्यत्र का शिकार भी अनुभव करती है ।''[2] निश्चित रूप से शेखर के लिये मुक्ति की यह समस्या दैहिक भी है और समय के भीतर आकर धारण करने वाली सामाजिक भी ।

---

1- डा० रामविनोद सिंह, 'हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास,' भूमिका

2- अज्ञेय, 'शेखर : एक जीवनी,' द्वितीय भाग, पृ० 69

ठीक इसी आकार-प्रकार का उपन्यास 'अँधेरे बन्द कमरे' है, जिसका कथ्य का आयाम नये ढंग का है। जिसमें चरित्रों की संगति असंगति को लेकर बड़ी सूक्ष्मता से वर्णन किया गया है ।

हिन्दी कथा-साहित्य में यौन चरित्र का जो चित्रण है, उसमें सूचना संकेत और संयोग का स्थान महत्वपूर्ण है । राजकमल चौधरी ने अपनी पुस्तक 'मछली मरी हुयी' में लिखा है - असाधारण बनना कठिन नहीं है, साधारण बनना कठिन है । उपन्यास रचनाकारों ने जीवन के ऐसे महत्वपूर्ण पहलू को एक नया आधार दिया है, वर्तमान रचनाकार तो नये सन्दर्भ में जीवन का सापेक्ष लिख रहा है ।[1]

'लेकिन वह काँप रही थी,' 'तेज हवा में दीये की लौ की तरह,' लेकिन' परिन्दे,' 'लन्दन की एक रात' और' डेढ़ इंच ऊपर' में क्या रोमान्टिक बोध उजागर होता है या आधुनिकता का बोध, इसका जवाब कहानियों में खोजना बेहतर होगा । 'परिन्दे' कहानी में मौन संवेदना की आवाज को सुना गया है, और इसमें शायद रोमांटिक बोध को आँका जा सकता है, लेकिन आधुनिकता का बोध मानव की अनिश्चित और अज्ञात नियति में उजागर होता है - '' पक्षियों का बेड़ा धूमिल आकाश में त्रिकोण बनाता हुआ पहाड़ी के पीछे से उनकी ओर आ रहा था । लतिका और डाक्टर सिर उठाकर इन पक्षियों को देखते रहे । लतिका को याद आया, हर साल सरदी की छुट्टियों से पहले ये परिन्दे मैदानों की ओर बढ़ते हैं, कुछ दिनों के लिये बीच के इस पहाड़ी स्टेशन पर बसेरा करते हैं, प्रतीक्षा करते हैं, बरफ के दिनों की जब वे अजनबी अनजाने देशों में उड़ जायेंगे ।'[2] इस बात का सार्थक जवाब ये नहीं

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- राजकमल चौधरी, 'मछली मरी हुयी,' पृ015

2- डा0इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिकता और सृजनात्मक साहित्य,' पृ012

'रैन बसेरा' एक बोध का कार्य करता है, जीवन का मोह, विश्वास की परत, जीवन की लालसा से उपजी है। आज जो कुछ लिखा जा रहा है, छोटी-बड़ी लम्बी कहानी का रूप में भी एक यथार्थ बोध उद्देश्य की पूर्ति अवश्य करता है।

इसी प्रकार निर्मला वर्मा की कहानी बेटाटेल से लन्दन की एक रात तक पहुँची है। रोमांटिक बोध का जो बोध है, मात्र नयी कहानी के सन्दर्भ में हो सकता है। 'नयी कहानी' की शुरुआत की स्थिति कहाँ से माने, इसके लिये काल-विभाजन की आवश्यकता नहीं, जब परिवर्तित सन्दर्भ कहानी में शुरु हुये, वहीं से शुरु हो जाती है 'नयी कहानी', 'मिनी कहानी', 'लम्बी कहानी'। सन् 1970 के बाद इसका दौर बढ़ा है, जो सृजनात्मक साहित्य के लिये उपयोगी भी है, क्योंकि इसमें वह सब कुछ है, जिसकी हमें सम्भावना नहीं है।''[1]

हिन्दी कहानी में कवि कहानीकारों की खासी जमात है, जो पहले कवि हैं और बाद में कहानीकार, लेकिन वे रचना दोनों की करते रहे हैं, और कर रहे हैं। अज्ञेय, और श्रीकान्त की कहानी में आधुनिकता की पहचान हो चुकी है। मुक्तिबोध, सर्वेश्वर, रघुवीर सहाय, भारतीय और कुंवर नारायण ने आधुनिकता की चुनौती को अलग-अलग धरातल पर स्वीकारने की कोशिश की है और कोशिश इसलिये कहना पड़ता है कि अस्वीकार का स्वर भी इनकी कहानी में सुनने को मिल जाता है। मुक्तिबोध विपात्र और ब्रह्मराक्षस का शिष्य कहानियों में एक बुद्धिजीवी और एक कलाकार के तनाव, बेचैनी, छटपटाहट के माध्यम से आधुनिकता को एक ऐसे धरातल पर स्वीकारते हैं जो है और जो हो नहीं पाता के

---

1- डा०रामकृष्ण गुप्त, 'कहानी की पृष्ठभूमि,' परख समीक्षा, पृ०52

बीच तनाव की स्थिति का है।"[1] मोहन राकेश ने जहाँ एक ओर अपने उपन्यास अँधेरे बन्द कमरे में, पात्रों को सहज विषम स्थिति में प्रस्तुत किया है, वह वर्तमान सन्दर्भ ही है।

'अँधेरे बन्द कमरे' की नीलिमा, आत्म-विभाजित नारी पात्रों में एक है। उसके जीवन की असहजता परिस्थितियों की विषमता की उपज है। वह शिक्षित तथा रुचि सम्पन्नशील की नारी है, पर प्रतिक्रिया के कारण वह अपने में सन्तुलन नहीं बना पाती है। पति-विरुद्ध उसका आचरण भीतरी नहीं, बाहरी है। यदि भीतरी विषमता कहीं होती, तो उस पति के आमंत्रण पर विदेश नहीं जाती, जिसने उस पर अविश्वास किया उसे छोड़ दिया। इसलिये नीलिमा पति की निकटता बनाये रखना चाहती है। लेकिन उसके पति और उसकी बहन सत्या का प्रेमाकर्षण उसे व्यथित करता है। असहज बना देता है। पति के इस आचरण के विरुद्ध वह भी अपने स्वतंत्र व्यवहार से पति को व्यथित करने का प्रयास करती है। वह अनुभव करती है कि उसके भीतर जैसे कुछ अभाव है, वैसा नहीं है, जैसा हरवंश चाहता है। "तुम्हें मेरे अन्दर वह स्त्री नहीं मिल सकी जिसे तुम मन से प्यार कर सको। इसलिये तुम्हारा मन बहुत भटकता है। चाहे तुम किसी और को नहीं चाहते होओ, मगर कुछ और जरूर चाहते हो, वह कुछ जो तुम्हें मेरे अन्दर नहीं मिलता।"[2]

नीलिमा अपनी आन्तरिक विकलता को बाह्य प्रसाधनों द्वारा झुठलाना चाहती है। श्रृंगारित होकर पुरुषों को आकर्षित करके अपनी प्रतिक्रियात्मक वेदना को जीतना चाहता है। नीलिमा सिर से

---

1- डा०इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिकता और कहानी,' पृ० 109

2- मोहन राकेश, 'अँधेरे बन्द कमरे,' पृ० 131

पैर तक बहुत चुस्त कपड़े पहने थी, उसके बाल बहुत ढंग से बने हुये थे। और उसके चेहरे का मेकअप उस सारे वातावरण में बहुत अलग और बहुत विचित्र लग रहा था। उसके जीवन की असहजता, कटुता, उन्मुक्तता, स्वच्छन्दता, केवल पति व्यवहार की प्रतिक्रिया है। भीतर से वह सनातन पति-परायण है।[1]

इसके साथ पुराने तथा नये कहानीकारों के मध्य रचनाक्रम में, नये सन्दर्भ समय के अनुसार जुड़ गये हैं। अज्ञेय की कहानी गैंग्रीन या रोज में परिवेश पहाड़ का है। इसमें बोरियत की छाया, परिवेश से कट जाने का जो ठण्डा अहसास है, घड़ियाल की मुनादी में अन्त के खुल जाने का जो बोध है, कहानी में छाया शब्द कई बार आया है, हर बार नया आयाम खुलता है जो वास्तविकता की जटिलता को इंगित करता है। समकालीन कहानी में जो आन्दोलन है, उसमें प्रियवंश की कहानी 'वापसी', मन्नू भण्डारी की कहानी 'संध्या के पार', के साथ डा0नामवर सिंह को बार-बार नयी कहानी की कहानी कहनी पड़ी, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव ने भी इसे धीमे रूप से स्वीकार किया। वापसी में रोमांटिक टीस है, जबकि संध्या के पार में भोगा हुआ सत्य उजागर हो उठता है। " यही बात पुन: कहनी पड़ेगी, इस सबको पूस की रात या कफन, पाजेब, प्रेमचंद, जैनेन्द्र कहीं न कहीं कह चुके हैं, जो यथार्थ मनोविज्ञान का धरातल है, जिसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। धीरे-धीरे कहानी कही जाने वाली नये संदर्भ को चुनती रही। पाश्चात्य परिवेश का जो थोड़ा बहुत असर था, उससे भारतीय परिवेश प्रवाहित अवश्य हुआ, कहानी रचना धर्म में इसे धीरे-धीरे स्वीकार किया गया।"[2]

---

1- डा0राम विनोद सिंह, 'हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास,' पृ0 239

2- डा0रामकृष्ण गुप्त, 'कहानी की पृष्ठभूमि,' परख-समीक्षा, पृ0 102

मोहन राकेश की कहानी - ' मिस पाल,' कमलेश्वर की ' जोखम,' श्रीकान्त की कहानी, ' झाड़ी,' एक गवाही देती है । श्रीकान्त की कहानी में है और न हो सकने के तनाव को आंका जा सकता है । इनकी कहानी ' झाड़ी ' में इसका संकेत देती है - जब उसने फेंक दिया तो उसने पाया कि वह झाड़ी में जा पड़ा था, और कांटों से उसका शरीर छिल गया था । मगर वह दर्द से अधिक शर्म और शर्म से अधिक किसी भी कीमत पर न पार सकने की नियति पर रो रहा था । वह जान गया था - वह झाड़ी कभी लांघ नहीं सकेगा । अब कहानी में वह ने रोना भी बन्द कर दिया है । इनकी कहानी में आधुनिकता गहरे में धंस गयी है, लेकिन पहले की कहानी में कभी अनुभूति के क्षण का चित्रण है । कल ) तो कभी पुरुष और नारी में एक दूसरे पर विजय पाने की होड़ का ( परिणय ) । झाड़ी में अनास्था, एकाकीपन, मितली का बोध आधुनिकता को उजागर करता है ।''[1] इस प्रकार कवि की कविता, कहानी में मुख्य बात तो यही है कि दायरे से बाहर जाने का रास्ता नहीं है । जीवन का साक्षात् ही करा देना कहानीकार की अपनी पहिचान नये ढंग से होती है, हमारे मन में जो कुछ हो रहा है, उसको रचनाधर्मी किसी न किसी रूप में स्वीकार अवश्य करता है ।

राजकमल चौधरी की कहानी में आधुनिकता को सैक्स के परम्परागत मूल्यों को तोड़ने में आंका गया है । वह चाहे भूगोल का प्रारम्भिक ज्ञान हो या सामुद्रिक मदालसा सुन्दरम् हो या दाम्पत्य, लेकिन पिरामिड कहानी इन सीमाओं को लांघकर उन विकृतियों का चित्रण करती है, जो रसिक लाल और उनके परिवेश का अभिन्न अंग है । डा0 अवस्थी ने यह

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0इन्द्रनाथ मदान, ' आधुनिकता और कहानी,' पृ0 105

आरोप लगाया कि इस दौर की रचनाओं में आस्थावाद के स्वर हैं। वह चाहे ' मलबे का मालिक ' में हो या ' अंधा युग ' में। इस तरह कविता और कहानी दोनों विधाओं में एक तरह का भविष्यवाद है, जो नेहरू युग की देन है ( नेहरू का नाम अगर युग से जोड़ना संगत है )। इन कृतियों की संवेदना आधुनिकता के भार को उठा नहीं सकी।'[1]

डा0अवस्थी ने जिन कहानीकारों के नाम गिनवाये हैं, या जिन कहानियों की सूची दी है, उसमें आधुनिकता के बोध को खोजा और पाया गया है और यह कहानी के नये मोड़ का या कहानी में आधुनिकता के नया दौर का परिचय देता है। इनमें महेन्द्र भल्ला की कहानी ' एक पति के नोट्स,' रविन्द्र कालिया की 'एक प्रामाणिक झूठ ' और ' नौ साल छोटी पत्नी,' काशीनाथ सिंह की ' चायघर में मृत्यु,' ज्ञानरंजन की ' फेंस के इधर और उधर,' प्रयाग शुक्ल की ' आदमी,' ' सांसें,' को शामिल किया गया है। महेन्द्र भल्ला की कहानी को एक दस्तावेज तो घोषित नहीं किया, लेकिन एक दस्तावेज के रूप में इसे विस्तार से अवश्य लिया है। एक पूरे लेख में इसके आधार पर आधुनिकता के नये दौर को आंकने की कोशिश की है।[2] यह जीवन के यथार्थ का दौर है, जिसे रचनाकारों ने रचनाकर्म के रूप में स्वीकार किया है। वर्तमान शताब्दी की ' अर्द्धनिशा '[3] (पूर्वार्द्ध ) के बीतते-बीतते कहानी उपन्यास की प्रकृति ही बदल गयी। इस बदलाव में तीन बातें ध्यान आकृष्ट करती

---

1- धर्मयुग, जनवरी, 1966 ( समीक्षक के नोट्स)

2- नई कहानियां, 1965

3- मिट नाइट ( फ्रीडम एण्ड मिडनाइट )

है । प्रथम, साहित्यकार यह मान बैठे हैं कि प्रेमचंद के मार्ग पर चलकर कोई भी दूसरा लेखक उनसे आगे नहीं पहुँच सकता, अत: वे नये-नये यानों की खोज में लग गये हैं । जिस प्रकार ग्रामीण-जन ग्राम को छोड़कर नगर की ओर दौड़ पड़े हैं, उसी प्रकार कथाकार भी ग्राम को प्रेमचंद के पास छोड़कर अपनी कथावस्तु के लिये नगरीय जीवन पर आ गये हैं । द्वितीय, पिछले तीन दशकों में हमारे नगरीय समाज में कई नवीन समस्याओं ने जन्म ले लिया है, ये समस्यायें 'द्वितीय महा समरोत्तर'[1] इसके बाद देश-विभाजन, और उससे जुड़ी समस्याओं ने प्रवाहित किया है । कथाकार तृतीय वर्तमान अवस्था की समस्याओं को लेकर लिखने लगा । रचनाकार ने इस चुनौती को ढंग से स्वीकार किया ।

कहानी तो आज भी कहीं जा रही है, कहीं जाती रहेगी, सवाल इतना अवश्य है कि समय के अनुसार कहानी की जब जब भी आलोचना समीक्षा के स्तर पर विचार किया गया, उस समय उस काल का सन्दर्भ अवश्य ढूंढा गया । मन्नूजी ने अपने दाम्पत्य जीवन के साथ श्री राजेन्द्र यादव से वर्तमान को और अधिक निकटता से देखा है । साथी तो साथी है, टकराहट की बातचीत में स्पष्टवादिता है, उनका लेखन सजग प्रहरी की तरह आज भी चल रहा है ।

महेन्द्र भल्ला की कहानी को एक दस्तावेज तो घोषित नहीं किया, लेकिन एक दस्तावेज के रूप में विस्तार से अवश्य लिया है । एक पूरे लेख इसके आधार पर एक आधुनिकता के नये दौर से आंकने की कोशिश की है । ''[2] जबकि प्रयाग शुक्ल की 'आदमी' और 'साँसें', इस बात का

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, 'द्वितीय महासमरोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास,'

2- नई कहानियाँ, 1965

जीता जागता सबूत है। आज बहुत-सी कहानी काफी हाउस, टी-स्टाल पर एक जमघट के रूप में हमारे सामने आती हैं। कई कहानियाँ तो जीवन में ऐसे छू रही हैं, जहाँ औरत नाम की चीज नहीं। प्रतीक के रूप में चर्चा अवश्य है। महेन्द्र भल्ला की एक और कहानी 'तीन चार दिन' कहानी संग्रह में सबसे स्वादहीन बेकार सी है। ऐसे शब्दों का प्रयोग भी कहानी के आलोच्य का केन्द्र बिन्दु है।

वास्तव में आलोचक का कहानी संसार इतना बदल गया है कि उसमें कभी-कभी कई मापदण्ड तो बिखर से गये। हिन्दी के साथ अंग्रेजीयत की बात शब्दों में इस ढंग से कही जा रही है, जिसे स्वीकार भी करना पड़ रहा है। "आदमी शायद कन्फ्यूस इसलिये नहीं करता है कि दूसरों की नजरों में गुनहगार बनकर अपनी नजरों में बेगुनाह हो जाये। वह अपने गुनाहों को स्वीकार नहीं करता, बड़ी निरीहत के साथ उन्हें दूसरे के कन्धे पर डालकर स्वयं उनसे मुक्त हो जाता है।[1] विचार कीजिये 'कन्फेस' शब्द का प्रयोग आलोचना की दृष्टि से ठीक है, या नहीं, एक प्रश्न के रूप में नहीं है। पर दूसरी ओर मन्नू जी ने 'एक प्लेट सैलाब' में एक नई सृष्टि की है। हमारी किटी ने इस बार बड़े स्वीट पास किये हैं। डैडी इस बार उसे मीट करवाने बम्बई ले गये थे। किसी प्रिन्स का अल्सेशियन था। मम्मी बहुत विनाड़ी थी।"[2] इस प्रकार सरल भाषा का प्रयोग की एक स्टाइल मन्नू जी की है।

गिरिराज किशोर, गंगा प्रसाद, विमल सुदर्शन चोपड़ा, धर्मेन्द्र गुप्त, महीपसिंह, अन्विता अग्रवाल, विजय मोहन सिंह ने कहानी में जो

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भंडारी, 'आपका बंटी,' पृ० 192

2- मन्नू भंडारी, 'एक प्लेट सैलाव,' पृ० 38

एक नया मोड़ दिया है। इस सम्बन्ध में डा0चन्द्र भूषण तिवारी ने ठीक ही कहा है कि अधिकांश लेखकों की कहानी पुरानी पड़ चुकी है। वह तो हिन्दी कहानी के विकास क्रम को टूटा पाते हैं।[1] इस प्रकार रचनाकार की दृष्टिकोण में अंतरस आ गया है। डा0नामवर सिंह की अपनी बात तो और भी साफ है कि हिन्दी कहानी को अपनी राह से वास्तव में भटकाया है, गुमराह भी किया है। इससे यह बात और साफ है कि हमारे अपने जीवन मूल्य भी बदले हैं, इसका बिखराव कहाँ है ? वह तो रचनाकार की दृष्टि में है।

प्रेमचन्द के बाद हिन्दी कथा साहित्य में नया मोड़ आया, जिसमें यथार्थवादी चिन्तन ने दिशा ही बदल दी। यह सत्य है कि जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, अज्ञेय, ने यथार्थ के धरातल पर मनोविज्ञानिक परम्परा से नयी विचारधारा से जोड़ा। जिनमें अमृतलाल नागर, राजेन्द्र यादव व फणीश्वरनाथ रेणू, अमृतराय, धर्मवीर भारती, गिरधर गोपाल, नरेश मेहता, देवराज, श्रीलाल शुक्ल, कोमलसिंह सोलंकी, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियवंदा, ममता कालिया, कृष्णा सोवती ने अपनी लेखनी से नया पर्यावरण ही नहीं दिया, बल्कि जीवंत पात्रों की रचना का मनोविज्ञान की ओर भी स्पष्ट किया है। जहाँ शारीरिक सम्बन्धों की नग्नतापूर्ण चित्रण कर संकोच का अनुभव नहीं किया, बल्कि मन की दशा में स्पष्ट कर दी। "आधुनिक उपन्यासों में मिथुनाकार की चर्चा तो खुलकर अपने नग्न रूप में की जाती है।"[2] मानसिक अन्तर्द्वन्द्व कथा का एक नया आधार है। वेदना ने यथार्थ से अपने सम्बन्ध निकटता से लिये, युगीन आक्रोश, संत्रास के कारण आया है, टूटन, घुटन तो नारी जीवन के

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- समारम्भ, जनवरी-मार्च, 1972

2- डा0 बच्चन, "आधुनिक हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास," पृ0 127

आधार बन गये। ऐसा नहीं कि पुरुष इस दुःख-घुटन में शामिल नहीं हो सकता। रोटी का सम्बन्ध, यौन सम्बन्धों की विसंगतियों से भी है। भय एवं मृत्यु बोध भी जीवन के तनाव का एक अंग है। भोगा हुआ सत्य वास्तव में आज की कहानी एक हिस्सा बन गया है। डा०कमलेश्वर, धर्मवीर भारती, डा०लक्ष्मीनारायण लाल, राजेन्द्र यादव, कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा, मन्नू भण्डारी ने मानव-मन की वेदना को हर स्तर पर परखा है।

मन्नू भण्डारी की 'शकुन', 'बंटी', में घोर वैयक्तिकता की चेतना के परिणामस्वरूप कुण्ठा, संत्रास एवं भय व्याप्त में जी रही है। इसलिये कभी वे सामाजिक व्यवस्था, कभी शारीरिक सम्बन्ध, कभी मानसिक स्तर पर विद्रोह करती नजर आती है। शकुन का चरित्र अपने आप में महत्वपूर्ण है। नारी का यह सोच आधुनिक ही है। जीवन के हर क्षण, हर पल एक नयी बात में में घर कर गयी है। इसी कारण किसी ठोस निर्णय तक वह पहुँच नहीं पाती। इस कारण संयुक्त परिवार का स्थान भी एकांकी परिवारों ने ले लिया। इसका सबसे अधिक प्रत्यक्ष प्रभाव तो नारी पर ही हुआ। यह सत्य है कि आज की नारी बंद कमरे में रहना पसन्द नहीं करती। शिक्षा एवं आर्थिक सम्पन्नता ने तो उसे और भी खुले वातावरण में रख लिया है। चार दीवारों की परिकल्पना को कोठी, कालोनी में सिमट गयी, फिर एकाएक इससे पीछे कैसे रहता ? पुरुषों के साथ समान अधिकार की बात का जो चित्रण, आज कथा-साहित्य, कहानी, उपन्यास में इसका सीधा सम्बन्ध तो नर-नारी दोनों से है, फिर अलग-थलग बात आज क्यों आ रही है, इस विषय में विचार किया जाना चाहिये।

हिन्दी उपन्यासों में वैवाहिक मूल्यों ने जो परिवर्तन किया है, उसमें परम्परागत विवाह के मूल्यों में जन्म-जन्मान्तर का सम्बन्ध अटूट

रिश्ते जैसी शब्दावली भी बदलकर रख दी । इस परिवर्तन का आधार पाश्चात्य प्रभाव ही है । जिसमें आधुनिकता आज ज्यादा आ गयी, जहाँ आर्थिक एवं शारीरिक मूल्यों ने खुलकर भाग लिया है । इस दृष्टि से महिला रचनाकार अधिक सफल रही । पिता-पुत्र पतित सम्बन्धों में आज की नारी स्वतंत्रता की बात करती है, उसमें उसका यह अन्तर पहनाव, भाषा, विचार और जीवन के मापदण्ड के आधार पर है । यह पाश्चात्य सभ्यता को जागरण का हिस्सा है । मन्नू जी ने अपने कथा-साहित्य में इस सब परम्परा का निर्वाह पात्रों की रचना के आधार पर किया है ।

वर्तमान में जो कथाकार नये सामने आये हैं, उनमें बाला दुबे, मुज्तबा हुसैन, हरदम सिंह मान, यज्ञ शर्मा, शेरजंग जांगली, रवीन्द्र नाथ त्यागी, इब्ने ईशा, गोपाल चतुर्वेदी, प्रतीप बराड़ बड़े, के०पी० सक्सेना, सुरेश सलिल, रामलाल नायबी, विष्णु प्रभाकर, प्रकाश जैन, अजय श्रीवास्तव, पृथ्वीराज अरोड़ा, अशोक , कनिष्क खन्ना, प्रेम जनमेजय, उपेन्द्र प्रसाद राय, मोहन श्रीवास्तव मधुप, श्याम सुन्दर चतुर्वेदी, कुलदीप जैन, जगदीश कश्यप, कमल चौपड़ा, जवाहर लाल वर्मा, दिव्याश, कर्मवीर सिंह, कृष्ण बेताब, नरेश मिश्र, शकील सत्य शुचि, सुभाष नीरव, संजय चौहान, बाबूलाल सखलेचा, रवि, प्रमोद कुमार सिंह, योगानंद हीरा, कृष्ण शंकर भटनागर, नरेशचन्द्र नरेश, नीला चावला, हुकुमचंद्रकांत, धीरेन्द्र मल्ल, रमजान हुसैन खान, कमलगुप्त, शराफत अली खान, सुनील छबीला, कमल मुसद्दी, अशोक गुप्त, मानिजये अजनबी, वीरेन्द्र कुमार, पृथ्वीनाथ पाण्डेय, दिनेश त्यागी, महावीर अग्रवाल, गंभीर सिंह पाल्वी, तारा पांचाल, अंक श्री रंजन कुमार सिंह, गौतम सान्याल, सतीश भाटिया अशोक भाटिया, कासिम खुर्शीद, रतीलाल शाहीन, हम दर्दबीर, नरेश हरबी, प्रदीप चिले, गोपाल चौरासिया, सुनीता निशांत, डा०नरेन्द्र

लाहा, डा0रामकृष्ण गुप्त, डा0उपेन्द्र विश्वास, अतुल मोहन प्रसाद, श्याम बिहारी श्यामल, सतीश राज पुष्करण, भगवान वैद्य प्रखर, ए0असफल, रघुनन्दन त्रिवेदी, बलवीर सिंह, प्रमोद कुमार, उदयभानु पाण्डेय, प्रमोद कुमार, रमेश उपाध्याय, बलवीर लोकेश, सीताराम अग्रवाल, बलवीर त्यागी, विनय विश्वास, ज्ञान प्रकाश विवेक, मथुरा दास, इक्बे इशी, यादवेन्द्र शर्मा, चन्द्र मुकेश साहनी, किरण अरोड़ा, हबीबी कैफी, अनवर शमीम, मधुसूदन, पारेख, प्याशा रुपक, राजा दुबे, हरमन चौहान, गुड्डू गोविन्द, संजय चौहान, कृपाशंकर, हर प्रसाद शर्मा, जोगेन्द्र पाल, श्रीनिवास वत्स, सुरेन्द्र श्रीवास्तव, विपिन जैन, शैलेंद्र यंग, हाल्डफोर्ड, लूलाक, रशी खां, खलील जिब्रान, अहसान मलिक, पांधी ननकानवी, महेश दर्पण, वृजेश्वर मदान, बलराम, राजेन्द्र सिंह रोथी, इलमुद्दीन एस0शेख, नथमल शर्मा, राजीव कुमार गुप्त, प्रभाकर, महेश संतुष्ट, सुलक्खन, पीत, श्रीराम आयंगार, कनफूल, रतनसिंह, प्रकाश मनु, आर0एस0मस्ताना, विक्रम सोनी, प्रियकार रुपसिंह चन्देल, प्रतापराव कदम, रणधीर राय, सत्यराज ए0जे0कुरेशी, सुरजीत कमल शुक्ला, अखिलेश्वर, अहमद अली सिद्दीकी, सुशील राजेश, माहेश्वर इब्नेराशी, कमलकिशोर गोयनका, स्नेह मोहनीश, हंसराज रहबर, हेमु भारद्वाज, उषाकिरण खान आदि ने मनोविज्ञानिक आधार पर व्यंग को एक नयी दृष्टि देकर लघु कथायें लिखी हैं, जिनका विस्तृत रुप कहीं न कहीं उनकी बड़ी कहानी एवं उपन्यास में देखने को मिल जाता है। 'सारिका' का संयुक्त पीढ़ी विशेषांक मार्च 1986 प्रथम पक्ष में उषा किरण की 'सांझ का सूरज' कहानी का नायक संघर्ष करना चाहता है, संकट में पलने के बाद पिता के भरोसे के विपरीत डाक्टर के बजाय प्रशासनिक सेवा में जाना चाहता है, इस प्रतिभा में इतना अवश्य है कि वह डाक्टर बन सकता है, पर उसने जो प्रशासनिक सेवा में जाने का जो ध्येय बनाया है, उसमें उसकी क्षमता है

उसकी भेंट मणिका से होती है, मणिका का इस कहानी की नारी पात्र है, जो निर्देशिका ही ठीक है। निश्चय ही मणिका का निर्देशन हर कोण से सही है, पर नायक का भटकाव ही ज्यादा है, पिता का आज्ञाकारी पुत्र डाक्टर बन गया, व खुद के लक्ष्य को प्रशासनिक अधिकारी व मणिका का मित्र, बल्कि गाँव की राजनीति में अबोध बालक की तरह फंस जाता है, वह गाँव में जाकर मास्टरी करने लगता है। प्रतिभायें क्यों नहीं बन पातीं, इस पर एक प्रश्नचिन्ह अवश्य लेखिका का है। ऐसा लगता है कि इस कहानी से कहीं तो भी एक गलती अवश्य लेखिका से हुयी है कि वह नायक को एक दिशा में नहीं रख पायीं।

जबकि मन्नू भण्डारी ने 'महाभोज' में राजनीति के अभिव्यक्ति पक्ष में एक जान डाली है। महाभोज वास्तव में अलगाव कहानी का विस्तृत रूप है। स्वाधीनता के बाद उभरी देश की राजनीति को उज्ज्वल पक्ष जो कुछ रहा हो, सो रहा हो लेकिन कृष्णपक्ष का चित्रण केवल हिन्दी के ही नहीं बल्कि भारत की प्राय: सभी भाषाओं के लेखकों का प्रिय विषय रहा है। इससे स्थूल रूप में यह माना जाना जाता है कि इस देश पर शासन करने वाला पक्ष, जिसे सत्ताधारी पक्ष कहा जाता है, अपने समक्ष राजनीतिक विपक्ष से अवश्य निश्चत रहा है, परन्तु साहित्यिकों के रूप में उसके विरोध में खड़े रहने के कारण उसे बहुत बार मुश्किल का सामना करना पड़ा है। जनता पार्टी की अल्पकालिक सत्ता की स्थापना, उसी बुद्धिजीवी विपक्ष के प्रयासों का फल कहा जा सकता है। वस्तुत: यह मतभेद का विषय हो सकता है, इसलिये इसकी चर्चा अनावश्यक है।[1] 'महाभोज' के पात्र सभी इसी सीमा रेखा में हैं। दा साहब मुख्यमंत्री, सुकुल बाबू विरोधी पक्ष के नेता, जोरावर राजनीतिक

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0 अनीता राजूरकर, 'मन्नू जी के उपन्यास-नाटक,' पृ0 81

सुरक्षा में पलने वाला गुंडा और हत्यारा, सक्सेना, सिन्हा, पुलिस अधिकारी दत्ता बाबू, महेश शर्मा भी इसके पात्र संयोजन में हैं। इसकी मूल कथा में मुख्यमंत्री साहब, विरोधी पार्टी के नेता सुकुल बाबू, शिक्षा मंत्री त्रिलोचन सिंह सभी अपनी अपनी कुर्सी बचाना चाहते हैं। आदर्श, दया, त्याग का मुखौटा लगाये ये सभी पात्र पूर्णतः स्वार्थी और पतित हैं।

'मत झूठ बोल। डर पड़ा है किसी का ?' डपट दिया बिन्दा ने। फिर सीधे सक्सेना की ओर देखकर कहा -' हाँ नहीं आया। क्या होगा बयान लेकर, क्या रखा है, इस ताहकबाजी में, निकलने तो वही जो दा साहब कह गये हैं।'[1]

< < < <

जिन्दगी में कब नसीब हुआ है, उसे गाड़ी में बैठना वह भी दा साहब की गाड़ी में।

न ना करते बन रहा था, न बैठते बन रहा था।[2]

जीवन का साक्षात् तो है। इस प्रकार राजनीति और समकालीन सन्दर्भ में कई कहानी, उपन्यास हमारे सामने हैं।

सुभाषा नीखरा की कहानी 'अपने क्षेत्र का दर्द' जो कि सारिका के द्वितीय पक्ष मार्च 86 में प्रकाशित हुयी, उसमें तो राजनीति के मध्यम सामान्य जीवन का चित्रण किया है, उसमें यथार्थ का जीता जागता चित्रण है, जिसे आज भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता।[3]

---

1- मन्नू भण्डारी, 'महाभोज', पृ0 132

2- वही, पृ0 48

3- सुभाषा नीखरा, 'अपने क्षेत्र का दर्द,' (सारिका द्वितीय पक्ष मार्च 1986) पृ0 31

पत्र में जो मंत्री के नाम से आते हैं, उसे जब चपरासी ने ध्यान से पढ़ा, पत्र का एक-एक शब्द एक गरीब असहाय बाप की पीड़ा को व्यक्त कर रहा था, उसकी इकलौती बेटी को दहेज के भूखे भेड़ियों ने जिन्दा जलाकर मार डाला था, इलाके के थानेदार ने रपट लिखने की बजाय, उल्टा उसे बुरी तरह मारा-पीटा और धमकाया था, गरीबों के मसीहा, ईश्वर, देवता आदि कितने ही शब्दों से मंत्री जी को संबोधित करते हुये उस गरीब, असहाय बापने मंत्री जी से न्याय की मांग की थी ।

क्या मंत्री यह सब कुछ सुनता है । इन चिट्ठियों को फाड़कर फेंक देता है ।

'महाभोज' नाट्य रूपान्तर पर इन्दुजाअवस्थी[1] ने लिखा है कि संवादों की चुस्ती और अर्थक्षमता में आज के जीवंत सार्थक मुहावरे की पकड़ और बोलचाल की लय स्पष्ट है । कितनी स्पष्ट साफ बात कहने की है कि राजनीतिक उथल-पुथल की शुरुआत, केवल कुर्सी बचाने की है । जबकि कथा वार्ता में श्री अशोक मिश्र[2] ने उल्लेख किया है कि 'महाभोज' के प्रदर्शन से एक नयी शुरुआत हुयी है, निस्सन्देह उम्मीद बंधती है कि राजनैतिक नाटकों के सम्बन्ध में सही समझ विकसित होगी ।कथा अपने आप में बहुत नाटकीय है, जिसके बीच में पुलिस की भावहीन जांच प्रणाली, निरीह गांव वालों की मार्मिक बयानबाजी, राजनैतिक जुलूस, स्वागत, समारोह, मापन बाजी के प्रसंग हैं, जो संरचना की दृष्टि से नाटक को एक तरफ चुस्ती और गतिशीलता प्रदान करते हैं, तो दूसरी तरफ कथ्य को एक व्यापक धरातल

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 4 मार्च 1983

2- कलावार्ता, अप्रैल 1983

से जोड़ देते हैं। राजनीतिज्ञ किस प्रकार अपनी आत्मीयता प्रदर्शित करते हैं, इससे स्पष्ट हो जाता है कि वे जनता के अधिक नजदीक हैं।

दा साहब : (पांडे से ) बिसू का घर कहाँ है? पहले वहाँ चलेंगे।

पांडेजी : (भौचक्के भाव से ) जी साहब। ...... कार्यक्रम में तो पहले पंचायत घर चलना है, साब।

जोरावर : ( लोगों को हटाकर रास्ता बनाते हुये) आप पंचायत घर चलो, दा साहब ...... बिसू का बाप वहीं आ जायेगा। स्वागत का कार्यक्रम तो आपका पंचायत घर में है।

दा साहब : मैं स्वागत करवाने नहीं, संवेदना प्रकट करने आया हूं।

नाट्य रूपान्तर में उपन्यास के विषय में मन्नू जी ने स्वयं लिखा है, "उपन्यास के रूप में महाभोज न चरित्र प्रधान उपन्यास है, न समस्या प्रधान। वैसे कथानकों में आसानी यह होती है कि सारी चीज को समेटकर चरित्र या समस्या के आसपास केन्द्रित कर दिया जाता है। रचना तब चुस्त भी लगती है और नुकीली भी। 'महाभोज' आपके राजनैतिक माहौल को उजागर करने वाला स्थिति प्रधान उपन्यास है। आज राजनीति को स्वप्नों आदर्शों और मूल्यों वाला व्यक्ति नहीं चलाता, बल्कि राजनीति खुद अपने चरित्र गढ़ती चलती है।[1] आज की राजनीति का साक्ष्य भी यही दृष्टिकोण है, फिर हम यह देख भी रहे हैं, जो यथार्थ का धरातल भी है।

'महाभोज' की उपन्यास कथावस्तु के बाद, नाट्य कथावस्तु में मंचन के बाद, नाट्य मंचन के पहले जो हल्का-फुल्का परिवर्तन हुआ है उसे संवाद की सशक्त योजना है। मंचन के विषय में स्वयं मन्नूजी ने लिखा है 'और आखिर' महाभोज मंचित हुआ। अगर पत्र-पत्रिकाओं, नाट्य समीक्षकों

---

1- मन्नू भण्डारी, 'मंच प्रस्तुति से पहले महाभोज,' पृ01

और सबसे अधिक दर्शकों की प्रतिक्रियाओं पर विश्वास किया जाये तो यह नाट्य जगत की एक महत्वपूर्ण घटना है।[1] नाटक के मंचन में जो कुछ होता है, उसकी सराहना दर्शक ही करता है, उसके बाद नाट्य समीक्षक। एक बात महत्वपूर्ण है कि साक्षात्कार के समय मन्नू जी ने बताया है कि टी0वी0 सीरियल में निर्मला की पटकथा संवाद मुझे लिखने पड़े, यह एक ऐसी स्थिति है कि कई बार बहुत कुछ सोचना पड़ता है, वैसा ही ढालना पड़ता है। संघर्ष की स्थिति के संवाद तो विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। मंचन की दृष्टि से लिखना पड़ता है। महाभोज में सूत्रधार घटना का जो निर्माण किया गया है, वह वास्तव में प्रारम्भ से अन्त तक की कथा में जिज्ञासा बनाये रखती है।

"लावारिश लाश को गिद्ध नोंच-नोंचकर खा जाते हैं। पर बिसेसर लावारिस नहीं। उसकी लाश सड़क के किनारे पर पड़ी मिली, शायद इसीलिये लाश का ख्याल आ गया वरना उसके तो माँ भी है और बाप भी। गरीब भले ही हो, पर है तो। विश्वास नहीं होता था कि वह मरा पड़ा है। लगता था, जैसे चलते-चलते थक गया हो और आराम करने के लिये लेट गया हो। मरे और सोये आदमी में अन्तर ही कितना होता है भला ? बस एक साँस की डोर, वह टूटी और आदमी गया। देखते ही देखते सारा गाँव जमा हो गया।"[2]

गरीब की मौत का चित्रण की बात नहीं, बल्कि जीवन के उस मूल्य का महत्व अधिक है जब जिन्दा आदमी हो या लाश आदमी की,

---

1- मन्नू भण्डारी, 'मंच प्रस्तुति के बाद' महाभोज', पृ0 10

2- मन्नू भण्डारी, 'महाभोज', पृ0 13

पर आज लाश का जो महत्व है, इससे ही सारी घटना का क्रम राजनैतिक माहौल को जन्म देता है। लाश के प्रति पुलिस वालों को छोड़ सभी को दु:ख का अनुभव है। मानवीय के आधार पर हमदर्दी केवल दिखाने के रूप में है। राजनैतिक हलचल में भी इस मौत के प्रति नेता की जो सहानुभूति है, उससे लगता है कि यह केवल औपचारिकता रही है। पुलिस वालों के बयान में जो दिखावा है, वह कागज पर इतिहास लिखने के अलावा कुछ नहीं है।

सक्सेना : अच्छा यह बताओ, खाने के बाद वो कहाँ गया था ?

बिन्दा : अपने घर। शहर जाते हुये हमी छोड़ गये थे।

सक्सेना : तुम शहर क्यों गये थे ?

बिन्दा : मंडी में अनाज पहुँचना था, अन्दर कुछ सामानों को खरीदना था।

सक्सेना : अच्छा उस दिन क्या बातें की थीं उसने तुमसे ? वो दु:खी था परेशान था ? किसी से कुछ कहा-सुनी या झगड़े की बात की थी ? उसने।

बिन्दा : हम ही से झगड़ा किया था।

सक्सेना : किस बात पर ?

बिन्दा : दिल्ली चलने की खातिर। चार-पाँच दिन पहले आगजनी के कुछ ठोस परमान जुटा लिये थे, उसने। बस तबसे पागलों की तरह पीछे पड़ा हुआ था ..... दिल्ली चलो .... दिल्ली चलो।

सक्सेना : फिर ?

बिन्दा : फिर क्या हमने कह दिया - कुछ नहीं होगा दिल्ली जाके भी। जब सरकार खुद सारा मामला दाब-ढाँक रही है, हमारे तुम्हारे करने से क्या होगा ?

सक्सेना : उत्सुकता से, क्या प्रमाण जुटाये थे, उसने ? यदि ऐसे प्रमाण हैं तो दो पुलिस को । वो नये सिरे से सारे मामले को देखेगी ।

बिन्दा : कुच्छ नहीं करेगी यहां की पुलिस । कोई कुच्छ नहीं करेगा । ...... मसाल वालों के पास गये, छापना तो दूर, बात तक नहीं की । आगजनी का कइसा ब्यौरा छापा था ........ अब जाने का उनको सांप सूंघ गया है ? सब के सब बिक गये । ...... पुलिसौ ।[1]

कितना सत्य है, पुलिस का यह चिट्ठा जो बिन्दा ने कहा । आज भी सत्य है, कल भी सत्य है । यह सब कुछ हो रहा है । संभवत: मन्नू जी ने इसे नजदीक से देखा है । समस्या का यदि जिक्र किया जाये, तो एक विडम्बना ही होगी । दिनमान[2] के सम्पादक सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने 'महाभोज' के सम्बन्ध में जो लिखा है, वह यथार्थ ही तो है । दृश्य-संयोजन रूपाकारों की संरचना समूह योजनायें-सभी आकर्षक और सार्थक थे । ग्रामीण दृश्य उभरे हुये थे और नाटक के अन्त में सच्चे गरीब आदमी को मारे जाने और झूठ राजनीतिज्ञों और अधिकारियों को चारों ओर ऐश्वर्य में डूबे भोज करने की विडम्बना से दर्शक में एक यातना जगाना समाप्त होता है ।

राजनीतिक चिन्तन का जो हिस्सा इसमें है, उसमें राजनीतिक की उठापटक तो साफ है, पर दादा लोगों की राजनीति का जो हिस्सा है, उसमें आज की राजनीति स्पष्ट झलकती है । मन्नू जी पात्रों का चयन

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'महाभोज,' पृ0 89-90

2- दिनमान, अप्रैल 1983

करते समय समकालीन स्थिति का ध्यान रखती हैं। दा साहब (मुख्यमंत्री) की स्थिति में मानवता तो कूट-कूटकर भरी है, पर उसमें राजनीति की दुर्गंध अधिक है। विरोधी या पक्षधर टिकिट के लिये जो दाँवपेंच फेंकता है, उसमें भी राजनीति के पचड़े हैं। इस आपाधापी का जो चित्रण मन्नू जी ने पात्रों के माध्यम से किया है, ये सभी पात्र अपनी अपनी जगह ठीक हैं। इतना अवश्य है कि राजनीतिक पक्ष की स्थिति अधिक उजागर नहीं हो सकी, पर राजनीति का केन्द्रबिन्दु स्पष्ट है। दा साहब, मुख्यमंत्री सुकुल बाबू, भूतपूर्व मुख्यमंत्री विरोधी पार्टी के नेता अप्पपा साहब सत्तारूढ़ पार्टी के अध्यक्ष, लखन दा साहब का विश्वासपात्र रारोह चुनाव के लिये प्रत्याशी, काशी, सुकुलबाबू का विश्वसनीय कार्यकर्ता, (विपक्ष) जोरावर का जमींदार जो चुनाव लड़ने का इच्छुक, इतने कम राजनीतिज्ञ स्तर के पात्रों माध्यम से ही सारी स्थिति स्पष्ट की गयी है। आजादी के बाद की स्थिति में उथल-पुथल अधिक है, क्योंकि आजादी के पहले सबका एक ही लक्ष्य था कि आजादी हासिल करनी है। पर आजादी के बाद के दाँवपेंच इतने बढ़ गये, कि आज छोटा-बड़ा नेता किसी न किसी रूप में नेता अवश्य बनना चाहता है। 'महाभोज' में भी मन्नू जी ने यह बात स्पष्ट की है।

दा साहब : तो अब चुनाव लड़कर इज्जत बनाओगे अपनी ? खेती में और राजनीति में बहुत फर्क होता है, जोरावर।

जोरावर : बहुत कर ली खेती दा साहब। अब तो हम करेंगे राजनीति।

दा साहब : किसने समझाया तुम्हें ? काशी ने ? सुना है वह रास्ता भी दिखा रहा है, और साथ भी दे रहा है, तुम्हारा, इस चुनाव में।

जोरावर : अब आप छुटछुटा दोगे, दा साहेब, तो कोई तो साथ देगा हमारा भी। काशी हमको सगे भाई से जियादा मानता है।

दा साहब : सगे भाई ने यह नहीं बताया कि बिसू ने आगजनी के जो प्रमाण जुटाये थे, उन्हें लेकर बिन्दा दिल्ली जा रहा है - सक्सेना ने बिसू की हत्या के सारे प्रमाण जुटाकर रिपोर्ट तैयार कर दी है। अच्छा हुआ तुमने खुद हाथ खींच लिया। मैं मुक्त हुआ। वरना इन स्थितियों में मेरे लिये बहुत मुश्किल हो जाता, कुछ भी कर पाना।

जोरावर : क्या लिख दिया है सक्सेना ने, अपनी रपट में ?[1]

राजनीति में दांवपेंच जरूरी है। जोरावर को राजनीति से हटाने के लिये दा साहब ने जो कहा वह एक ऐसा सत्य है, जो आपा-धापी की तरह ही जीवंत है। सत्य क्या है ? राजनीति में ढूंढना मुश्किल है। नाटक की रचना उपन्यास के बाद हुयी है। आज की राजनीति माहौल को उजागर दोनों रचनाओं में है। मन्नू भण्डारी ने मंच प्रस्तुति से पहले अपने आलेख में 'महाभोज' के विषय में स्पष्ट किया है कि "आज राजनीति को स्वप्नों आदर्शों और मूल्यों वाला व्यक्ति नहीं चलाता, बल्कि, राजनीति खुद अपने चरित्र गढ़ती चलती है - ऐसे चरित्र जो अपने भीतरी निर्णय, विवेक या साहस से नहीं चलते, वरन, स्थितियों के दबाव में बनते-बिगड़ते हैं। उनका महत्व इसमें निर्जीव मोहरों से अधिक नहीं। हर प्यादे की लड़ाई फर्जी बनने की है और लड़ाई की इस विज्ञान ने समाज के हर वर्ग को धीरे-धीरे अपने चंगुल में कस लिया। लेकिन मनुष्य क्या इतनी आसानी से अपने को स्थितियों के हवाले कर देता है ? वह बिलकुल भी प्रतिरोध नहीं करता। इस अर्थ में यह उपन्यास स्थिति प्रधान भी है और यथास्थिति के विरुद्ध विद्रोह भी।"[2] यह कथन उनका कल आजकल के मध्य का अच्छा आयाम है। राजनीति चेतना,

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'महाभोज,' पृ0 100
2- मन्नू भण्डारी, 'मंच प्रस्तुति से पहले-महाभोज.' पृ0 9-10

जागरण का कोई ऐसा हिस्सा नहीं, जिस पर आजकल मनचली हो। समाज, परिवार में जो राजनीति का केन्द्र-बिन्दु है।

आज कही उपन्यासकार इस राजनीतिक मसले, माहौल को उपन्यास रचना में समेट रहे हैं। इतना अवश्य है कि इस राजनीति की स्थिति को जो चित्रण, हल्का-फुल्का मुंशी प्रेमचंद ने 'गोदान' में किया था, वह प्रदेश की स्थिति भले हो, पर उसमें राजनीतिक चेतना का श्रीगणेश अवश्य था। कई कहानियाँ इस राजनीति की आपाधापी की आयीं, जिनमें कुछ न कुछ ऐसा है कि उसे ढूंढते समय साक्षात राजनीति जीवन के दर्शन अवश्य होते हैं। एक बात महत्वपूर्ण है, यह कि 'तमस' में भीष्म साहनी ने जिस पृष्ठभूमि का सहारा लिया, उसमें प्रभावित होने की बात दलदल की तरह ही रही। मन्नू जी ने अपने साक्षात्कार में 'महाभोज' को, राजनीति के दांवपेंच एवं माहौल तथा वर्तमान का आधार माना है। कल आज और कल की तुलना में एक ठीक-ठाक प्रश्न-चिन्ह अवश्य राजनीति का हमें 'महाभोज' में दिखाई देता है।

रमेश उपाध्याय कहानी की जमीन, बजरिया की नजरिया आलेख में कहानी कैसे लिखनी की चर्चा है। चर्चा होनी भी चाहिये। आज कहानी जिस सिरे से कहीं गयी थी, उस सिरे से आज तक की कथायात्रा के कई पड़ाव रहे हैं। फिर भी चर्चा तो चर्चा है। पुरुष कथाकारों की तरह महिला कथाकारों ने कहानी की जिस जमीन की चर्चा की है, उसमें बहुत कुछ है। कबाड़ी, लोहे की कहानी लिखनी है, तो लगे हैं कि दलाली छोड़कर कुछ दिन लोहे की हम्माली करो, ताकि तुम्हें पता चले, वह कितना भारी और कितना ठंडा या गरम होता है। अच्छी कहानी लिखने के लिये तुम्हें यह भी अहसास होना चाहिये कि लोहे की चोट कैसी है।[1] जीवन

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- रमेश उपाध्याय, 'कहानी की जमीन, बजरिया की नजरिया,' (सारिका द्वितीय पक्ष, मार्च 1986, पृ0 51)

का साक्षात तो यथार्थ पर निर्भर है । यथार्थ अनुभव उसमें प्रभाविकता की बात जब चल उठी है, तब मालूम पड़ता है कि कहानी यात्रा लम्बी है । तीन पीढ़ी कहानी की है । कल आज और कल की । इनमें कल की पीढ़ी आज की पीढ़ी दोनों का आमना-सामना है । जैनेन्द्र ने 'पाजेब' कहानी में बाल-मनोविज्ञान का जो आधार लिया है, उसमें मारपीट का भय उजागर होता है । चिन्तित कैसे हों, पर समस्या है । बाल मनोविज्ञान स्त्री मनोविज्ञान की कहानी आज जीती जागती तस्वीर है ।

ज्ञान प्रकाश विवेक[1] ने अधिकार कहानी में एक ओर मनोविज्ञान को एक नये ढंग से छुआ है । लड़का अपने माता-पिता के साथ लड़की को देखने आया और लड़की से सवाल पर सवाल पूछता रहा ।

'एबस्ट्रेक्ट आर्ट के बारे में आप क्या जानती हैं ?'

'कुछ भी नहीं .......' । सकुचाते हुये लड़की ने जबाब दिया ।

'लेंडस्कोप के बारे में ?'

'कुछ भी नहीं .....'

'फिर तो आप स्केच और ग्राफिक के बारे में भी कुछ नहीं जानती होंगी ?' लड़के ने व्यंग्यात्मक लहजे में कहा ।

'जी, जी, मैं कुछ नहीं जानती ।'

'हम्म । यानी पेंटिंग के बारे मे आपका ज्ञान जीरो है, खैर संगीत के बारे में आप~~का ज्ञान~~ जरूर जानकारी रखती होंगी ..... भारतनाट्यम में भारत का क्या अर्थ है ?'

'जी, भारत .... भारत तो हमारा देश है, मैं इतना जानती हूँ ....' लड़की ने सिर झुकाकर जबाब दिया ।[2]

---

1- ज्ञान प्रकाश विवेक, 'अधिकार' (सारिका, द्वितीय पक्ष, मार्च 86,) पृ0 5
2- वही

कहानी में जबाब-सवाल का यह सिलसिला मानसिकता के उतार-चढ़ाव का है, जिसमें हर आदमी अपने को बहुत आगे समझता है । इसे मनोविज्ञान की आधुनिकता भी कह सकते हैं । सीधी सपाट बात तो यह है कि जीवन का हर रंग कहीं-न-कहीं नयापन अवश्य चाहता है । प्रेमचन्द जैनेन्द्र, अज्ञेय से चली कथा की यह लम्बी यात्रा के कई पड़ाव ऐसे हैं, जिनकी विषयवस्तु समय के अनुसार बदली है । आज तो कहानी का उद्देश्य नये धरातल पर देखा जा सकता है । अज्ञेय से सही माने में मानसिकता का आधार नये ढंग से बना है । धर्मवीर भारती, राजेन्द्र यादव, रमेश बक्षी, मणि मधुकर, मोहन राकेश, नरेश मेहता, निर्मल वर्मा, रमेश बक्षी, श्रीलाल शुक्ल के साथ महिला कथाकारों के चिन्तन पक्ष ने स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में नयी पहल की शुरुआत कर मानसिकता का अच्छा रूप प्रस्तुत किया है जो बहुत ही सजीवता एवं स्पष्टता की ओर है । उषा प्रियंवदा, ममता कालिया, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती ने जो सेक्स की अनुभूति गोदान में मेहत्ता, मालती के चुम्बन आलिंगन तक सीमित थी, बन्द थी, लेकिन बाद में खुलने की गवाही देने लगती है । इसे उपन्यास में ही नहीं, कविता-कहानी में भी आंका जा सकता है ।[1]

जीवन के बदलते परिवेश में स्त्री पुरुष के सम्बन्ध में प्राचीन माप-दण्ड टूट गये, नयी नयी समस्याओं ने जन्म लिया, शिक्षा के गुणात्मक विकास ने नारी स्त्री सम्बन्धों की सहजता को समाप्त किया । विवाह की मान्यता है, पर इस मान्यता में शारीरिक सम्बन्धों की जिज्ञासा बढ़ी, उठापटक धीरे-धीरे शुरु हुयी । कहा तो यह जाता है कि उसकी पहल पुरुष ने की । पर शिक्षित नारी कैसे पीछे रह सकती थी । इस बात

---

1- डा0इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिकता और सृजनात्मक साहित्य,' पृ0176

की गवाही थी, अपनी लेखन रचनाधर्म में मन्नू भण्डारी, उषा प्रियवंदा, कृष्णा सोबती, ममता कालिया एवं अन्य ने । 'रुकोगी नहीं राधिका'[1] में उषा प्रियवंदा ने भारतीय नारी की दुविधा को आधार बनाया है, जो अपनी दिशा भटकाओं के कारण तय नहीं कर पा रही है । भारत से अमेरिका जाना तो सरल है, पर उसमें एक सांस्कृतिक पक्ष है, उसमें जीना भी अलग बात है । विदेश की जिन्दगी की आदी होकर अपने देश लौटती है, यहाँ आकर अपनी सांस्कृतिक को ग्रहण करे, या वहीं इसी आपाधापी जी रही नारी का चित्रण ऊषा प्रियवंदा ने किया है । भौतिक सुखों की दौड़ बढ़ रही है । जीवन का यह चित्र जब भयावह हो जाता है, जबकि तय नहीं कर पाते । तनाव बढ़ता जाता है ।

ममता कालिया ने अपने उपन्यास 'बेघर'[2] में जीवन का बदलाव मात्र सम्भोग सन्देह में बदलकर पति-पत्नि अपना सम्बन्ध तोड़ लेते हैं । सम्बन्धों की स्थिति में सम्भोग को स्थान दिया जाने लगा है, अब इस पर प्रश्न चिन्ह नहीं लग सकता । इस तरह सम्बन्धों की सीमायें बढ़ी हैं । उपन्यास की आधार शिला संस्कारबद्ध वाले मध्य सम्भोग को चुनौती माना गया । इससे स्पष्टता क्या हो सकती है एक लड़की के कुंवारेपन को पुरानी कसौटी पर परखा गया है । संजीवनी ने सम्भोग के बाद परमजीत को यह अहसास कचोटने लगता है कि शादी से पहले उसकी अलग दुनिया अवश्य रही होगी, अर्थात् उसका सम्बन्ध अन्य से था, उसके इस शारीरिक सम्भोग का भागीदार शादी से पहले अवश्य है । इस सत्यता का प्रमाण संजीवनी नहीं दे सकी । क्योंकि सम्भोग के समय संजीवनी न चीखी, न पुकारी और न ही उसे खून आया । इसलिये परमजीत पर प्रथम रात्रि (सुहागरात) न होने का दुःख इतना हावी है कि रक्त न आना, क्या

---

1- उषा प्रियवंदा, 'रुकोगी नहीं राधिका,'(धर्मयुग 1966 के सभी अंक)

2- ममता कालिया, 'बेघर,'

उसका सम्बन्ध अन्य से प्रश्न वाचक चिन्ह-सा लग जाता है । यही कारण है कि वह संजीवनी से सम्बन्ध तोड़ देता है । परमजीत का यह विश्वास शरीर विज्ञान की थोथी कल्पना पर आधारित है । वास्तव में ममता कालिया ने पुरानी रीति पर चोट की है । यह संजीवनी अपने अंग के जरा से फैलाव के बाद भी कुंवारी है, चरित्रहीन नहीं । वास्तव में रक्त न बहने की स्थिति में परमजीत के मन में तनाव है, जीवन घुटन और उसके बाद एक सोच में है । बाद में उसका सम्बन्ध रमा जैसी फूहड़ कंजूस से हो जाता है, उसे इस शादी से अजनबीपन, खालीपन अधिक मिलता है । संजीवनी से अलग होकर परमजीत एक पति, बाप तो बन जाता है, पर अपनी पहचान खो देता है । कई स्थितियां ऐसी हैं, जो जीवन की एक घटना से मुड़ जाती हैं । वर्तमान सत्य तो यह है कि लड़के लड़की की उम्र बढ़ रही है, जीवन बढ़ रहा है, शरीर बढ़ रहा है, तब एक सत्य यह भी है कि उम्र के इस बढ़ने से समझ बढ़ रही है, आधुनिकता बढ़ रही है पाश्चात्य सभ्यता का आकर्षण का ग्रहण लग गया है, पर मानसिकता में पुरानी बातें, ज्यों की त्यों हैं । एक लीक से हटकर सोचने की शक्ति में द्वन्द्वात्मक स्थिति अधिक है ।

यदि एक नजर मणि मधुकर का उपन्यास 'सफेद मेमने' को देखा जावे तो एक नयापन उसमें यह है कि उसमें सम्भोग और बलत्कार के प्रसंग है भी हैं । समकालीन उपन्यास में सम्भोग की बात अंधेरे बन्द कमरे से लेकर सम्भोग कमरे तक है ।[1] वह रामाऔतार पोस्टमास्टर की पत्नी रेगिस्तान के एकान्त में अकेला है । जानवरों के डाक्टर का भैंस से सम्भोग रेगिस्तान के एकान्त का परिणाम है, जो उसके ताप को ठण्डा करता है ।"
फिर एक बात और स्पष्ट है कि जीवन के क्षोर में प्रेम का जो रूप है, उसका आधार मानवीय दृष्टिकोण ही है । " रामौतार की जिन्दगी

---

1- मणि मधुकर, 'सफेद मेमने,' पृ0 51

से जितना प्यार करती है, उतना ही उसकी मौन से । ...... दोनों के बीच विभाजन-रेखा खींच देना उसके बस की बात नहीं है । वह पति को भारी महत्व देती है और अपने सुहागों को भी । एक ऐसी स्थिति में हिल गयी है कि निदान की जागरूकता खत्म हो चुकी है । ...... दाम्पत्य जब अपने हदों को पहचान लेता है तो आश्वस्त हो जाता है । आश्वस्त और सुखी । सुख फिर चाहे रेत हो या पानी, कोई अन्तर नहीं पड़ता ।[1] बनना एक शील औरत है । इस महज दाम्पत्य जीवन का जो निचोड़ है, उसमें एक हद तक आधुनिकता की परख है । स्पष्ट अवधारणा क्या है? यह एक प्रश्नचिन्ह है ।

कृष्णा सोबती ने सूरजमुखी अंधेरे के उपन्यास में एक नया आयाम लिया है । सम्भोग को आधुनिकता के वातावरण में मनोविज्ञान की गूढ़ पहेलियों को बड़ी सादगी से रखा है, साथ ही शिल्प के पुराने ढांचे को भी बदल दिया ।

स्त्री वह सड़क है, जिसका किनारा नहीं है । वह आप ही अपनी सड़क का आखिरी छोर है ।[2]

हर मोड़ एक नया मोड़ है । भविष्य नहीं । ...... कुछ तो होगा, जिसका मुझे इन्तजार है ।

कोई तो होगा जिसे मेरा इन्तजार है । पर नहीं, रत्ती को सिर्फ रत्ती का इन्तजार है ।[3]

---

1- पूर्वोक्त, पृ0 76
2- कृष्णा सोबती, सूरज मुखी अंधेरे के, पृ0 11
3- वही, पृ0 89

कितनी अजीब बात है कि सम्बन्धों का ढांचा भी बदला है, वह आइने में देखती है, उसकी पुरानी देह में क्या नहीं, पर ताप नहीं। वह पथरीली है, जो पिघल नहीं सकती। ठण्डी शब्द का प्रयोग ताप न रहने के कारण है। इसमें सम्भोग की कितनी स्थिति है या नहीं, इसकी पहचान हर आदमी के चरित्र से ही देखा जा सकता है। जीवन में शारीरिक सम्बन्धों के उतार-चढ़ाव की अवस्था भी मनोविज्ञानिक आधार ही है। जब कभी कोई बात होती है, उसके पीछे मन की क्या स्थिति है? यह जानना जरूरी है, क्योंकि स्त्री-पुरूष के सम्बन्ध आज के युग में व्यवहारिक धरातल पर है, जिनकी सीमायें शारीरिक सम्बन्ध में अधिक स्तर है। सांस्कृतिक स्तर है, पर उसका आधार सत्यता है। नगरीकरण की प्रक्रिया ने जीवनदर्शन भी बदल दिया, मनोविज्ञान समाजशास्त्र की पकड़ साम्य में ही अब सम्भव है। वह मन्नु भण्डारी के उपन्यास 'आपका बंटी', भावुकता की आधारशिला है। स्त्री पुरूष के सम्बन्धों में (विवाह विच्छेद) तलाक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। माँ-बाप की दो बार शादी, बंटी का नये बाप, नयी माँ के पास रहना, साथ ही बाद में हास्टल में रहना, सबके साथ भी वह अलग सा ही है। संबंधों की स्थिति अजीब-गरीब है। बच्चा की स्थिति कहाँ अच्छी है। मन्नू जी ने उसे नजदीकी से परखा है।

''बंटी का स्कूल खुला, उसका बचपन लौट आया। लम्बी छुट्टियों के बाद पहले दिन स्कूल जाना कभी अच्छा नहीं लगता। पर आज लग रहा है। अच्छा ही नहीं, खूब अच्छा लग रहा है। सबेरे उठा तो केवल हवा में ताजगी नहीं थी, उसका अपना मन जाने कैसी ताजगी से भरा-भरा थिरक रहा था।''[1]

---

1- मन्नू भण्डारी, 'आपका बंटी', पृ081

मन्नू जी बंटी की जन्मपत्री में एक बालक की स्थिति का जो चित्रण किया है, उसमें एक मनोविज्ञानिक सत्य यह है कि आज भी यही सब कुछ घट रहा है। स्त्री-पुरुष स्वयं तलाक के अपने दूसरे विवाह से भी सन्तुष्ट नहीं हैं। ऐसा कैसा हो रहा है। जीवन में अनेक घटनायें सामाजिक स्तर पर घट रही हैं। पर इस घटनाओं में स्त्री-पुरुष की तलाक की घटनायें बच्चे की समस्या एक नग्न आधार लिये हुये हैं। बंटी के तत्काल सन्दर्भ अजय और शकुन हैं। दूसरे शब्दों में वे सन्दर्भ अजय और शकुन के वैवाहिक सम्बन्धों का अध्ययन और उसकी परिणति के रूप में ही मेरे सामने आये। यहाँ मुझे भारत जी की बात सही लगी कि जैनेन्द्र जी ने स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों को जिस एकान्तिक दृष्टि से देखा है, उसका एक अनिवार्य आयाम बंटी ही है। शकुन और अजय तो आपसी तनाव की असहनीयता से मुक्त होने के लिये एक दूसरे से मुक्त हो जाते हैं, लेकिन बंटी क्या करे ? वह तो समान रूप से जुड़ा है, यानी खण्डित, निष्ठा उसकी नियति है। चूंकि वह शकुन के साथ रहता है, इसलिये बंटी को उसकी समूची स्थिति के साथ समझाने के लिये माँ-बेटे के आपसी सम्बन्धों को विश्लेषण के साथ ही कुछ गरिमामयी मिथ्या धारणायें और सदियों पुरानी 'मिथ' टूटने लगी। शकुन चक्की पीस-पीसकर बेटे का जीवन बनाने में अपने आपको स्वाहा कर देने वाली माँ नहीं थी, बल्कि स्वतंत्र व्यक्तित्व आकांक्षायें और आजीविका के साधनों से तृप्त माँ भी।[1]

मन्नू जी ने बंटी की माँ शकुन को जिस स्त्री के रूप में देखा है, उसमें उसका जीवन दो नितान्त विरोधी स्थितियों के रूप में है। ऐसा लगता है कि शकुन बंटी को माध्यम बनाया गया है और अजय से प्रतिशोध है। सार्थकता धरातल तो अन्तर्विरोध है। अजय शकुन बंटी के सम्बन्ध में

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'जन्मपत्री-बंटी की,' पृ0 677

सबसे बड़ी विडम्बना है कि बेगुनाह बंटी है। अन्त तक मां-बाप की भूल को भोगता है। क्योंकि अजय शकुन के सम्बन्ध में तनाव है। इस तनाव के मध्य पिस रहा है, उनका अपना बेटा बंटी। दोनों ही अपना-अपना अधिकार जमाते हैं। न्यायालीन प्रक्रिया में एक रास्ता केवल इतना है, जो न्याय की सीमारेखा है। समस्या का समाधान बैठकर सुलझाया जा सकता है, पर आपसी मतभेद वकील न्यायालय नहीं निपटा सकते, उनके पास तो केवल एक ही रास्ता है सम्बन्ध विच्छेद। युवा पीढ़ी का समझा क्या है, यह एक प्रश्नचिन्ह है, कुछ बन जाने या साधन मिल जाने से उनका सोच बढ़ जाता है। सभी मान्यताओं की सीमायें सम्बन्ध विच्छेद के बाद समाप्त हो जाती हैं।

बंटी की समस्या समस्या है। समस्या बंटी की है। तुम्हें शायद मालूम हो कि बंटी की मां ने शादी कर ली। मैं बिल्कुल नहीं चाहता कि अब वह वहां एक अवांछनीय तत्व बनकर रहे। इसलिये तय किया है कि बंटी को मैं अपने पास ले जाऊंगा, अबसे वह वहीं रहेगा। और फिर वे देर तक यह बताते रहे कि बंटी से उन्हें कितना लगाव है और इस नई व्यवस्था में वहां रहने से उसकी स्थिति क्या हो जायेगी।[1] इस विषय में जब मन्नूजी से बातचीत की, तब उन्होंने बताया कि वास्तव में बच्चे को मां के पास रहना चाहिये, पर मां शादी कर ले और एक बच्चा हो जाये तब उसकी अवहेलना हो, तब उसकी स्थिति क्या होगी ? पिता के पास भी यदि बच्चा पहुंच जाये तो उसे नई मां का प्यार नहीं मिलेगा। ऐसी अवस्था में बच्चे नई मां, नये पिता के मध्य अपने को अकेला उखड़ा हुआ तथा उसकी कोई बात सुन नहीं पाता। कितनी अजीब बात है कि दोनों ही अपने अधिकार को बच्चे (बंटी) पर चाहते हैं पर बंटी की तरफ कौन वफादार है ? यह विचार ही वास्तव में एक समस्या है।

---

1- पूर्वोक्त, पृ० 5

जब बंटी माँ के पास है, पर पापा मिलने आते हैं, बच्चे में जो उत्सुकता है, उसका चित्रण साक्षात रचनाकार ने किया है।

पापा बाहर ही मिल गये। बंटी देखते ही दौड़ गया और पापा ने उठाकर छाती से लगा लिया, बंटी वे और दोनों गालों पर ढेर सारे किस्सू दे दिये। इतनी देर क्यों कर दी, हम तो कब से राह देख रहे हैं तुम्हारा ही।

हीरालाल बीमार पड़ गया, कोई लाने वाला नहीं था।

माली ने आठ बजे वाली बात कही तो पापा बड़ी लापरवाही से बोले, हाँ-हाँ ठीक है, आ जाना आठ बजे। और बंटी को लेकर भीतर आ गये। कुछ किताबें, एक मैकेनो और टाफी का एक डिब्बा बंटी के सामने फैले पड़े हैं।

'पसन्द हैं सब ?'

'मुझे कैरम-बोर्ड और क्यू मास्टर चाहिये।' बड़े शरमाते हुये बंटी ने कहा।

'अरे तो तुम हमको लिख भेजते। तुम तो हमें कभी चिट्ठी ही नहीं लिखते। अच्छा कोई बात नहीं, अगली बार दिलवायेंगें।''[1]

इस प्रकार बंटी को माँ भी इन वस्तुओं की दिलासा देती है। कहानी के विषय में कहते समय। जबकि वह छोटा था तब उसके ममी ने खूब सारे खिलौने लाये थे। उसे अजीब से लगता है, कि उसे पापा से खास दिन ही क्यों मिलने दिया जाता है। उसके पूर्व के सोच में अन्तर है।

बंटी ने अपनी अलमारी खोली। ममी के खरीदे हुये और पापा के भेजे हुये खिलौनों से अलमारी भरी हुयी है। उसने नली वाली बन्दूक निकाली,

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 49

खूब बड़ी सी । और एकदम आंगन में झाड़ू लगाती हुयी फूफफी की पीठ में लली लगा दी । बोला, ' अब कहेगी कभी लड़की, कर दूं शूट ? गोली से उड़ा दूंगा याद रखना ।

बंटी जब बहुत लाड़ में होता है या बहुत नाराज तो फूफफी को तू ही कहता है ।

' और क्या ? अब तुम बन्दूक ही तो मारोगे ..... इसी दिन के लिये तो पाल-पोसकर बड़ा किया है ? तब पता नहीं क्यों ममी की कोई बात याद आ गयी और बंटी का हाथ अपने आप हट गया ।[1]

बंटी की मां ने जब विवाह कर लिया । तब उसके सामने जो समस्या है, वह है एक नये चेहरे की । मन्नू जी ने जन्मपत्री बंटी में यह बात स्पष्ट की है । नई मां और पिता के बीच एक बालिका। लगभग छः महीने बाद की घटना है । ड्राइंग रूम में अनेक बच्चे धमा-चौकड़ी मचाये हैं - उन्मुक्त, और निश्चिन्त । बारी-बारी से सब सोफे पर चढ़कर नीचे छलांग लगा रहे हैं । उस बच्ची का नम्बर आता है । सोफे पर चढ़ने से पहले वह अपनी नई मां की ओर देखती है । मां शायद उसकी ओर देख भी नहीं रही थी, पर उन अनदेखी नजरों में भी जाने ऐसा क्या था कि सोफे पर चढ़ने के लिये बच्ची का ऊपर उठा हुआ पैर वापिस नीचे आ जाता है । बच्ची सहमकर पीछे हट जाती है ।[2] जीवन की सार्थकता का मूल्य पति-पत्नि के साथ निर्वाह में है, जबकि अलग-अलग रहने में नहीं । बच्चा तो यह चाहता ही है कि ममी पापा साथ रहें पर विच्छेद के बाद कैसे सम्भव है ? बंटीऔर उसके पिता के सम्बन्धों में ममी के लिये बंटी का मोह आवश्यक है ।

---

1- पूर्वोक्त, पृ015

2- पूर्वोक्त, पृ0 5

'तुम्हारा मन कैसे लगता है सारे दिन ? बच्चों को तो खूब दोस्तों के साथ रहना चाहिये, खूब खेलना चाहिये।'

'लग जाता है। ममी खूब कहानियाँ सुनाती हैं,खूब। ताश भी खेलती हैं। फिर मैं किताबें पढ़ता हूँ। ड्राइंग बनाता हूँ। खूब सारी पेंटिंग बना रखी हैं मैंने। अच्छी-अच्छी तो ममी ने कमरे में लगा दीं।''

'अच्छा, इस बार हमारे लिये भी एक बनाना। हम भी अपने कमरे में लगायेंगे।'

तो एक क्षण को बंटी पापा का चेहरा देखता रहा। कह दें कि पापा कि हमारे साथ क्यों नहीं रहते ? इस घर में तो मेरी पेंटिंग लगी हुयी हैं। पापा इसी घर को अपना घर क्यों नहीं बना लेते ? अलग घर में क्यों रहते हैं ? इस घर में मेरा बगीचा भी तो है, खूब सुन्दर-सा।

'इस बार छुट्टियों में कलकत्ता चलोगे हमारे साथ ?'

बंटी ने बड़ी संशकित-सी नजर से पापा की ओर देखा। उसे साथ चलने को, क्यों कह रहे हैं ? पहले तो कभी नहीं कहा ?

''बहुत मजा आयेगा, खूब घूमेंगे, बोलो।'

'ममी चलेंगी तो चलूँगा।'[1]

माँ बच्चे अलग इसलिये नहीं होना चाहते कि माँ ही एक ऐसा व्यक्तित्व है, जो हमेशा छाया की तरह साथ रहती है। यही एक ऐसा मनोविज्ञान है कि बच्चे का सम्बन्ध माँ से अधिक बाप से कम रहता है। एक पुरानी कहावत है - बुरे काम का बुरा नतीजा, न मानो तो कर देखो, युग-युग तक अनवरत यात्रा करने वाली ये कहावतें यों ही जीवित नहीं रहती, समय-समय पर अपनी सच्चाई का लक्ष्य भी प्रस्तुत करती रहती हैं।[2]

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भंडारी, 'आपका बंटी,' पृ0 50-51

2- सारिका, 16-31 जुलाई, 1986

'आपका बंटी' उपन्यास कथा की धुरी में यही सब कुछ है । बुरे काम का नतीजा यह है कि शकुन, अजय अलग हैं, अपने विचारों से सम्बन्ध-विच्छेद हो गया । विचारा बंटी ने जब देखा कि ममी के पास अब उसके लिये समय नहीं है तब उसे लगता है कि अब कुछ वे डाक्टर जोशी के लिये कर रही हैं, उसके मन का आन्तरिक द्वन्द्व उसे ऐसा करने के लिये मजबूर करता है ।

वह जो स्वेटर बुन रही है, वह भी उसके लिये नहीं बुन रही । डाक्टर जोशी के लिये बुन रही है । जब वह डाक्टर जोशी इस घर में नहीं आये थे, ममी का हर काम, इस घर का हर काम बंटी के लिये ही होता था । अब सब कुछ डाक्टर जोशी के लिये होने लगा है । वह सब समझता है । हो, उसका क्या जाता है ।[1]

नारी-पुरुष के सम्बन्धों में एक जाल सा बुना जा रहा है, उस जाल में शिक्षित स्त्री-पुरुष ही फंस रहे हैं, क्योंकि उनका अपना अहम है, जिसके आगे वे झुकना नहीं चाहते हैं । आज की कामकाजी नारी की स्थिति भी यही है, उसका विचार है कि वह सब कुछ छोड़कर कोई समझौता नहीं कर सकती । ऐसा इसलिये है कि विश्वास खोता जा रहा है । शकुन उच्च शिक्षा प्राप्त कामकाजी नारी, उसका पति अजय दूसरे शहर में रहता है । शकुन एक कालेज की प्राचार्या है । शिक्षा के कारण शकुन में पारंपरिकता का विरोध करने का साहस उत्पन्न होता है । परिणामत: उसका अपना एक स्वतंत्र व्यक्तित्व निर्मित होता है । जिसकी टकराहट पारंपरिक दृष्टि से सोचने-समझने वाले उसके पति के व्यक्तित्व के साथ होती है । दोनों के दाम्पत्य-जीवन में एक ऐसी दरार आ जाती है जिसे पाटने में उसकी संतान (अपनी ही) बंटी भी सफल सिद्ध नहीं होती । पति अजय शकुन को तलाक देने से पहले ही दूसरी स्त्री के साथ विवाह कर लेता है, जिसके कारण शकुन और अजय का

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'आपका बंटी,' पृ0 93

सम्बन्ध विच्छेद अनिवार्य हो जाता है।[1] दाम्पत्य जीवन के उतार-चढ़ाव में बंटी के भविष्य पर एक प्रश्न चिन्ह लग जाता है। बंटी की माँ शकुन भी डा० जोशी से विवाह कर लेती है, उसे नये पिता का घर का माहौल रास नहीं आता।

'परेशान ममी, इधर-उधर देखती हुयी ममी, आवाज देती हुयी ममी ....... अच्छा किया यहाँ चला गया, अब वह यहाँ से जायेगा ही नहीं, कभी कभी नहीं।'

'पापा, बंटी भैया घर में है ही नहीं पता नहीं कहा चला गया ...।'

डाक्टर साहब के माथे पर बल .... 'ममी की गली आँखें पीला हो आया चेहरा। ममी। प्रिंसिपल होकर भी डाक्टर साहब से डरती हैं। यहाँ भी तो बोलती ऐसी थीं जैसे सबको डाँट रही हों, खाली उसे प्यार करती थीं। वहाँ उसे डाँटती हैं और सबको ..... अच्छा है, आज पता लगेगा। मन ही मन में एक सन्तोष है, कुछ ऐसा कर डालने का जो नहीं करना चाहिये ..... ममी को परेशान करने का।'

कोई सड़क से गुजरता तो बंटी छिप जाता। कहीं हीरालाल या माली दा ही इधर से आ जायें और उसे देख लें तो ? बस सारा खेल खत्म।[2]

जीवन का यह क्रम बंटी के लिये सामाजिक है, क्योंकि ममी के व्यवहार में अन्तर पड़ गया। नये पिता क्या आ गये जीवन की उनकी शतरंज की चाल जो कि बंटी के लिये थी, बंटी को लगता है कि सब खेल खत्म। यह नये पिता के कारण ममी के घर का माहौल रास नहीं आता, कैसी बिडम्बना है। मन्नू जी ने मनोवैज्ञानिक आधार लेकर एक बच्चे की मानसिक दशा का वर्णन किया है, जो ममी उसे प्यार से एक पल अलग नहीं करती, वे, आज उस मन से भी अलग कर रही हैं, तथा नये पापा की बात मानती है, यह उसका

---

1- डा०अनीता राजूरकर, 'कथाकार मन्नू भण्डारी,' पृ० 79

2- मन्नू भण्डारी, 'आपका बंटी' पृ० 152

अन्तर्द्वन्द्व अपनी ममी को छोड़ पापा के पास जाने को आतुर है। बच्चे का प्रारम्भिक अवस्था में सोचने की जो शक्ति है, उसमें निर्णय की समझ नहीं, क्योंकि कल आज कल को नहीं जानता, उसे तो केवल फर्क इतना नजर आता है कि जीवन का जो सत्य है, आज ममी का प्यार नहीं, तथा नये पापा का प्यार तो मात्र केवल दिखावा भर है। पापा के लिये उसके मन में जो जगह है, उसके कारण सीधा-सादा कारण ममी द्वारा की जा रही उसकी उपेक्षायें। ममी की स्थिति का बंटी के कारण जो स्थिति है, मन्नूजी ने उसका चित्रण व्यवहारिक पक्ष के आधार पर किया है।

"बोल, बोल, तू क्यों यह सब करने पर तुला हुआ है? क्यों अपनी और मेरी जिन्दगी में जहर घोलने पर तुला हुआ है? कौन-सा कष्ट है तुझे वहां पर? क्या तकलीफ है? ओह। पर ममी को देखकर तो तसल्ली नहीं हो रही। कोई डर भी नहीं लग रहा, कुछ भी तो नहीं लग रहा।"

"रोज एक हंगामा खड़ा कर देता है। रोज एक तमाशा। कोई कब तक सहेगा और आखिर क्यों सहेगा?" बायें गाल पर तड़-तड़ की आवाज हुयी। ममी ने शायद मारा है।

"ठीक है, तेरे पापा तुझे अपने पास बुलाना चाहते हैं, मैं भेज दूंगी। वहीं रहो -" ममी उसे घसीटती हुयी ले गयी और एक तरफ से उठाकर गाड़ी में पटक दिया।[1]

स्थिति का प्रभाव बच्चे पर अवश्य पड़ता है। यही कारण है उसके खेलने खाने में यदि कोई रुकावट है, साथ ही जो प्यार उसे मिलना है, उसमें जरा भी कमी आ जाये तो बच्चा विद्रोह अवश्य करता है। बंटी से विद्रोह का कारण मात्र इतना है जो प्यार उसे मिलना चाहिये था, नहीं

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 154

मिल रहा है । तभी तो पापा के पास जाने की जिद् है । क्या पापा के पास बंटी पहुँचकर किसी तरह खुश हुआ या नहीं, इस बात के लिये, पापा की दूसरी पत्नी जो बंटी की सौतेली मां है, या नयी मां है, पर निर्भर करता है । पुरानी लीक से चली आ रही कहावत की नयी मां कभी प्यार नहीं देती, अर्थात् सौतेली मां सौतेली ही होती है, यह पुराना घिसापिटा विचार आज भी ज्यों का त्यों है । दीर्घकाल से चली आ रही, सौतेलेपन की परिभाषा पर बुराई का मुलमा ज्यों का त्यों है । एक आध दिन की बात दूसरी होती है, उस झुलझाव में कोई किसी का साथ ही नहीं । मानसिक्ता का बोध आज इसी कारण से बढ़ता चला आ रहा है ।

पापा ने उसी अपनी बांह में समेट लिया तो बंटी के मन में अभी का जमा हुआ गुस्सा जैसे वह आया । पापा से चिपका चिपका ही वह रो पड़ा । पापा ने कसकर उसे सीने से चिपका लिया, "रो मत बेटे, रो मत," और उनकी अपनी आवाज भी भीग गयी ।[1]

< < < <

मैं फिर कभी तुम्हारे पास आऊंगा भी नहीं । पापा के पास ही रहूंगा, हमेशा," ममी उसके बाल और गाल ही सहलाती रहीं । फिर धीरे से बोली - 'बंटी ।'

बंटी जैसे अगला वाक्य के लिये तैयार । 'अब कहो कि मत जा ।'

"तेरे लिये क्या लाऊं, बेटे, तू अपनी पसन्द की चीजें बता दे । वही सब ....... ।"[2]

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 160

2- वही, पृ0 162

बंटी का पापा के घर आ जाने पर वह अपनी सौतेली माँ के पास भी तैयार नहीं हो पाता । ऐसा क्या है, क्या उसकी नयी माँ का व्यवहार ठीक नहीं, डाँट-डपट, या नयी माँ के बच्चे के साथ खेलने के कारण उसके व्यवहार में फर्क है । जीवन का यह साक्षात् आये दिन परिवारों में देखने को मिलता ही रहता है । एक लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती । बच्चों की लड़ाई तो मेलजोल का परिणाम है, पर घर की लड़ाई में तो वह हिस्सा नहीं, जो बाहर की दुनिया में है । घर में उसे लगता है कि चीनू को गोद में लेकर प्यार करते हैं, मुझे नहीं ।

'बहादुर । चीनू को इधर लाओ ।' एक लड़का गोद में एक गोरे गुदगुदे से बच्चे को लेकर भीतर आया ।

'चीन बेटा ।' पापा ने हुमसकर बाहें फैलाई और उस बच्चे को गोद में ले लिया । बंटी बे डरा ड पापा क्या सबको इसी तरह सबको गोद में लेते हैं ?

'बंटी, यह तुम्हारा छोटा भाई है, चीनू । खेलोगे इसके साथ? खूब हँसेगा ।'[1]

बंटी को यह व्यवहार अखरता है । तभी तो इस वातावरण से भागना चाहता है । उसे होस्टल भेजने की तैयारी है । जीवन की यह यात्रा बंटी की अपनी यात्रा नहीं, न जाने कितने अनगिनत बच्चों की यात्रा है । फिर भी मन्नू जी का यह विचार कि बंटी का क्या कसूर है ? जो उसको सजा दी जा रही है, होस्टल में जाने की । शिक्षित परिवारों में बच्चों की स्थिति पति-पत्नी के स्वभाव पर निर्भर करती है । पति पत्नि का यह अलगाव बाद जीवन को शिक्षित परिधि से आया है, जो बच्चों को शून्य की स्थिति में खड़ा कर देता है । बंटी की भी यही स्थिति है ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त पृ० 181

मन्नू जी का ' एक इंच मुस्कान ' सहयोगी रचना है । मन्नू जी ने अपने प्रेमी पति श्री राजेन्द्र यादव के सहयोग से ' एक इंच मुस्कान ' उपन्यास की रचना लिखी है । सनातन सवाल को एक इंच मुस्कान में उठाया गया है । पुराना सवाल जिसकी प्रक्रिया आज भी ज्यों की त्यों है । अमर इस उपन्यास का प्रमुख पात्र है, जो एक कलाकार है, रंजना उसकी सहयोगी ही नहीं सह-धर्मिणी भी है । कलाकार की कौन प्रेरणा है, इस मन के संघर्ष में कलाकार की आत्मा से कोई ज्यादा नहीं पहिचानता । अमला उम्र भर की प्रेरणा है । जैसा कि आज की तमाम सादे रचनाकारों की कथाओं में प्रेमिका उच्च वर्ग की होती है, उसी को सम्भवत: लेखिका ने प्रेरणा का श्रोत ढूंढा है । निश्चित आकार-प्रकार कुछ भी हो, एक ओर तो अमला अपनी संपत्ति, सुन्दरता और अभिव्यक्ति के माध्यम से कलाकार अमर से प्रेम करती है, इस प्रेम के बंधन के मध्य उसकी पत्नी का त्याग एक महत्वपूर्ण आधार है ।

नारी जीवन की कड़ी भी कलाकार या पति जो भी महत्वपूर्ण है, भारतीय संस्कृति धर्म तो पति-पत्नि की सद्भावना में सनातन शब्द को ऐसा जोड़ रखा है, जहाँ नारी का त्याग ही महत्व है । रंजना दाम्पत्य जीवन के सुख के लिये हर तरह से अपने को समर्पित कर देती है, पर उसे अपने जीवन के हर क्षण अर्धांगिनी का सुख नहीं मिल पाया है । कर्तव्य और भावना की लड़ाई में एक परेशानी है, जो कच्चा होता है, उसका दु:ख अवश्य है । डा0अनीता राजूरकर के एक इंच मुस्कान की समीक्षा करते हुये अपनी पुस्तक ' कथाकार मन्नू भण्डारी ' में लिखा है -'' जीवन के दो पुल हैं - भावना और कर्तव्य । इन दोनों में से यदि एकाकी पुल कच्चा हुआ तो वह टूट जाता है और उसके जीवन का प्रवाह उसी दिशा में बह निकलता है । अमर के जीवन की भी यही बात लगती है । वह अपने जीवन में उक्त दोनों पुलों को मजबूत बनाये रखकर अपने जीवन के प्रवाह को समाज द्वारा स्वीकृत लक्ष्य की ओर बहाने में असफल सिद्ध हुआ-सा लगता है । ''[1]

आपके सनातन सत्य से जुड़ी यह कथा मन की उन चंचल भावनाओं पर अवश्य प्रकाश डालती है, जो जीवन के रहस्य की परतों से दबाना चाहते हैं। ऐसे तमाम सन्दर्भ जो आज की कहानियों।उपन्यासों में अवश्य देखने को मिलता है। आचार्य हरजारी प्रसाद द्विवेदी, अमृता प्रीतम, ममता कालिया, उषा प्रियवंदा, नरेन्द्र कोहली, इंतजार हुसेन, रांघेय राघव, जोगेन्द्र पाल, वीरेन्द्र कुमार जैन, बलराम, फणिषा मजूमदार, हीरामणि शर्मा, गोपाल शेखरन, डा0बच्चन सिंह, उमा कांत मालवीय, अंचल, प्रियवंद, कमला नसीम आदि ने भी इन सन्दर्भों को अपनी कहानी।उपन्यास में जोड़ा है। मानवीय संवेदना कुछ भी हो, पर प्रेम उसका आधार अवश्य है। पुराने एवं नयी पीढ़ी के कथाकार ने जीवन को जितना निकटता से देखा है, उसका रूप हमारे सामने विस्तृत रूप से है। पति-पत्नि का सम्बन्ध एक अलग बात है, पुरातन सत्य तो, पति पत्नि की एकनिष्ठा को जरूर स्वीकार करता है, पर पति पर बंधन का कहीं उल्लेख नहीं, पत्नि ही त्यागमयी हो, यह परिभाषित शव्दावली है।

नरेन्द्र कोहली ने 'धर्म' नामक कथा में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि धर्म की परिभाषा आखिर क्या है ? किसके आचरण को हम धर्म कहेंगे - युधिष्ठिर के आचरण को जिसने पितामह भीष्म के कहने पर दुर्योधन के साथ जुआ खेलना स्वीकार कर लिया था और हारने पर अपनी पत्नी को अपमानित करने का अधिकार दुर्योधन को दे दिया था ? या भीष्म के आचरण को जिन्होंने यह जानते हुये भी कि पाण्डवों का पक्ष न्याय का है, कौरवों का साथ दिया।[1] या फिर कृष्ण को आचरण को जिन्होंने अपने सगे मामा की हत्या कर दी थी।[2] जबकि इस सन्दर्भ को एक नये ढंग से समझाया है,

---

1- डा0अनीता राजूरकर, 'कथाकार मन्नू भण्डारी,' पृ0 78

2- नरेन्द्र कोहली, 'धर्म,' (सारिका, अक्टूबर 85, 1-15, पृ018)

अपनी कथा मिथहास का नयद दर्शन में अमृता प्रीतम ने । मैं एक कहानी लिखना चाहती थी, उस अकेली औरत की कहानी, जिसने एक कालेज की प्रधानाचार्य होने के नाते सारी जिन्दगी किताबों की दुनिया में गुजार दी है, पर उसने मेरी दोस्ती को कोई भी व्यक्तिगत सवाल पूछने का अधिकार नहीं दिया, सिर्फ कभी पिछले हुये पलों में बस इतना-सा बताया था - जिन्दगी में मोहब्बत के दो चार पल आये भी तो क्या ? और ऐसे वाक्यों के बाद हमेशा एक चुप फैल जाती थी - एक वीरानगी की तरह ...... अचानक इस चुप के वीराने में एक दिन मुझे महसूस हुआ जैसे वह औरत एक तिमंजिला इमारत है, जिसके खंडहर बोलते हैं कि उसकी पहली मंजिल जरन्रर किसी की मुलाकात से आबाद हुयी होगी ।[1] राजा, राज कुमारी, राजकुमार, रानी की कहानी प्रेम-सम्बन्धों से जुड़ी है, पर इन सबमें आचरण का हिसाब किताब कहीं न कहीं है, एक ओर पुरातन सत्य है, जिसे जीवन-दर्शन में परखा गया । यह बात तो आज से नहीं वर्षों से चली आ रही है । इतना ही सत्य तो जानने की जरन्रत है कि निर्वासन और अकेलेपन का दण्ड मिल जाने पर जो आदम और ईव का स्वर्ग से अलग हो जाने पर जो खुशी मिली है, उसमें भी पुरातन सत्य की ही बात महत्वपूर्ण है ।

आज की भारतीय नारी का चिंतन पक्ष, पुरातन सत्य पर आधा-
मस्ति व्यंकटेश अय्यंगार
रित है । 'कश्ती' (उर्दू) इंतजार हुसैन, अंतिम दर्शन (कन्नड), महाभारत का दूसरा युद्ध (उर्दू), जोगेन्द्रपाल, स्वर्ग से बहिष्कृत (रूसी) आंद्रेज उपिरज, ड्यूमे क्लीसिया ( अमरीकी ) लेंग्स्टन ह्यूजे, वरब्बस (स्वीडी) पाउन सागररिबस्त, रेत की किताब ( स्पेनी) जार्ज लुईं बोर्खेस[2] कहानियाँ

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- सारिका अगस्त 85 प्रथम पक्ष, पृ0 31 ( मिथहास का नया दर्शन)

2- सारिका प्रथम पक्ष, अक्टूबर, 85

विदेशी भाषा के रूपान्तर के रूप में हिन्दी में आयी है, जिसमें नारी मनोविज्ञान को उसके पुरातन की बात को स्पष्ट करती है। जीवन को सार्थकता में कहीं न कहीं नारी का वह हिस्सा व्यक्त करता है जो नारी के दोहरे मापदण्ड को स्थापित करने को बाध्य करता है। भारतीय लेखकों ने महाभारत, रामायण, जैन कथाओं में नारी के प्रेम व्यापार को जो पक्ष दिया है, उसके मूल में विपत्ति है, जो पुरातन से जुड़ी कथायें हैं। द्रोपदी, कुन्ती की अपनी प्रेम-कथायें भले ही कुछ रही हों, पर मानवीय इतिहास के इस दृष्टिकोण को तो स्पष्ट करती है कि जीवन में प्रेम का सत्य हमेशा से संघर्ष करता रहा है, उसे हमेशा से ही त्याग की आवश्यकता रही है।

डाक्टर भगवत शरण उपाध्याय से प्रसिद्ध दार्शनिक वर्ट्रेंड रसेल ने कहा था - "भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता है प्रकृति का अधिक से अधिक मानवीयकरण, यहाँ जड़-पर्वत, हिमालय एक वत्सल पिता है, उसकी एक पत्नी है मैना, उसकी एक कन्या है, उसका एक जामाता है यहाँ जो वस्तुतः एक नदी है, एक ममतामयी वत्सल माँ भी है यहाँ तुलसी जो एक सहज पौधा है, मंग दायिनी कल्याणप्रद माँ है, म पीपल वासुदेव है।"[1] निश्चय ही कहीं न कहीं प्रेमिका जरूर होगी, क्योंकि संघर्ष के लिये उसकी आवश्यकता है। जीवन के सार्थक मापदण्ड में प्रेमिका, प्रेमी के विषय में कवियों ने इतनी भरमार की आदिकाल से आज तक उसका इतिहास संघर्ष की कहानी कहता है। रामधारी सिंह दिनकर में उर्वशी की प्रेमगाथा को पूरवा से जोड़ी है, तब जायसी की पद्मावत की कथा तो आध्यात्मिक होते हुये भी जन-जीवन को प्रवाहित करती है। राजा रतनसिंह एवं पद्मावती की कहानी में प्रारम्भ से अंत

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- सारिका, अक्टूबर, प्रथम पक्ष, 1985

तक संघर्ष ही है । राधा कृष्ण के वियोग में अंधी हो जाती है, इस बात को सूरदास ने अपनी अन्तरज्योति से लिखा है । आज भी प्रेम-कथाओं से इतिहास भरा पड़ा है ।

मन्नू जी जीवन के साक्षात को एक निश्चित पुरातन आयाम 'स्वामी' उपन्यास में दिया है, जो एक सत्य है, जिसे झुठलाया नहीं जा सकता । इस कथा के पहले प्रम्लोचा की गाथा हो उठी है, जिसमें एक बार फिर प्रम्लोचा, प्रियतम ऋषि कंडु के आग्रह के सामने अपने भीतर की चाह के कारण प्रस्थान की स्थिति को स्थगित कर देती है ।

एक दिन की बात है, सूर्यास्त हो रहा था, गोधूलि वेला में ऋषि कंदरा से बाहर निकले उत्कंठिता प्रम्लोचा ने पूछा -" ऋषि प्रवर कहाँ जा रहे हैं ?"

देख रही हो संध्या हो रही है, संध्योपासना का समय हो गया है, उसी हेतु जा रहा हूँ ।

महर्षि कंडू की बात सुनकर प्रम्लोचा हंसी, इतने वर्षों में क्या पहली बार सूर्यास्त हो रहा है । क्या आज पहली बार आपको संध्योपासना की सुधि न आयी है ।

क्या कहती हो, अभी आज प्रात: ही तो तुम आयी हो और आज गोधूलि बेला में मैं संध्योपासन के लिये जा रहा हूँ, कोलिविसुध महर्षि कंडु ने कहा :

" ब्रह्मन नौ सौ वर्ष सात महीने तीन दिन बीत चुके हैं, इस अवधि में सैंकड़ों बार सूर्योदय और सूर्यास्त हुये हैं, प्रम्लोचा की हँसी रुक नहीं रही थी ।"

"मुझे भरमाओ मत आज ही आज तो तुम मिली हो, ताजगी में अभी तक खिली हो, मैं विमुग्ध नहीं हो सकता ..." मुनिवर कंडू ने कहा।

नहीं-नहीं महर्षि सुख आनंद की स्फीति में काल के व्यतीत होने का आपका आभास ही कुंठित हो गया था न.... प्रम्लोचा के स्वर में गंभीरता के साथ मुनि के कुपित हो जाने की सम्भावना का भय था।"[1]

जीवन में प्रेम का अपना स्थान है, इस स्थान को पाने के लिये हर व्यक्ति लालायित रहता है। राजा से रंक तक, इसके आनन्द का स्वाद को प्राप्त करने के लिये हर सम्भव प्रयत्न करते हैं, फिर साधारण व्यक्ति के सोच में फर्क ही क्या ? आज तो हर मनुष्य किसी न किसी प्रेम में कहीं न कहीं डूबा अवश्य है। एक नयी-पुरानी कलायें प्रेम को अभिव्यक्ति करती मिलेगीं। देवी-देवता भी प्रेम शब्द को अंगीकार किये हुये हैं। तब कवि, कथाकार की मानसिकता इसे क्यों न स्वीकार करेगी। एक समस है, जीवन जीने के लिये होता है तब प्रेम उसमें क्यों न हो। माँ, बाप का सम्बन्ध बच्चे से होता है, तब जो प्रेम है, उसमें वात्सल्य का रूप झलकता है लड़कपन का प्रेम भावुक है, इसमें दुराव छुपाव नहीं, युवा अवस्था के प्रेम, ऐसी जकड़न है, जो आत्मीय सुखों की खोज करता है, इस प्रेम का पाना खोना, ही जीवन की मर्यादित सीमा है, इसके बाद आता है, दाम्पत्य प्रेम जो पति-पत्नि का प्रेम है। इस निश्चय सीमा में युवा अवस्था के प्रेम का महत्व और सुख-दुःख पुरातन सत्य की तरह जीवित है, इस प्रेम को खोना, पाना दोनों की प्रमुखता है। इस प्रेम को पवित्र प्रेम के रूप में जाना जाता है, जबकि पवित्रता तो हर प्रेम में होती है।

---

1- सारिका, अक्टूबर 1985 (प्रथम पक्ष), पृ0 53

प्रेम तो भावना के सम्बन्धों का आधार है ।[1] जीवन के सम्बन्धों का आधार भी प्रेम पर आधारित है ।

'स्वामी' उपन्यास के प्रारम्भ में ही मन्नू जी ने दाम्पत्य एक प्रेम-कथा के विषय में लिखा है कि इसमें सन्देह नहीं कि कहानी की थीम और सौदामिनी घनश्याम के चरित्र उनके सम्बन्धों के समीकरण ने मुझे आकृष्ट किया । पूर्व प्रेमी नरेन्द्र की कथा तो इसी से जुड़ी है । शरतचन्द की कहानी 'स्वामी' का लेखन मेरे द्वारा हो, यह मात्र एक संयोग ही है ।[2] ऐसी पथभ्रष्टा कुलवधू का रूप नहीं दिया जो पति के चरणों में गिरकर अपने उस गुरुतर पापकर्म की क्षमा याचना मांगे, वह छटपटाहट नहीं है । सौदामिनी ( मिनी ) को एक नये रूप में प्रस्तुत कर आधुनिक परिवेश को जन्म दिया है । वास्तव में मिनी ने कोई पाप नहीं किया, मन की सम्बन्धों के कारण उलझनें थीं, जिसके कारण मिनी उलझाती रही । 'स्वामी' की कथावस्तु के तीन आधार हैं, एक पुरातन दूसरा, प्रेमी जो आधुनिकता का बोध है, विद्रोह भी, तीसरा जीवन की सार्थकता में एक आचार है, दाम्पत्य जीवन का महत्व, जिसमें परिवार का आधार निश्चय सीमा में है । हर पल, हर विश्वास में जीती मिनी जब उलझनों से घिरी है तब प्रेमी नरेन्द्र की याद, ससुराल में वातावरण का अभाव, जीवन केउलट फेर को एक बार अवश्य हिला देता है । इस त्रिकोणी संघर्ष में माँ का एक गुरुतर भार है । माँ का दिशादर्शन मिनी कोएक ऐसे अध्याय से बचा लेता है, जो मात्र आधुनिक है । सीदा-साधा, जीवन का घनश्याम जो पति है, वह मिनी की भावनाओं को समझ नहीं पाता पर क्षमा, दया की मूर्ति बन जाता है । कहानी के प्रारम्भ से अन्त की कथा में लेखिका ने पात्रों

---

1- सोनाली, पृ०1 ( डा०रामकृष्ण गुप्त )

2- मन्नू भण्डारी, 'स्वामी,' पृ० 5

में जो परिवर्तन किया है, वह स्वाभाविकता तथा यथार्थ के धरातल पर है। नरेन्द्र मिनी के पूर्व के सम्बन्धों की कड़ी ही मिनी के उलझाव का कारण है, जिसे मन की भटकन या आधुनिकता का बोध कहा जा सकता है। नरेन्द्र प्रेमी है नये सन्दर्भ, नयी आधुनिकता का, जिसे समाज का जो रूप है, भले ही न माने, पर उसे अपनी सन्तुष्टि तो अवश्य ही है। मन्नू जी ने मिनी पर आधुनिक वातावरण का प्रवाह गढ़ा है। इसे बातचीत के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

मैं दूसरे की बात नहीं करती, आपसे ही एक बात पूछती हूँ। मान लीजिये, आपकी बहिन किसी दूसरी जाति के एक बहुत हीं मामूली से परिवार के लड़के से शादी करने लगे तो ?

तो क्या जरूर करे। मैं उसका साथ दूंगा। घर वाले विरोध करेंगे तो घर वालों से लड़ूंगा। मैं उसकी शादी करवाऊंगा। नरेन्द्र के स्वर से लगा जैसे मिनी के इस प्रश्न पर अपने-अपने को बेहद अपमानित महसूस किया। मिनी समझाती क्या है उसे ? उसका चेहरा फिर तमतमा आया।

पर मिनी न स्वर से विचलित हुयी, न चेहरे से। वैसे ही मुस्कराती हुयी बोली, और अगर आपकी भाभी किसी से प्रेम करने लगे तो ? नजरे उसने नरेन्द्र के चेहरे पर टिका दीं।

'क्या ?' कुछ चौंककर नरेन्द्र ने पूछा।

'चौंके क्यों ?' क्या आप भी यही मानते हैं कि शादी के बाद औरत का प्रेम करने का अधिकार समाप्त हो जाता है ? यह सौभाग्य केवल पुरुषों को ही प्राप्त है ?''[1]

---

1- मन्नू भण्डारी, 'स्वामी,' पृ0 4-5

मिनी में आधुनिकता का जो बोध है, उससे स्पष्ट है कि मिनी विवाह के बाद किसी अन्य से प्रेम का विरोध नहीं करती । उसके मन में पुरातन के प्रति विद्रोह की भावना है । मेरी दृष्टि में सौदा मिनी ने कोई पात्र नहीं किया था - वरन सम्बन्धों की कुछ ऐसी मनोवैज्ञानिक उलझनें थीं, जिसमें वह निरन्तर उलझाती ही चली गयीं । पारिवारिक कलह और अपमान ने उसके आत्म सम्मान को इस तरह आहत किया कि उसने घर छोड़ दिया । लेकिन स्वतंत्र निर्णय लेने की अपनी इस क्षमता के कारण वह नरेन्द्र के साथ जाने के लिये भी अपने को तैयार नहीं कर पायी ।[1] मिनी का प्रेम में आधुनिकता का जो रूप है, उसमें उसकी भावना स्वतंत्र है । जीवन की पहल में प्रेम की मानसिकता का अपना स्थान है । निश्चय ही मिनी का प्रेम भावात्मक ही है ।

प्रेम के विषय में एक बात जान लेना जरूरी है कि नारी का प्रेम त्याग की मूर्ति की तरह है, जबकि पुरुष का प्रेम सम्बन्धों की ओर ध्यान देता है । जीवन में प्रेम नारी पुरुष का ही है, ऐसा नहीं हर जीव-जन्तु पशु-पक्षी भी प्रेम करते हैं । मानव-जीवन को प्रेम की तुलना पक्षियों से कवियों ने की है । ''जब चलूँगी, नरेन दा ...... '' उठते हुये मिनी बोली । गुँथी हुयी मालाओं को बड़े जतन से उसने अपने आँचल में समेटा । नरेन्द्र का बड़ा मन हुआ कि उन मालाओं में से एक माला लेकर अपने हाथ से मिनी के जूड़े में बांध दे । मन की इस आकांक्षा पर अंगुलिया मसलकर ही वह काबू पाता रहा ।

< < < <

' तो मैं चलूँ ? और हाथ जोड़कर मिनी मुड़ गयी । नरेन्द्र एकटक जाती हुयी मिनी को देखता रहा ।[2]

---

1- मन्नू भण्डारी, ' स्वामी, ' पृ07

2- वही, पृ0 13-14

प्रेम की अठखेलियों का जो रूप है, उसे मन की गहराईयाँ स्वच्छ वातावरण की होती हैं, जिसमें भेदभाव की सीमा नहीं होती ।

" क्या ड ड ड ? चुराने क्यों आयी तोड़ने आयी थीं । " तुनककर मिनी ने कहा ।

" अच्छा बिना पीछे किसी के बगीचे से फूल तोड़ना चोरी नहीं कहलायेगा ? " कौतुक भरे स्वर में नरेन्द्र ने पूछा और थोड़ा पास सरक आया ।

" नहीं बिल्कुल नहीं । मैंने मेहनत करके फूल तोड़े हैं, उसे चोरी कहोगे तुम ? "

हँसता हुआ नरेन्द्र एकदम मिनी के करीब आ गया और उसके आँचल में से एक मुट्ठी फूल लेकर बोला, " अच्छा बताओ तो, इसे तुम क्या कहोगी? "

मिनी ने खूब गुस्से से एक बार नरेन्द्र की ओर देखा और फिर झट से अपनी झोली उलट दी, " लो सँभालो अपने बगीचे के फूल । " फूल चारों ओर छितरा गये और अपमान से मिनी का चेहरा सुर्ख हो उठा ।[1] जीवन में प्रेम की वह स्थिति है जहाँ एक दूसरे को मनाने में बड़प्पन ही होता है । मन की विभिन्न दशाओं का मन्नू जी ने जो रूप दिया है, उसमें निकटता है, एक बात साफ है, प्रेमी-प्रेमिका जीवन का आनन्द तो छोटी-छोटी घटनाओं से ही है । प्रेमिका की स्थिति तो कमजोर जब होती है, जबकि उसका विवाह प्रेमी से न होकर किसी और से होता है । एक पुरातन सत्य इस व्यक्ति को पति स्वामी के रूप में स्वीकार करने को बाध्य करता है । मन्नू जी ने अपनी ही कहानी ' एक कमजोर लड़की की कहानी ' शरतचन्द के स्वामी के भावों को एक अनुवाद के रूप में रखा है जो जीवन के लक्ष्य की पूर्ति अवश्य करता है ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 19

आलोच्य उपन्यास मन्नू जी की मौलिक रचना भले ही नहीं है, पर नये परिवेश को जन्म देने वाली रचना तो अवश्य है। वास्तव में एक चरित्र तो मिनी का तब शुरु होता है, जबकि दाम्पत्य जीवन में एक अलगाव सा अनुभव हो। मिनी उसका प्रेमी नरेन्द्र पति घनश्याम के मध्य उनके मन में सूक्ष्म भावनाओं के उद्वेलनों की भरमार है। मिनी का सहपाठी नरेन्द्र है। वह उसका पड़ोसी भी है। दोनों के बीच में अनुराग की सहज भावना है। उस अनुराग को पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों के सहवास-जन्य प्रेम का बहुत ऊंचा दर्जा दे रखा है।[1] दोनों यदि प्रेम विवाह के बन्धन में बंध जाता तो कथा ही समाप्त हो जाती। समाज परिवार ने इन दोनों के साथ नियति को जोड़ दिया, यही कारण है कि उसके मामा द्वारा तय किये गये रिश्ते में मिनी घनश्याम के साथ वैवाहिक बंधन में बंध जाती है। मिनी की घनश्याम के प्रति अनुराग भावना नहीं जागती, वह पहले ही दिन घनश्याम के प्रति मन में जो भावना लायी है, तथा घनश्याम का जो भोलापन है, उसकी अन्त:कथा महत्वपूर्ण है, लेखिका ने उसे एक स्वाभाविक आयाम दिया है।

"नहीं-नहीं, वह किसी की पत्नी बनकर नहीं रह सकेगी, नहीं रहेगी। लाख देव पुरुष हो, जो व्याह कर लाया है, वह अपना अधिकार छोड़ेगा भला ? वह उसे पकड़ेगा, उसे बांहों में लेगा ...... इस कल्पना मात्र से उसका मन घृणा से भर आया। नहीं, नहीं वह साफ शब्दों में कह देगी, पर क्या कहेगी, यह वह समझ नहीं पायी। एकाएक एक विचार उसके मन में कौंधा। उसने कमरे के कोने में चटाई बिछायी और दीवाल की ओर मुंह करके लेट गयी। समझदार व्यक्ति के लिये यही क्या काफी नहीं है।

" " " "

---

1. [illegible] 'कथाकार मन्नू भण्डारी' पृ० 82

"तुम जमीन पर सोना पसंद करती हो तो कम से कम गद्दा तो बिछा लो, शरीर दर्द करने लगेगा न।" एक बहुत ही मुलायम-सा स्वर सन्नाटे को चीरता हुआ कमरे में बिखर गया। मन में जमी सारी घृणा के बावजूद एक बार मिनी का मन हुआ, उसके शरीर की चिन्ता करने वाले का कम से कम एक बार चेहरा तो देख ले। पर वह टस से मस नहीं हुयी।

जोर जबरदस्ती की बात तो दूर एक हल्का-सा आग्रह तक नहीं।[1]

नारी की स्थिति ऐसे में सुविधाजनक हो जाती है, परिवार की औरतें भी तरह-तरह की बातें सोचती हैं। जीवन में यह एक ऐसा क्षण है जिसमें एक समझक की एक दूसरे को आवश्यकता है, जबकि घनश्याम को दो-तीन दिन में ही देखने-परखने से पता लग गया कि पति को लेकर उसके मन में ही विरक्ति नहीं, परिवार के हर सदस्य भी उसके प्रति उदासीन हैं। इससे मिनी के मन में एक द्वन्द्व है कि वह जो कुछ सोचती थी, उसमें संतोष, और प्रसन्नता है। मिनी इस घर से नहीं जुड़ सकी न परिवार से, यही सोचते जीवन जीने लगी। उसके मन में एक बात घर कर गयी, घर का सबसे अधिक उपेक्षित और तिरस्कृत ही उसका पति है, उसके मन में पहली बार मन करुणा से भर गया।

समय के साथ नारी जीवन की करुणा बढ़ पाती, साथ ही मन कुछ पाने की इच्छा रखता है, यह सब संस्कारजन है। एक दिन सिरदर्द के कारण लेट गयी। "बड़ी देर तक करवटें बदलते-बदलते कब उसकी झपकी लग गयी, उसे पता ही नहीं। अचानक शरीर से किसी चीज से टकराने से उसकी आँख खुल गयी। देखा, पति सिरहाने बैठकर पंखा झल रहे हैं। पलक झपकते ही वह उठ बैठी। अचानक मुँह से निकल गया, "यह क्या कर रहे हो?" मन में कहीं कौंधा, पति से प्रथम संभाषण।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भण्डारी, 'स्वामी,' पृ0 41-42

"उठो नहीं, लेटी रहो। नींद उचट जायेगी तो फिर सिर दर्द करने लगेगा।" मिनी की आँखें उठीं और पति के चेहरे पर टिक गयीं। पहली बार उसने पति का चेहरा इतने निकट से देखा .... कैसी सौम्य काया और निर्मल हंसी। आक्षेप, आरोप, उलाहना या व्यंग्य, कहीं भी तो कुछ नहीं। न चाहते हुये भी मिनी पूछ बैठी।

" पर तुमको कैसे मालूम कि मेरे शिर में दर्द है ?" घनश्याम हंसे, " तुम्हारी तकलीफ की बात मैं नहीं जानूंगा भला।" कोशिश करके भी मिनी अपनी नजरें वहाँ से हटा नहीं सकी।[1]

जीवन का यह सत्य मिनी को दाम्पत्य के पहले अध्याय में मिला। फिर भी उसके मन में प्रेमी नरेन्द्र के प्रति कुछ हल्का सा द्वन्द्व बना रहा। पति के प्रति परिवार का अपमान तथा उसकी उपेक्षा ने एक स्थिति ऐसी पैदा कर दी कि सास और मिनी में एक बात से युद्ध ठन गया। क्योंकि उसके पति की अवहेलना अधिक हो रही थी।

" खिलाफ कौन कहेगा ? चेहरे पर वही निर्मल मुस्काना फिर बहुत लाड़ भरे स्वर में बोले, " पर इन छोटी-छोटी बातों को लेकर झगड़ते नहीं, मिनी। तुम तो बहुत पढ़ी-लिखी हो, समझदार भी।"

यही बात तुम अपनी माँ से कहो तो ज्यादा अच्छा न होगा। गुस्से से मिनी ने कहा।

घनश्याम मुस्कराया। नजरें मिनी के चेहरे पर टिकाकर बोला," जिस पर अपना सबसे अधिक जोर होता है, उसी से तो कुछ कहा जा सकता है, मिनी।"

---

1- मन्नू भण्डारी, 'स्वामी,' पृ0 54

पता नहीं पति के मुंह से पहली बार अपना नाम सुनकर आज उसे उस बात में ही अपनत्व की ऐसी गंध थी कि मिनी के मन का पत्थर बना हुआ एक हिस्सा अचानक ही कहीं से टूट गया । उसका मन बहने-बहने को हो गया ।[1]

जरा से झगड़े में मात्र घनश्याम (पति ) के लिये नाश्ता बनाने के लिये चूल्हा क्या छू लिया, कोहराम मच गया, इतनी बात के लिये घनश्याम ने मिनी से माँ (सास) से माफी माँगने को कहा । मिनी आधुनिक संस्कारों में पली थी, भले ही उसकी माँ धार्मिक वृत्ति की थी, पर उसे लगा कि पति का आदेश ठीक है, पर उससे उसका मन सहमत नहीं था । मिनी और घनश्याम के मध्य जीवन में अलगाव होता है, यह किसी ऐसे कारण से नहीं होता बल्कि परिवार की उलझनों के कारण ही होता है । नरेन्द्र के प्रति पुनः आकर्षण घनश्याम के कारण नहीं है, बल्कि वैवाहिक बंधन को त्यागकर ही है । परिवार का भीतरी संघर्ष ही नरेन्द्र के प्रति आकर्षण का सहज भाव है । उसे यह महसूस होने लगा कि घनश्याम नाम का कोई प्राणि इस घर में है या कि उसका भी कोई अस्तित्व है । यह बात भी उनकी चिन्ता के दायरे में नहीं आती । उसे बरबस ही घनश्याम की नरेन्द्र से तुलना करती है ।

"नरेन्द्र का एक वाक्य याद आता । बचपन का जिद्दी नरेन्द्र जिसकी कामना करता है, उसे पाकर ही रहता है और घनश्याम ? उसने तो अपनी सब कामनायें ही खत्म कर दीं ।"[2]

---

1- मन्नू भण्डारी, 'स्वामी,' पृ० 57

2- वही, पृ० 74

और भीतरी ही भीतर उसने संकल्प किया घनश्याम के प्रति माँ के इस दुर्व्यवहार पर वह अब और चुप नहीं रहेगी । उनकी दिन व दिन बढ़ती ज्यादतियों के सामने वह पति को अकेला नहीं छोड़ेगी ।[1] पति के प्रति मिनी का सही सहानुभूति भाव जागता है, उसके मनमनसाहत की शक्ति ने ही उसके मन को जीत लिया है । नरेन्द्र के प्रति उसके मन में जो एक प्रेम भाव था, वह शीतल छाया नहीं थी । एक बार अचानक पूछ ही लेती है ।

रात को जब घनश्याम आया तो उसने पूछा - " अच्छा एक बात बताओ, तुम क्या किसी के बड़े से बड़े अपराध को भी क्षमा कर सकते हो ?"

" क्यों नहीं, अगर कोई सच्चे मन से क्षमा मांगें तो जरूर कर सकता हूं ।" मिनी बड़ी गहरी नजरों से पति को देखती रही । मानो इस बात की सच्चाई को तोल लेना चाहती हो । मामा की बात याद आयी, नरेन्द्र प्यार कर सकता है, निभा घनश्याम सकेगा । और तब भीतर ही भीतर एक विचित्र-सा संकल्प उसके मन में आकार लेने लगा ।"[2] यथार्थ के धरातल पर मिनी जब नरेन्द्र के साथ स्टेशन आयी, नरेन्द्र के साथ जाते हुये माँ के घर आ गयी । माँ के यह समझाने पर सब जल गया, मात्र पूछा घर बचा है, तब माँ से कहती है - " माँ सारा घर जल गया तुम्हें चिन्ता नहीं होती कि अब क्या होगा ?"

एकटक अपने ठाकुर जी की ओर देखती हुयी गिरीं, बोलीं - " कैसी चिन्ता बेटी । जिसने अपना सुख-दुःख, भूत-भविष्य सब कुछ स्वामी के हाथों में सौंप दिया उसे कैसी चिन्ता ? मेरी बिगड़ी वे ही बनायेंगे ।"

---

1- पूर्वोक्त, पृ० 83

2- वही, पृ० 88

मिनी कभी ठाकुर जी को देखती, कभी माँ को, - माँ की निष्ठा को ।[1]

x x x x

मिनी, मैं तुम्हें लेने के लिये आया हूँ ..... घर ले जाने के लिये । तो उसकी आँखें छलछला आयीं । भावावेश के कारण पत्ते की तरह थर-थराती हुयी उसकी देह अवश होकर स्वामी की बाँहों में जा गिरी और दो भुजाओं की जकड़ में उसे लगा, सारी भटकन समाप्त हो गयी है, सारे द्वन्द्व समाप्त हो गये । निश्चित और पूरी तरह आश्वस्त हो जाये, उसके मन में माँ का यह वाक्य ही, गूँजता रहा - जिसने अपना सुख-दुःख, भूत-भविष्य सब कुछ स्वामी के हाथों में सौंप दिया, उसे कैसी चिन्ता ?"

मन्नू ने आधुनिकता के वातावरण में पुरातन सत्य को विवाह के रूप में मान्यता दी है, यह विवाह ही पति-पत्नी को एक दूसरे से जोड़ने में सार्थक है । प्रेम तो समात्र जीवन में अब उपहार की वस्तु ही रह गया है । पर मन्नू जी यह स्वीकार करती हैं कि नारी जीवन का द्वन्द्व व्यवहारिक है ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 112

## अध्याय : तृतीय

## मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के पात्रों। घटनाओं का विश्लेषण

## एवं

## मनोवैज्ञानिक कहानियों के पात्रों। घटनाओं का विश्लेषण

## अध्याय : तृतीय

## मनोविज्ञानिक उपन्यासों के पात्रों। घटनाओं का विश्लेषण

## एवं

## मनोविज्ञानिक कहानियों के पात्रों। घटनाओं का विश्लेषण

मनोविज्ञानिक उपन्यास में निम्नलिखित विशिष्ट आयाम होता है :

(1) जहाँ तक विषय का सम्बन्ध है, उसमें अचेतन के निकटतम, आत्मीय भावों को प्रकट करना है ।

(2) भावों से सुव्यवस्थित रूप धारण करने के पहले ही उनकी मौलिक रूप से प्रकट करता है, अर्थात् मन में उत्पन्न भाव ।

(3) मन की स्थिति का रूप स्पष्ट दिखाई देता है ।

यह सही है कि फ्रायड की उपलब्धियों ने नई पीढ़ी के रचनाकारों को प्रभावित किया है । हमारी मानसिक स्थिति सामाजिक तथा पारिवारिक मर्यादा से बनी हुयी है । चेतन धरातल से अचेतन की स्थिति पर विचार करते समय, हमारी मनोदशा की स्थिति व्यक्तित्व का सहारा लेती है । भावात्मक और संवेगात्मक मनोरोगों से संसार के क्रियाकलाप चल रहे हैं, जिनका की उपन्यास में पात्रों के माध्यम से स्पष्ट रूप से संकेत मिलते हैं । केवल प्रतीकात्मक स्थिति कभी-कभी घटना का आधार भी बन जाती है । जहाँ प्रेमचंद परम्परा के उपन्यास विषय प्रधान है, वहाँ मनो-

वैज्ञानिक उपन्यास प्रकृतिप्रधान हो गये हैं। इसलिये उपन्यासों में विस्तार की जगह गहराई, घटनाओं की जगह व्यक्ति की कुंठाग्रस्त स्थिति, सामान्य असामान्य परिस्थितियां, समस्याओं के आधार मनोविश्लेषण की स्थिति को मान्य कर लिया गया। "जीवन का जो रूप हमें दिखाई देता है, उसका चित्रण आवश्यकतानुसार आया है, कहीं-कहीं जीवन का भोगा हुआ, यथार्थ, ज्यों का त्यों आया, तो कहीं परिकल्पना का सहारा किया गया। इतना अवश्य है कि वर्तमान सन्दर्भ की तमाम ऐसी समस्यायें, घटनायें, भी आ गया, जिसकी मर्यादा थी। यौन सम्बन्ध का स्पर्श, प्राचीन धरातल को छू रहा था, पर एक निश्चित समयावधि ने इस ओर अधिक स्पष्ट कर दिया। इतिहास पीछे छूट गया, यदि इतिहास आयामी है, तो उसमें वर्तमान सन्दर्भ ने अपना आकार प्रकार बनाया है।"[1]

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का व्यक्तिवादी स्वर, व्यक्ति की आन्तरिक जीवन-संरचना पर बल देता है। वह व्यक्ति-विशेष को उसकी पूरी मानसिकता के अन्तर्गत देखने का आग्रह ही है। व्यक्ति के मन गहराई में उसके अंधेरे में नीचे-बीचे जाकर देखने, परखने का प्रयास ही नयी पीढ़ी के उपन्यासकारों की रचनात्मक समस्या है। प्रेमचन्द शिविर के उपन्यासकारों ने सामाजिक समस्या के बीच व्यक्ति की अकिंचनता को, उसकी विह्लता को अत्यन्त उपेक्षित समझा। उनमें व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का निष्कपट भोग नहीं करता है, बल्कि वह प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति बनकर रह जाता है।[2] जबकि नयी पीढ़ी के रचना समस्या की जटिलता

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा०रामकृष्ण गुप्त, 'अपराध मनोविज्ञान,' रविवारीय, पृ०6

2- डा०रामविनोद सिंह, 'मनोविज्ञानिक उपन्यासों का शिल्पविधान,' पृ०34

को घटना मानकर दो-तीन पात्रों के माध्यम से मनुष्य के यथार्थ को मनोविज्ञान के धरातल पर प्रस्तुत करता है ।

आज तलाक तकलीफ देह स्थिति में है, विधवा का अस्तित्व खतरे में, और तो और अलगाववाद जीवन का एक अंग बनता जा रहा है, इसके कारण ढूंढने पर ज्ञान होता है कि स्त्री की शिक्षा का अभाव रहा होगा, आर्थिक रूप से नारी सम्पन्न नहीं रही, जिसके कारण उसकी अपनी पहिचान करना मुश्किल सा हो गया । घर में मुखिया की स्थिति, अधिकांश लोग उपेक्षित यह सब संस्कार का प्रभाव रहा होगा । आर्थिक स्थिति ताना-बाना जगह की कमी शहरी जिंदगी में बढ़ रही थी, तब एक ऐसा वातावरण जिसका अंत रचनाकार ढूंढता रहा । दूसरी ओर की घटनायें, परिवार समाज से हटकर रहीं, जिसमें राजनीतिक स्थिति, भ्रष्टाचार का बोलबाला, सत्ता की लालसा, पूरी राजनीति इतर स्थिति से भिन्न रहा । पर रचनाकार ने इन सबको घटना माना, जिसका संयोजन किसी न किसी रूप में कथा में किया । 'गोदान' से आज तक की यात्रा में जो कुछ लिखा जा रहा है, उसमें घटना का स्वरूप संक्षिप्त भी है और बढ़ा भी । विवशता मात्र इतनी है कि जो कुछ सामने घट रहा है, उसी का संयोजन रचनाकार ने बाखूबी किया है । घटना का यदि क्रम बदला है, तो उसकी शुरूआत प्रेमचन्द के गोदान, गबन से मानी जानी चाहिये, उसके बाद की गवाही लो, जैनेन्द्र का 'त्यागपत्र,' अज्ञेय का 'शेखर : एक जीवनी,' 'अपने-अपने अजनबी,' 'अंचल,' 'उल्का,' डा0 देवराज का 'अजय की डायरी,' राजेन्द्र यादव का 'कुल्टा,' 'शह और मात' तथा 'अनदेखे अनजान पुल,' राजेन्द्र यादव तथा मन्नू भंडारी का 'एक इंच मुस्कान,' मन्नू भण्डारी का 'बंटी,' 'महाभोज,' नरेश मेहता का 'डूबते मस्तूल,'

धूमकेतु : एक श्रुति, दो एकान्त और नदी यशस्वी है, मोहन राकेश का ' अन्धेरे बन्द कमरे,' कमलेश्वर का ' डाकबंगला,' राजकमल चौधरी का ' मछली मरी हुयी,' ' अमरकांत - ' कटीली शाह के फूल,' द्वारिका प्रसाद का ' मम्मी बिगड़ेगी, ' योगेश गुप्त का ' छविनाथ, ' राघवेन्द्र मिश्र का ' थानी बिच मीन पियासी, ' कांता सिन्हा का ' तृप्ता,' उषा प्रियम्वदा का ' रुकोगी नहीं राधिका,' नरेश मेहता का ' यह पथ बंधु था,' निर्मल वर्मा का ' वे दिन और लाल टीन की छत,' श्रीलाल शुक्ल का ' राग दरबारी,', राजकमल का ' शहर था शहर नहीं था,' रमेश बक्षी का बैसाखियों वाली इमारत,' महेन्द्र भल्ला का ' एक पति के नोट्स ' और दूसरी तरफ,' गिरधर गोपाल का ' कन्डील ' और ' कुहासे, ' गोविन्द सिंह का ' वह अपना चेहरा,' प्रमोद सिन्हा का ' उसका शहर, ' गिरिराज किशोर का ' यात्रा में,' ' बड़ा आदमी,' ममता कालिया का ' बेघर,' मणि मधुकर का ' सफेद मेमने,' जगदम्बा प्रसाद दीक्षित का 'कटा हुआ आसमान,' और ' मुरदाघर,' बदी उज्जमाँ का ' एक चूहे की मौत,' और 'छटातन्त्र,' कृष्णा सोबती का ' सूरजमुखी अँधेरे में,' कृष्ण बल्देव वैद का ' विमल जायें तो जायें कहाँ ' यह दौर भी जा रही है ।

जैनेन्द्र का ' त्यागपत्र ' आत्म कथात्मक शैली में लिखा गया एक घटना शून्य उपन्यास है, जिसमें नायिका मृणाल के मानसिक घात-प्रतिघातों का विश्लेषण किया गया है । मृणाल की मानसिक जटिलताओं के परिस्थापन में सहयोग देने वाली जीवन की छोटी-मोटी घटनाओं का वर्णन किया गया है, क्योंकि सामाजिक परिस्थितियों के कारण ही मानसिक ग्रंथियों का निर्माण होता है ।[1] पर इन घटनाओं

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0रामविनोद सिंह,' हिन्दी के मनोविज्ञानिक उपन्यास में नारी चरित्र,' पृ0 48

का संयोजन जैनेन्द्र ने बड़ी कुशलता से किया है, और प्रत्येक घटना का मार्मिक दृश्य है, जो पाठकों के ऊपर तीव्र प्रहार करता है उसकी संवेदनशीलता को उभारकर उन्हें स्वीकृत करने की क्षमता रखता है ।[1] फिर इसके बाद जो नया दौर शुरु हुआ, उसमें मानसिकता, फिर बदली, उसके साथ ही घटना भी बदलने लगी ।

जब से कहानी शुरु हुयी होगी, कहने के अनुसार, तब से आज तक कहानी पात्रों, घटनाओं के अनुसार समय के साथ बदली । धार्मिक कथायें, सामाजिक कथाओं के मध्य जातक बौद्ध कथाओं का भी एक युग था । नाना नानी से सुनी कहानी के पात्र हल्के से दर्शन हमें घटना-प्रधान एवं मानसिक विश्लेषण के रुप में सबसे पहले प्रेमचंद की कहानी में मिलते हैं । पंचपरमेश्वर, कफन, पूस की रात जैसी 300 से अधिक कहानियाँ लिखने वाला प्रेमचन्द भी जो कुछ लिख रहा था, उसमें घटना का स्वरुप मानसिक धरातल पर था । जयशंकर प्रसाद ने भी जो कहानी लिखी, उसमें एक खासा उद्देश्य था । नारी की विवशता क्या है ? इसका जीता-जागता उदाहरण 'पुरस्कार' कहानी में है । जहाँ तक कफन में आधुनिकता के उजागर होने का सवाल है, इसमें कहानी का वास्तव बाहर के वास्तव में मेल नहीं खाता । इसमें धन की दुश्मनी की बात कहानी की सतह पर है, इसके गहरे में नहीं है । इसके गहरे में माधव और घीसू का अभावों से घिरा हुआ जीवन है, जो जड़ हो चुका है । यह एक पेचीदा सवाल है ।[2]

---

1- डा0सुरेश सिन्हा, 'हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास, पृ0 355

2- डा0इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिकता और कहानी,' पृ095

प्रेमचन्द से आज तक की जो कहानी कही गयी, उसमें समस्या घटना समय के अनुसार नये सन्दर्भ के रूप में आयी है । कभी-कभी ऐसा भी होता है कि घटना भले ही सूक्ष्म हो, पर उसका पर्यावरण इतना बड़ा होता है कि वह प्रभावी ढंग से आगे बढ़ जाता है । जैनेन्द्र ने ' पाजेब ' में इसी बात को लेकर लिखी गयी मनोवैज्ञानिक कहानी में भेद-प्रभेद को नया आयाम दिया, जबकि प्रेमचन्द ने समस्या के सन्दर्भ को गांव शहर बाहर से देखा समझा है । कुछ भी हो, महिला कथाकारों ने तो नारी पुरुष जीवन को एक नयापन दिया है ।

" यह एक सत्य है कि जहां स्त्री में परिवर्तन आया है, वह पुरुष वर्ग उसे पचा नहीं पा रहा है, इसके कारण परिवार टूट रहे हैं, अन्तर्जातीय विवाह से बदलाव आया है । खुला वातावरण बड़े शहरों से जिस ढंग से आ रहा है, उसमें शहर की सभी वैरायटी हैं । विवाह समस्या जो प्रेमचंद के सामने थीं, आज भी है । विवाह को मानती हूं, पर जब तक नहीं, तब तक दोनों एक दूसरे को न समझें । "[1]

नई कहानी की चर्चा, पुरानी कहानी से अधिक चर्चित रही, उसका मूल कारण है कि बदलते हुये शहर गांव की समस्या अधिकांश रूप से आर्थिक थी, जहां तक सम्बन्धों का प्रश्नचिन्ह है, उसमें बढ़ी रही आपाधापी है, जो कि अर्थतन्त्र से ही जुड़ी है । सुदर्शन चौपड़ा के कहानी संकलन सड़क दुर्घटना की अधिकांश कहानियों नगरबोध से

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0रामकृष्ण गुप्त : साक्षात्कार मन्नू भंडारी

जुड़ी हुयी हैं। जड़ें, खास पाडना, अब, पुल, सड़क दुर्घटना दिल्ली के परिवेश से स्वीकारान्त, पहली सुबह, खंडित कथा, इन्तजार, धड़कन, कलकत्ता के परिवेश से। यदि कलकत्ता वाली कहानियों में आधुनिकता का बोध अधिक गहरे में है तो क्या यह महानगरी के बोध का परिणाम है जहाँ नगरीकरण की प्रक्रिया अधिक गहरे में है - धर्मेन्द्र गुप्त की कहानी 'कापुरुष' में आधुनिकता का बोध उथले में है। पर कहानी के पात्रों की मनोदशा सन्दर्भ की खोज समस्या से जुड़ी है। प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, अज्ञेय, जैनेन्द्र की कहानियों में जो एक के बाद एक बदलाव आया है, उसमें पात्रों की मानसिकता समय के अनुसार बदली है, पात्र समस्या के मध्य जिस ढंग से जीता है, उसकी अपनी स्थिति है। सुदर्शन की कथा 'पहली सुबह' में देर से आने की स्थिति है। इस देरी में सिगरेट, चाय की तलब। आमतौर में आज जहाँ सब कुछ रहा है, यौन-चर्चा की मानसिकता भी इसमें एकता, जुड़ जाती है। बौखलाहट की चर्चा आज आम हो गयी, क्योंकि अधिकारी की बौखलाहट उड़ती-उड़ती, नीचे अधिकारी पर आते आते चपरासी पर उतर जाती है, जो मामूली बात नहीं। फिर भी इस तकनीकी का सारा वातावरण के लिये दोषी, यदि ठहराने की बात है, तब निश्चय ही दोनों ही दोषी हैं। कहानी के इस धरातल पर जो कुछ घट रहा है, उसमें तनाव भी है। समकालीन वातावरण में तलाशने की कोशिश आज भी जारी है।

अज्ञेय की कहानी 'गैंग्रीन या रोज,' उषा प्रियवंदा की कहानी 'वापसी,' मोहन राकेश की कहानी 'पाल,' इसके बाद कहानी का दौर के लिये साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं ने जो सहयोग दिया है, उससे कहानी जगत में नयी-पुरानी कहानी को एक आधार मिल गया है।

हंस, प्रतीक, निकष, कहानी नयी कहानियाँ, सारिका, माया, कल्पना, लहर, गल्प भारती, अणिमा, बिन्दु, रूपाम्बरा, विकल्प, नयी धारा कथा, अवस्था, राष्ट्रवादी आधार ज्ञानोदय, आवेश मंच, वाम, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान और छोटी-बड़ी पत्रिकाओं के साथ संस्थाओं द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं का योगदान भी सराहनीय है। इन पत्रिकाओं का नाम महत्वपूर्ण इसलिये है कि कहानी के चयन में इनकी दृष्टि ने कहानीकारों को जन्म दिया है।

कथाकारों ने सीमायें, पिता और सम्बन्ध में दाम्पत्य में प्रेम तो है, व्यंग्य की परिधि धीरे-धीरे हास्यास्पद होती जा रही है। तनाव, समस्या कहानी में आज आम हो गयी। रचनाकार ने चुम्बन, आलिंगन को परहेज बना दिया गया या उसे स्वीकार किया गया। शारीरिक सम्बन्ध, यौन वातावरण खुला खेल सा हो गया। तब काशीनाथ सिंह की कहानी में एक नयापन आया, सुबह का डर चाय घर में मृत्यु, लोग बिस्तरों पर में का मुंह चाहे छोटा है, लेकिन बात बड़ी करना है - जैसे ऐसे लम्हे आते हैं, जब आप मृत्यु और जीवन को नहीं अलगा सकते।[1] इसी प्रकार मंगलेश डबराल की कहानी आया हुआ आदमी ने एक कदम आगे के दौर की कहानी कही है, इस कहानी की कथा में एक नया आकार दिया है। इसमें आदमी कुछ सालों के बाद उस औरत से मिलने आता है, जिसके यहाँ उसकी अवैध सन्तान है। इस सन्दर्भ में अवैध सन्तान को समाज में स्वीकृति नहीं मिलती। यह बात पूर्व में वही थी, आज भी वही।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- काशीनाथ सिंह, 'लोक बिस्तरों पर,' पृ0 68

मन्नू भण्डारी समसामयिक कथा को लिखा है । सामयिक जीवन की बदलती स्थिति का चित्रण घटनाओं के आधार पर उनकी कथाओं में आया है । जीवन की वास्तविकता का जो चित्रण लेखिका ने किया है, उसमें वातावरण व परिस्थितियों के अनुरूप पात्र, विशेष की मनोवृत्ति घटनाओं के आधार पर ही आया है । उनके पात्र निम्न मध्यवर्गीय शिक्षित, अशिक्षित, समाज एवं उसके पात्रों का चित्रण तो है, पर इसके साथ ही उच्च वर्ग का प्रतिनिधित्व भी है । डा० गणपतिचन्द्र गुप्त ने घटना एवं पात्रों के विषय में व्यक्तित्व के निर्माण में शरीर का महत्व स्वीकार करते हुये कहा है -
" एक जन्मान्ध व्यक्ति का रंग रूपों की कल्पना में अन्य व्यक्तियों की कल्पना से थोड़ा बहुत अन्तर अवश्य रहेगा, जिसके परिणाम स्वरूप शैली में भी अन्तर का आ जाना स्वाभाविक है । कदाचित हमारे इस निष्कर्ष के विरुद्ध महाकवि सूरदास का उदाहरण प्रस्तुत किया जाये, किन्तु उनके जन्मान्ध होने की बात विवादास्पद है । अत: उसे यहाँ लागू करने की आवश्यकता ही, वस्तुत: किसी भी शारीरिक न्यूनता या विशेषता का जिसका लेखक की कल्पना शक्ति एवं अनुभूति से सम्बन्ध है ।"[1] अधिकांश रचनाओं में रचनाकारों ने अपनी कथाओं में पात्रों को इन घटनाओं के लिये सहारा लिया है, जो कथा का आधार होती है । नये कथाकार तो इसमें एक कदम ज्यादा है ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा० गणपति चन्द्र गुप्त, 'साहित्य शैली के सिद्धान्त,' पृ० 37

आज का कथा रचनाकार पात्रों के सम्बन्ध घटनाओं से पहले जोड़ा था । श्रीलाल शुक्ल का ' राग दरबारी ' की कथा का सीधा-साधा सम्बन्ध वैद्य जी से है । वैद्य जी जैसा पात्र का चरित्र मात्र इतना भर कह देना में काफी अच्छा लगता है कि ' ग्राइसिस लीडरशिप ' वैद्यजी जीतीजागती तस्वीर है । आज के युग में मानवीयता, सिद्धान्त, आदर्श पक्ष, सारी बातें, व्यर्थ ही । जीवन का चरितार्थ एक विषम स्थिति हो सकती है, पर घटना का क्रम तो स्वयं पात्र के सहारे चलता है ।

'' आओ भाई तुम धर्म की लड़ाई लड़ रहे हो, उससे मैं क्या सहायता कर सकता हूँ ? ''[1] यह व्यक्तित्व भले ही बाहर से लुभाने वाला हो, पर उसमें दम है, तो मात्र इतनी वैद्यजी भीतर से स्वार्थी, अर्थ-लोलुप एवं सत्ताकांक्षी है । इतना बड़ा साक्षात् जीवन का यदि हमें देखने को कहीं मिल जाये, तो सत्यता सामने आती है । आज भी कई ऐसे व्यक्ति हैं, जो हाँ में हाँ मिलाते रहते हैं, उनका अभिव्यक्ति पक्ष इतना मजबूत नहीं है ।

श्रीलाल शुक्ल की तरह ही अमृत लाल नागर भी पात्रों का चयन सामाजिक घटनाओं के क्रम से करते हैं । घटना एवं पात्र, पात्र या घटना, दोनों वास्तव में एक दूसरे के पूरक है । ' बूँद और समुद्र ' की कथावस्तु में बूँद के अस्तित्व की बात स्पष्ट है कि बूँद के अस्तित्व की प्रसंग कथाओं से स्थिति स्पष्ट कर सागर को पूर्णतः में बदला गया है । कई पात्रों से कड़ी कथायें में वकील की पागल बहू का प्रसंग,

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- श्रीलाल शुक्ल, ' राग दरबारी, ' पृ0 26

युवती की लाश कुत्तों के द्वारा घसीटा जाना, तारा वर्मा एवं छोटी का प्रसंग, मुहल्ले के बड़े-बूढ़ों का प्रसंग, मंदिर के भीतर अभिनय, यह सब अपनी अपनी घटनाओं से अवश्य जुड़े हैं। आस्था विश्वास का धरातल, आत्म-विश्वास पर जीवित है। नागार्जुन का बलचनमा दुखद सत्य को उद्घाटित करता है। इस उपन्यास कथा में मिथिला के किसानों को जो अभाव है और उनका जीवन शोषणपूर्ण है, उन अनुभवों को बाबा नागार्जुन ने अभिव्यक्त किया है। "आधा खेत मजदूर और आधा किसान"।[1] दरभंगा जिले के ग्रामीण जीवन का उत्कट यथार्थ सम्पूर्ण रूप से चित्रित हो उठता है। बलचनमा के दुःख से कही गयी उसकी अपनी कहानी है, जिसमें प्रगतिशील तत्वों का चित्रण है। बलाचनमा की उम्र बारह वर्ष है, वह चौधरी घराने की छोटी मालिका इनके यहाँ काम करता है, जहाँ उसे नौन और सरसों के तेल के साथ मडुआ की रोटी का कलेवा मिलना, मालकिन जब किसी बात से खुश होती तब खुश होने पर ही सूखा या बासी पक्वान, सड़ा आम या फटे दूध का बदबूदार छेना, जूठन की बची कड़वी तरकारी, बदबू द्वारा ही इसके साथ ही वह कह देती कि ऐसी वस्तुयें तो उसके बाप-दादा ने भी नहीं खाई है। कर्ज के बारह रुपये मझले मालिक के नहीं मिलते, तब दादी की जमीन ले लेना। इसके बाद भी यह क्रम शोषण का बन्द नहीं होता। मरणासन्न दादी की इच्छापूर्ति के लिये पोखर से मछली पकड़ लाने पर मालिका द्वारा आम की आधी जलीचेली से बलचनमा की पीठ दाग देना, आम तोड़ लेने पर उसके बाप को खमेली से बाँध देना, उसकी जवान बहन को जमींदार द्वारा अपनी कामवासना का शिकार बनाना। इसके बाद ही बलचनमा के जीवन में मोड़ आ जाता है।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

इस कथा सूत्र का महत्व अंग है कि बड़े लोग सबल हैं, उनका कुछ बिगाड़ा नहीं जा सकता। गरीब गरीब है, वह बड़े का कुछ बिगाड़ नहीं सकते। उसकी आत्म विद्रोह कर उठती है है कि वह सब कैसे सह रहा है। सब जमींदार के सम्बन्धी फूल बाबू के साथ पटना आने और उनके साथ रहने का अवसर मिलता है जिसके परिणाम-स्वरूप राजनैतिक चेतना जागती है। उसकी गांधीवादी सिद्धान्तों में आस्था होना। इसी मध्य फूलबाबू तथा कांग्रेसी नेताओं के असली चेहरे देखता तब उसे उच्चवर्ग के कार्य तथा शोषण का अहसास होता। जब कभी किसानों पर विपत्तियाँ आतीं तो राहत के नाम पर जो सरकार धन देती, वह सब आपस में नेता अपने सम्बन्धियों के साथ आपस में बाँट लेते।

बलचनमा यह सब देखता, उसकी चेतना जाग्रत हो उठती, पर करे क्या ? गाँव लौटकर आता है तो उसमें थोड़ा बहुत सुधार है। उसका विवाह हो जाता है। अन्त में इस सबके मध्य कुछ करने की लालसा उसके मन में रहती है, वह सोशलिस्ट पार्टी का सदस्य बनकर किसान-सभा का सदस्य बन जाता है। किसान आन्दोलन के लिये संघर्ष करता है। "जिन्दगी अनमोल चीज है भैया ...... धरती किसकी ? जोते-बोये उसकी। "किसान की आजादी आसमान से उतरकर नहीं आयेगी"।[1] सही माने में नागार्जुन ने वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त को कथा में पिरोया है, इसमें सफल भी हुये हैं। वास्तव में समकालीन स्थिति का सामना तो करना ही पड़ेगा। आज भी यही हालत है कि कहीं आग लग गयी, कहीं गोली चल गयी। इन स्थितियों पर कथाकार ने जो लेखनी चलाई है, उसके मध्य कोई दूरी नहीं, निकटता नहीं, बल्कि सजीवता है।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 220-21

जबकि मणि मधुकर का उपन्यास 'सफेद मेमने' का आधार कुछ दृष्टव्य है। "यह महानगर न होकर रेगिस्तान है, जिसके एकान्त में और नगरों की भीड़ में अकेलेपन, अजनबीपन, बेगानेपन के बोध में अंतर मात्र इतना है कि रेगिस्तान के एकान्त में यह अधिक गहरे में है। इस उपन्यास के कुछ पात्र या मेमने जो सफेद हैं, नगरबोध को लिये हुये हैं, राजस्थान के एक छोटे से गाँव व नेगिया में रहते हैं, जिसका खालीपन पराया-पराया लगता है, रामौतार, पोस्ट मास्टर, जानवरों का डाक्टर, बन्ना, जस्सू आदि में आधुनिकता का बोध कभी बेगानेपन में उजागर होता है तो कभी अकेलेपन में, कभी जिन्दगी और मौत के चिन्तन में तो कभी व्यर्थता के बोध में।"[1] इसमें सम्भोग और बलात्कार के प्रसंग भी हैं। इसलिये समकालीन कथा में सम्भोग को खुल वातावरण के साथ झोंपड़े में देखा है। वह रामौतार पोस्टमास्टर की पत्नी रेगिस्तान के एकान्त में अकेला है। जानवरों के डाक्टर का भैंस से सम्भोग, रेगिस्तान के एकान्त का परिणाम है, जो उसके ताप को ठण्डा करता है।[2] यह सब परिवर्तन का आधार है।

मन्नू भण्डारी का उपन्यास 'आपका बंटी' में आधुनिकता की पहचान नये ढंग से कराती है। यह सही है कि उपन्यास की कथा में एक ओर आँसू, दूसरी ओर भावुकता, तीसरी ओर आधुनिकता माँ-बाप को तलाक हो जाता है, बंटी माँ के पास है। माँ की दोबारा शादी हो जाती है। बंटी का माँ के पास रहना कठिन है, क्योंकि उसका नया बाप बाप की तरह नहीं लगता है। बंटी जब अपने बाप के यहाँ जाता है, वह उसका दूसरा विवाह हो जाता है, नयी माँ। यह भी

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिक और सृजनात्मक साहित्य,' पृ0 184

2- मणि मधुकर, 'सफेद मेमने,' पृ0 51

स्थिति निश्चित है । बंटी का होस्टल में रहना जरूरी हो गया । बंटी की समस्या मानवीय है । मन्नू जी ने बाल-मनोविज्ञान का जीता-जागता चित्रण किया है । यथार्थ के रूप में आज की आधुनिकता का बोध पति पत्नि के तलाक के रूप में सामने आता है ।

यथास्थिति तो शकुन के लिये साथ रहने की यन्त्रणा भी बड़ी विकट थी और अलगाव का त्रास भी । इस साल का विवाहित जीवन एक अंधे की सुरंग में चलते चले जाने की अनुभूति से भिन्न नहीं था । आज जैसे एकाएक वह उसके अन्तिम छोर पर आ गयी है । ..... पर कैसा यह छोर । न प्रकाश, न वह खुलापन । न मुक्ति का अहसास । लगता है जैसे इस सुरंग ने उसे दूसरी सुरंग के मुहाने पर छोड़ दिया है, फिर एक और यात्रा - वैसा ही अंधकार वैसा ही अकेलापन ।"[1]

विवाह, फिर तलाक यह सब पाश्चात्य सभ्यता, आर्थिक, आत्मनिर्भरता का आधार है, जिसमें नयापन आधुनिकता के रूप में है । तीन पात्रों तथा उसकी घटना के मध्य झूलती समस्यायें मात्र बंटी की है । बंटी फूफी के पास पहुंचकर भी अकेला है । वह ममी शकुन की दूसरी शादी के बाद नये नाम को लेकर है, तो कभी बंटी के नये नाम को लेकर बंटी जोशी, अरुण जोशी । इस घर में मात्र बंटी की माँ, आप तो दूसरा है, फिर अकेलापन । दूसरे घर में पहुंचकर पाता है, पापा तो हैं, ममी नहीं । तभी तो शायद यही एक फैसला रह जाता है कि उसे वहां रहना चाहिये, जहां ममी, पापा, फूफी नहीं हो, क्योंकि वे सब अपने को अकेले समझते हैं, या बंटी को अकेला । क्योंकि बंटी तो इन सबके मध्य अकेला ही है ।

---

1- मन्नू भण्डारी, "आपका बंटी," पृ0 36

"मन्नू जी का मनोविज्ञान पात्रों के जोड़ा बाकी में कैसा भी रहा हो, पर बेटी के गुणों में सही है। आधुनिक पुरुष स्त्री की शिक्षा आर्थिक सम्पन्नता ने संतान को तो एक चौराहे पर भी खड़ा नहीं किया जहां से वहां चारों ओर के रास्ते देख सके। जीवन की इतनी लम्बी यात्रा में प्रारम्भ ही कमजोर हो, तब नियति क्या होती।"[1] शेष भाग निश्चित ही आधुनिकता से घिरी है। व्यंग जीवन के यथार्थ से जुड़ा हुआ है।

बदी उज्जमा ने एक चूहे की मौत में एक नया अन्दाज को जन्म दिया। इसमें दो चूहे मारो की मौत की कथायें हैं, जिनके नाम तक नहीं हैं। आज की स्थिति में इंसान नामहीन होने की गवाही देने लगा है, एक अक्षर या एक नम्बर बनता जा रहा है। डा0हरदयाल ने एक चूहे मार को नायक कहा है और दूसरे को उपनायक।[2] उपन्यास की शुरुआत होता है, वह छोटा चूहे मार था, तीसरे दर्जे का। वह रोटी कमाने के लिये चूहे खाने में या केन्द्रीय सचिवालय में चूहे मार का काम करता है यानी चूहे मारता है, यानी फाइलों को निपटाता है। सारी दुनिया ही एक बड़ा चूहेखाना है, जहां चूहे मार बनकर ही जिन्दगी बसर की जा सकती है, जो चूहे नहीं मारता, उसके लिये इस दुनिया में कोई जगह नहीं है।[3] इस उपन्यास के पात्रों की घटना का आधार व्यंग है, जिसमें घुटन और बेबसी है।

आज के उपन्यास में पात्रों का चरित्र मनोविज्ञान पर ही आधारित है। रचनाकारों ने मनोविश्लेषण की भाषा का पूरा-पूरा

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 36

2- समीक्षा(पटना) जनवरी 1972

3- बदे उज्जमा खाँ, 'एक चूहे की मौत,' पृ0 73

प्रयोग किया है । व्यंग इतना पैना है कि वह पात्र के जीवन की घटनाओं को स्पष्ट करता है । स्थिति क्या है, इस पर विचार किया जाना मात्र ठीक नहीं है । कृष्णा सोबती का सूरजमुखी अंधेरे में सम्भाग को नये अन्दाज में लिया है । आधुनिकता के धरातल पर मनोविज्ञान की सादगी है । ' हर मोड़ एक नया मोड़ । भविष्य नहीं । ...... कुछ तो होगा, जिसका मुझे इन्तजार है । कोई तो होगा जिसे मेरा इन्तजार है । पर नहीं, रती को सिर्फ स्त्री का इन्तजार है । ''[1]

इस विस्तार की भाषा में संयोग की स्थिति में छटपटाहट है । पात्र की संरचना में चाहे स्त्री हो, दिवाकर हो, राजन, या अन्य ऐसे पात्र जो राह से गुजर जाते हैं । मानुराम सुमेर, सुब्रामनियम श्रीपत । जीवन के यथार्थ को पात्रों के साथ चल रही घटनाओं ने कह दिया है । समाजशास्त्र के साथ मनोविज्ञान तो है । समाजशास्त्र केवल समाज की रचना उसमें रह रहे, तत्व की तरह है, पर सम्बन्धों का निर्वाह समाज की धुरी है, पर सबका आधार तो मनोविज्ञान ही है, जिनके पीछे घटनायें हैं, पात्र हैं, तो एक ऐसा जीवन भी है, जिसका लेखा, रचनाकार समय वीरगति के साथ रच देता है । मोहन राकेश का ' अंधेरे बन्द कमरे ', गिरीश आस्थाना का ' धूप छाँही रंग, ' गंगा प्रसाद विमल का ' कहीं कुछ और, ' सिहदेस का ' केंचुल,'ओम प्रकाश दीपक का ' कुछ जिन्दगियाँ ', ' बेमतलब,' भीष्म साहनी का ' कड़ियाँ,' ' तमस,' रामदरश मिश्र का ' जल टूटता हुआ,' सुरेश सिन्हा का ' सुबह अंधेरे पथ पर, ' देवेश का ' हत्या,' राजकमल चौधरी का ' मछली मरी नहीं, ' मधुकर गंगाधर का

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- कृष्णा सोबती, ' सूरजमुखी अंधेरे के,' पृ0 89

'यही सच है'। काशीनाथ सिंह का 'अपना मोर्चा,' गोविन्द मिश्र का 'उतरती हुयी धूप' में भी यही सवाल उठता है कि घटनाओं के साथ पात्र जुड़े हुये हैं। भले ही आज का मानव भारतीय और अभारतीय सवाल उठाकर अपनी पहचान बना रहा है। पर निश्चय रूप से भारतीय परम्परा से कट जाने की पीड़ा भले ही कुछ हो, पर बदलते मापदण्डों में यह सब कुछ शहरीकरण, नगरीकरण का आधार पर भी है। आज देश और काल शाश्वत न होकर सापेक्ष है। मनोविज्ञान व्यक्तिवादी स्वर के साथ आन्तरिक एवं बाह्य पक्ष के रूप में उभरा है। जीवन का जो रूप हमारे सामने है, उसमें घटनाओं के साथ पात्रों की कुंठाग्रस्त स्थिति, समस्यायें अधिक हैं।

मन्नू जी ने अपने उपन्यास में पुरुष एवं स्त्री की समानता का घटना के साथ ऐसा जोड़ा रखा है, कि वह टूटने नहीं पाये। 'स्वामी' में जो स्थिति है, वहीं से कहीं बेहतर नारी की स्थिति है, जबकि 'स्वामी' में स्वामी का महत्व धार से शुरू होता है। बंगला उपन्यासकार शरतचंद की कहानी 'स्वामी' इतनी अधिक पसंद आई कि मन्नू जी ने कथावस्तु को बदला। आलोच्य उपन्यास मन्नू जी की मौलिक कृति नहीं माना जा सकता। छायाचित्र बनाने वाले के लिये ही उन्होंने इसकी कथा को लिखा।

त्रिकोणी संघर्ष की नारी मनोविज्ञान को छूती स्वामी की कथावस्तु में पति के प्रति एक क्षीण सा सहानुभूति भाव जागता है। वह सहानुभूति भाव पति ( स्वामी ) घनश्याम के भलेपन का आधार है, जब मिनी अंतिम निर्णय में उसके साथ रहने का अपनी स्वीकृति देती है। पाश्चात्य मनोविज्ञान ने सहवास जन्म प्रेम को बहुत ऊंचा

मान्य कर रखा है, जो भारतीय संस्कृति में ढल नहीं पाता, यही कारण है कि मीनी और घनश्याम के दाम्पत्य जीवन में जो एक तरह अलगाव था, उसे नरेन्द्र के प्रति सहज आकर्षण भी कुछ नहीं कर पाता, भले ही वह कुछ समय के लिये वैवाहिक बंधन को छोड़कर नरेन्द्र के साथ रहने को अपेक्षित होती है, यह स्वामी ( पति ) के मलम्नसाहत की शक्ति से उसे इस ओर से वापिसी की प्रेरणा दी ।

भारतीय धार्मिक संस्कृति में विवाह के बाद पति है, इस परिभाषित शब्दावली में मूक अभिनय भले है, पर जीवन का साक्षात् तो है ही । पात्रों की घटनायें सहज आकर्षण एवं मलमनसाहत ही है । माँ के घर के संस्कार ने उसे एक अच्छे जीवन जीने को प्रोत्साहित किया वास्तव में भारतीय मानव मूल्य की सुरक्षा की गारंटी तो अवश्य है ही ।

कई कुछ और लिखने की प्रेरणा में ' महाभोज ' उपन्यास महत्वपूर्ण है, जिसमें समकालीन राजनीति की गहन सूझबूझ को उसमें एकत्र किया है । स्वाधीनता के बाद पहले जो कुछ गाँव शहर देहात में हो रहा है, उसकी जीती जाती तस्वीर को महाभोज में मन्नू जी ने प्रारम्भ किया है । भीष्म साहनी की ' तमस ' राजनीति के उतार-चढ़ाव की सशक्त कथा है, जिसमें दलगत राजनीति में जातिगत राजनीति आ गयी ।

इससे जरा हटकर मन्नू जी ने एक केन्द्र बिन्दु दलगत राजनीति, चुनाव के लिये अपनाये गये हथकण्डे, अपराधी तत्वों की राजनीति में दखल, पुलिस बुद्धिजीवियों की तटस्थता अधिकारियों की केन्द्रीयकरण की भूमिका, पत्रकारों की अवसरवादिता के सारे तत्व को मन्नू जी ने एक के बाद रूप से सम्मलित कर जीवन की राजनीति का चिट्ठा खोला

है। स्वाधीनता के बाद उभरी देश की राजनीति का उज्ज्वल पक्ष जो कुछ रहा हो सो रहा हो, लेकिन कृष्ण पक्ष का चित्रण केवल हिन्दी के ही नहीं बल्कि भारत की प्राय: सभी भाषाओं के लेखकों का प्रिय विषय रहा है। इससे स्थूल रूप में ही यह माना जा सकता है कि इस देश पर शासन करने वाला पक्ष जिसे सत्ताधारी पक्ष कहा जाता है कि अपने समर्थ राजनीतिक विपक्ष से अवश्य निश्चित रहा है।[1] इस तरह तमाम सारे रचनाकारों ने इस राजनीतिक घटनाओं के सहारे पात्रों को समेत तथा आजादी के बाद की लड़ाई साहित्य के धरातल पर लड़ी है।

आज की रचनाधर्मिता में इतना अवश्य है कि हर पात्र के साथ कोई न कोई घटना होती है, जिसका आधार मनोविज्ञान ही है। मगर इंसान जिज्ञासा का मारा हुआ है। हमनें सिर्फ यह देखने के लिये कि ऊपर यह पेंटिंग का प्रेम नहीं आराम कुर्सी है तो फिर यह अंदाजा लगाने की कोशिश शुरू कर दी कि यह आराम कुर्सी कहाँ से शुरू होता है और क्या खत्म हो जाती है, बहुत उल्टा पलटा कुछ सुझाई न दिया कुछ पेच खोले, कुछ मारा-पीटा, बात न बनी तो ख्वाजा साहब से कहा कि वह आयतुल कुर्सी पढ़कर कुर्सी के एक डंडे को पकड़कर खींचे और हम दूसरे डंडे को खींचते हैं। पूरे दो घन्टे तक हम दोनों आराम कुर्सी के पीछे अपने आराम को हराम करते रहे, जब हम पसीने में शराबोर हो गये और सांस फूलने लगा तो डाक्टर का मशवरा याद आया कि हमें आराम करना है।[2] पात्रों व उनकी घटनाओं की

---

1- डा0अनीता राजूरकर, 'कथाकार मन्नू भण्डारी,' पृ0 87

2- सारिका, 31 मार्च, 1986

सीमा क्या है, यह आभास जब मिलता है जब संघर्ष प्रारम्भ हो जाता है। पात्र वास्तव में प्रतीक ही हैं, जो संघर्षरत हैं। आधुनिक सन्दर्भ और अर्थ के लिये पात्र का चरित्र बहुत ही महत्वपूर्ण है। सार्थक और शक्तिशाली भूमिका निभाने वाले पात्र का चरित्र समस्या, संघर्ष से घिरा रहता है।

वर्तमान सन्दर्भ के पहले यदि हम प्राचीन कथाओं के प्रमुखमपात्रों को लें, तब निश्चय ही उनके नाम से जुड़ी संघर्ष कथा हमारे सामने आती है। राम, लक्ष्मण, कृष्ण, बलराम के अलावा भी चरित्र हैं, उदाहरण के रूप में सिसिफिस, ओडियस, गिलगियेश, प्रमथ्यु पाश्चात्य पात्र हैं, भारतीय सन्दर्भ पात्र में मनु, यम नचिकेता, अष्टावक, अहिल्या, कुंती, द्रोपदी, क्रौंच, संगाती, गणेश इन पात्रों की सार्वभौम सत्ता भी संघर्ष की कहानी कह रही है, जो कल भी कही जाती रहेगी। इन जुड़ी अन्य कहानी पात्र भी महत्वपूर्ण हैं, उनका सन्दर्भ जीवंत होना चाहिये।

जब कभी बात चली तब दुर्वासा को याद किया जाता है। सत्य के लिये राजा हरिश्चन्द्र को वचन के लिये रघु और राम को, प्रेम के लिये काम-रति को, व्यभिचार के लिये इन्द्र, जयंत, परिश्रम के लिये भागीरथ ज्ञान के लिये बर्बरीक, पराक्रम के लिये हनुमान। हनुमान जैसा वीर तो 'राम का गुलाम' कथाक्रम में पात्र का तथा उसकी घटना का अपना महत्व है। रामायण की कथा याद आते ही पात्र सामने हो उठते हैं तथा उनका चरित्र भी एक के बाद उभरकर सामने आता है। ऐसा नहीं लगता कि कथा से चिपके हुये समस्या को अपने में छुपाये हुये हैं। तभी तो समस्या के लिये पात्र की पारंपरिक वैचारिकता भी बहुत हद तक उत्तरदायी है।

आज पारिवारिक, सामाजिक समस्या का सीधा सम्बन्ध पात्रों से है। उदाहरण के लिये अर्थार्जन, शिक्षा की स्वतंत्रता के कारण जो समस्या उत्पन्न हुयी है, उनसे रचनाकार अलग तो नहीं रह सकता, क्योंकि वह भी इस कथा का एक मूक पात्र है, जो कथा को कहता है। बाधा शब्द की चर्चा भी समस्या से जुड़ी समस्या है। आज की पीढ़ी अपने सामने खड़ी पुरानी पीढ़ी के विरुद्ध खड़ी है, उसकी वैचारिक क्रांति में अन्तर है। यदि कोई भुक्तभोगी स्त्री की नसीहत से किशोरियों को भी पुरुषों से सावधान किया जा सकता है, ऐसे पात्र क्रांति ला सकते हैं। ऐसे पात्रों को जन्म के लिये रचनाकार को अपनी कथा में उसे पात्र बनना होगा। मन्नूजी ने अपने जीवन में इन घटनाओं को सर्वोच्च रूप से स्थान दिया है। उन्होंने जो दाम्पत्य जीवन की टूटन को सुलह के सेतु से बचाने का प्रयास किया है। विभिन्न स्तरों की नारी समस्याओं का चिन्तन भी मन्नू जी के पात्रों का आधार है। त्रिशंकु कहानी संग्रह में दरार भरने की दरार, स्त्री सुबोधिनी, शायद कथायें इसी समस्या का आधार, जिसके पात्र ऐसा ही जीवन जी रहे हैं। इसे कुछ लोग विवशता कह सकते हैं, पर यह विवशता नहीं है, यह तो मनोवैज्ञानिक पात्रों का सोच है, जिससे समस्या, संघर्ष का सामना ऐसे पात्रों ने किया है।

' मेरा अपने बास से प्रेम हो गया। वाह। आपके चेहरों पर तो चमक आ गयी। आप भी क्याकरें ? प्रेम कम्बख्त है ही ऐसी चीज। चाहे कितनी ही पुरानी और घिसी-पिटी क्यों न हो जाये ...... एक बार तो दिल फड़क ही उठता है ...... चेहरे चमचमाते ही लगते हैं। खैर, तो यह कोई अनहोनी बात नहीं थी। डाक्टरों का नर्सों से प्रोफेसरों का अपनी छात्राओं से, अफसरों का अपनी स्टेनो-सेक्रेटरी से प्रेम हो जाने का हमारे यहाँ आम रिवाज है। यह बात बिल्कुल अलग है कि उनकी ओर से

इसमें प्रेम कम और पागल ज्यादा रहता है। पर यह बात तो मुझे बहुत बाद में समझ में आयी। मैंने तो अपनी ओर से पूरी ईमानदारी के साथ ही शुरु किया था। ईमानदारी और समर्पण के साथ।"[1]

< < < <

उसकी प्रेरणा और प्राण बनने का हश्र यह हुआ कि वह तो दिन दूना रात चौगुना फलता फूलता रहा। धन, यश, सफलता, मान-सम्मान सभी का मालिक और भीतर ही भीतर झुलस कर काठ का कुंदा हो गयी। सब ओर से भरी, मुरझायी, टूटी और पस्त। मैं समझ गयी कि मैं बुरी तरह ठगी गयी हूँ।[2]

< < < <

आप आप सोचिये, दूसरों के द्वारा लिये गये हमारी जिन्दगी के निर्णय यदि गलत हो जाते हैं, तो दूसरों को कोस-कोसकर हम अपना आधा दुःख तो हल्का कर सकते हैं। पर आजकल अपने निर्णय खुद लेने या कि अपने रास्ते खुद चुनने का जो मर्ज बढ़ गया है, वह ऐसी स्थिति में बहुत भारी पड़ जाता है। अपने अनुभव से मैं तो यही कहूँगी कि अपने महत्वपूर्ण निर्णय आप दूसरों को ही लेने दीजिये। गोटी ठीक बैठ गयी तो पौ-बारह, नहीं बैठी तो आधा दुःख बंटाने के लिये जिम्मेदार लोग हैं ही। पर अब तो मैं आप लोगों को ही नसीयत दे सकती हूँ, मेरी जिन्दगी की तो फजीहत हो ही चुकी थी।[3]

< < < <

---

1- मन्नू भण्डारी, 'स्त्री सुबोधिनी,' त्रिशंकु, पृ० 66

2- वही

3- वही

इस देश में प्रेम के बीज मन और शरीर की पवित्र भूमि में नहीं, ठेठ घर परिवार की उपजाऊ भूमि में ही फलता-फूलता है ।[1]

< < < <

भूलकर भी शादीशुदा आदमी के प्रेम में मत पड़िये । दिव्य और महान प्रेम की खातिर बीवी बच्चों को दाँव पर लगाने वाले प्रेम-वीरों की यहाँ पैदावार ही नहीं होती । दो नावों पर पैर रखकर चलने वाले 'शूरवीर' जरूर सरेआम मिल जायेंगें ।[2]

< < < <

हाँ, शादीशुदा औरतें चाहे तो भले ही शादीशुदा आदमी से प्रेम कर लें । जब तक चाहा प्रेम किया, मन भर गया, तो लौटकर अपने खूंटे पर ।[3]

< < < <

न कोई डर, न घोटाला, जब प्रेम में लगा हो शादी का ताला ।[4]

जीवन में प्रेम का बहकाव न हो, इस हेतु यह कहानी एक सन्देश के रूप में है । मात्र अपनी समस्या पत्र के माध्यम से बताती है । इसमें भोगा हुआ सच का वह हिस्सा है, उसका बोझा कभी-कभी थकाऊ बन जाता है, इस बात की नसीहत है ।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त, पृ0 78

2- वही

3- वही

4- वही

मन्नू जी ने ऐसे पात्रों की समस्या को भी उठाया है, जो आजकल की एक समस्या है। रेत की दीवार कहानी आज के सुशिक्षित युवा मानस की कुंठा, निराशा से घिरी समस्या को उजागर करती है। पुरानी पीढ़ी बच्चों को इसलिये पढ़ा रही है कि उससे आशा को भुनवाने की आशा दोनों पीढ़ियों का संघर्ष अपनी जगह मजबूर है।

"अरे यही सोचा विट्ठल बाबू कि नौकरी के कोल्हू में जिन्दगी भर पिलना ही है। अच्छा पढ़ा-लिखा लेंगें तो जिन्दगी बन जायेगी। इंजीनियर बन जायेंगें तो बड़ी अफसरी-मान-सम्मान, पैसा सभी कुछ तो मिलेगा, पढ़ाई छुड़वा देते तो कहीं क्लर्की-पिनलर्की करते।"

बाबू के स्वर में कही जरा भी शिकायत या दुःख नहीं है। यदि कुछ आ रहा है तो सन्तोष और गर्व। बाबू जिन्दगी की दौड़ में अपने आस-पास वालों से बहुत पिछड़ गये हैं। एक रवि ही तो है, जिसे लेकर जब तब वे अपना हीन भाव धोते रहते हैं।

सो तो ठीक ही कहते हो कमता बाबू, पर घर के और लोगों का भी तो ख्याल रखना पड़ता है।

"क्या हो गया है विट्ठल चाचा को?"

पर बाबू को कोई चिन्ता नहीं। कैसे हौसले में कह रहे हैं - "अब क्या है? एक साल की बात और है, दुक्खम-सुक्खम निकल ही जायेगा। रवि इंजीनियर हो जाये तो मन में मलाल नहीं रह जायेगा कि हमने अपना कर्तव्य नहीं किया बच्चे के प्रति। माँ-बाप का असली सुख तो बच्चों के सुख में ही होता है।"[1]

---

1- मन्नू भण्डारी, 'त्रिशंकु,' रेत की दीवार, पृ0 135

अब शायद उसके कर्तव्य की बात आयेगी । बाबू चाहे न करें पर विट्ठल बाबा तो जरूर करेंगे ।

इस कथा कहानी में पात्रों के माध्यम से वातावरण का बोध है । वातावरण वास्तव में पात्रों की समस्या के भाव का आधार है । पात्रों की मन: स्थिति का चित्रण करने में मन्नू जी माहिर हैं, वे ऐसा वातावरण का निर्माण कर देती है, जहाँ संशय का कोई काम नहीं । जब जब कोई पात्र की समस्या हुयी, उसे उस वातावरण में ढालने का काम किया है । जीवन में एक नहीं अनेक समस्यायें हैं, जिसमें आज के परिप्रेक्ष्य में आर्थिक समस्या जटिल है । युवा पीढ़ी तो डाक्टर, इंजीनियर एवं कोई तकनीकी शिक्षा प्राप्त कर नौकरी की तलाश में मारा-मारा फिर रहा है । साक्षात्कार में सभी कुछ पहले से सेट होता है, निपुणता का कोई मूल्य नहीं । क्योंकि विशेषज्ञ भी उसी चाय के ठहरते हैं, जिनका कि साक्षात् कर चयन करना होता है अर्थात् पहिचान की बात आज के युग में महत्वपूर्ण है । वातावरण हमें सम्पूर्ण कहानी के मान का बोध कराता है न कि किसी अंग का । वातावरण कहानी का परिणाम है न कि कारण । अत: कहानी के विविध तत्वों की सावयवता वातावरण की इकाई को जनम देती है ।[1]

आज की कहानियों के साथ संप्रेषणीयता की समस्या नहीं है । "यह खतरा उनके सामने पैदा होता है, जिनमें शिल्प के प्रति आग्रह हो और यह अतिरिक्त आग्रह उनमें होता है । नये-नये अनुभव की कमी हो । संप्रेषणीयता का सीधा सम्बन्ध अनुभव और भाषा से है । आज का कथाकार अनुभव का धनी है, क्योंकि आवरण मुक्त यथार्थ उसकी आँखों के सामने है ।"[2]

---

1- डा0भगवान दास वर्मा, 'कहानी की संवेदनशीलता- सिद्धान्त और प्रयोग,' पृ0104

2- डा0रामदरश मिश्र एवं नरेन्द्र मोहन, 'हिन्दी कहानी : दो दशक की

मन्नू की कहानी के पात्रों एवं उनकी समस्याओं के मध्य उनका सम्बन्ध सीधी बातचीत के माध्यम से है। रोजमर्रा की जिन्दगी में जैसा वे देखती हैं उसे ही पात्रों के माध्यम से ढाल देती हैं। जन-सामान्य की व्यथा-कथा जन-सामान्य तक की बात को कहानी का मुद्दा बनाया है, तभी तो पात्र समस्या के भीतर संघर्ष करते हुये भी जीवंत है।

मन्नू जी का प्रयास जीवन के यथार्थ का वह हिस्सा है, जिसमें घटना प्रधान नहीं है। जिसमें अनुभव, विचार समस्या, संघर्ष, अन्तर्द्वन्द्व का आधार अधिक है, इसे घटना माना जा सकता है। सीधी-सीधी साफ बात कहना ही उनकी अपनी ऐसी विशेषता है, जहाँ पात्र स्वयं अपनी बात बता देता है। असामयिक मृत्यु में असमय मृत्यु बेटे की मौत का कारण है, इससे अर्थ की स्पष्टता साफ हो जाती है। इसका हर पात्र कथा में जीवंत हो उठता है।

मन्नू जी ने कई एक कहानियाँ घटना के आधार पर लिखी हैं। 'तीसरा हिस्सा' कहानी जनता सरकार के शासन काल का लेखा-जोखा है। जब कि 'महाभोज' उपन्यास की कथा का आधार बहुचर्चित बेलछी कांड है। वे अपनी कहानी में समय, काल को कुछ घंटों के साथ अनेक वर्षों तक को समेट लेती है।

मन्नू जी ने पात्रों में नारी को प्रधानता दी, ऐसी बात नहीं। मिला-जुला हिसाब-किताब है। नारी चरित्र एवं पुरुष चरित्र का चित्रण समकालीन स्थिति में हुआ है। पीढ़ियों के अंतर के साथ उठी समस्या, सामाजिक एवं राजनीतिक दोनों ही है। यह सत्य है कि मन्नू जी ने विभिन्न आधारों ने नारी को देखा-परखा है तथा उनके वातावरण के हिसाब से समस्या को उठाया है। व्यस्क, किशोरी, छात्रा, प्रौढ़

अवस्थाओं के नारी चित्रण में समस्या ही अधिक है। यही उनकी खास पहिचान है कि हर उम्र के साथ उनका अपना सम्बन्ध है। सत्य तो यह है कि नारी पात्र अधिकांश युवतियाँ हैं जो शहरी सम्पन्नता में पली शिक्षित एवं आर्थिक रूप से सम्पन्न नारियाँ हैं। वह स्वयं एक प्राध्यापिका है, इस कारण कामकाजी महिलाओं का जीवन का साक्षात उनकी कथा में है। मन्नू जी स्वयं विद्या संस्थाओं से हमेशा जुड़ी रही है। स्वाभाविक रूप से उनके नारी पात्र भी शिक्षा-संस्थाओं में ही कार्यरत मिलेंगे। छात्रा, अध्यापिका, प्राचार्या आदि का रूप उनकी कहानियों में अधिक उभरा हुआ है। उनके कथा साहित्य में दस प्राध्यापिकायें, छह अध्यापिकायें, छह छात्रायें तथा प्राचार्या का चरित्र चित्रित किया गया है।[1]

मन्नू जी ने पात्रों का नामकरण उनके गुण अवगुण के आधार पर किया है, कहीं कहीं नये नामों का समावेश किया है। सृजन की प्रक्रिया की अपने आप में महत्वपूर्ण है। पात्रों का परिस्थितियों के प्रति विद्रोह संघर्ष का आभास दिलाना है। उनकी कहानी घटना एवं अनुभूतियों का साक्षात दर्शन पात्रों के माध्यम से ही होता है।

पर पैसे के अभाव में छोरा बाबू की सारी गर्जना-तर्जना और दहाड़ भी पत्रिका को बारह अंकों से ज्यादा जिन्दा नहीं रख पाई। बन्द हो गयी। परिणाम, ढेर-सा कर्ज।

मित्रों का द्वेष।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा0अनीता राजूरकर, 'कथाकार मन्नू भण्डारी,' पृ0 107-108

पूरे अस्तित्व के टुकड़े-टुकड़े। बीबी की जीभ में छुरी के चित्रों को पैदाइश बोलती है, तो शेराबाबू को लहूलुहान करके छोड़ती है।"[1]

कहानी के प्रारम्भ में पात्र का जीवन एक मन की उलझन के रूप में शुरू होता है। आज की कहानी इस सत्य को कह रही है। हँसी-खुशी की बातचीत भी कहीं न कहीं किसी घटना की ओर संकेत अवश्य करती है। मन्नू जी के बंटी उपन्यास को ही ले लें। बंटी की समस्या की शुरुआत पति-पत्नी के सम्बन्धों के अलगाव से शुरू होती है। शकुन को अजय से दाम्पत्य सम्बन्धों से हुआ तनाव, अलगाव को जन्म देता है। तब बंटी ही एक आधार है, जिसकी समस्या मनोवैज्ञानिक है, किसके पास रहे। एक स्थिति यह भी है कि बंटी प्रारम्भ में माँ के पास रहे बालिग होने तक। ठीक भी है, पर यह स्थायी हल तो नहीं। क्योंकि जीवन में माँ-बाप का सान्निध्य जरूरी है। माँ है, पर पिता नये। यदि पिता है तो माँ नयी कहीं भी उसका रुझान ढंग से नहीं हो पाता। अंतिम उसकी या बाकी शुरुआत हो तो है कि वह होस्टल में ही रहे। एक छोटे बच्चे के मन में कितना अन्तर्द्वन्द्व रहा होगा। जब उसे दोनों सहयोगी का अपनत्व चाहिये था, तब अलगाव, जो तलाक में परिणित हो जाता है।

पति-पत्नि के सम्बन्ध विच्छेद उनकी समस्या का तो हल हो सकता है। मूल पात्र जो घटना का एक आधार है, वह बंटी है। बंटी की समस्या, माता-पिता के सम्बन्ध विच्छेद या पुन पिता तथा माता के विवाह से भी नहीं सुलझाती। कितना अच्छा होता कि इस समस्या का समाधान निकल आता। केवल एक बात जरूर निश्चित हो जाती है

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मन्नू भंडारी, 'तीसरा हिस्सा,' त्रिशंकु, पृ0 138

कि आज भी बंटी एक नहीं कई हैं तथा बंटी की समस्यायें तो आज की नहीं कई वर्षों से चली आ रही समस्यायें हैं। तब इसका हल क्या है ? यह प्रश्न चिन्ह अन्त तक उलझाये रखता है। दुःख-सुख की परिधि में दुःख की अनुभूति अंतिम समय तक रही।

"तुम कौन हो बेटा ? कहाँ से आये हो ?" बंटी याद करने की कोशिश कर रहा है, पर जैसे उसे कुछ याद भी नहीं आ रहा।

"बोलो बेटा बताओ।" वह बहुत जोर लगा रहा है, वह कहाँ से आया है ? कहाँ से ........... और उसके मन में एक अजीब-सी दहशत भरने लगी है। "डरो नहीं बताओ बेटा।" वे उसका कंधा थपथपा रहे हैं। "बंटी उठो बेटा, अब उतरना है।" कोई उसे कन्धों से पकड़े हुये है और याद करने की कोशिश कर रहा है कि वह कुछ जवाब दे सके ....।

उसे गोद में उठाकर किसी ने खड़ा कर दिया। सफेद दाढ़ी वाले चेहरे में से एक और चेहरा उभर आया ..... पापा।

"जल्दी से मुँह धो लो, नींद उड़ जायेगी।" पाँच-सात मिनिट में स्टेशन आने वाला है।

तो बंटी धीरे-धीरे जैसे अपने में लौट आया। रेल का डिब्बा, डिब्बे में बैठे हुये लोग सामान बाँधे हुये पाया। सबेरे का उजाला चारों ओर फैल गया था।

पता नहीं क्या हुआ कि इतनी देर से मन पर रखा हुआ पत्थर जैसे एकाएक ही दरक गया और ढेर-ढेर आँसू उफनन आये। भीतर ही आँखों में ही नहीं बाहर की आँखों में भी।[1]

---

1- मन्नू भंडारी, 'आपका बंटी,' पृ0 196

पं०हजारी प्रसाद द्विवेदी पुरानी पीढ़ी के हैं, उनकी मानसिकता में एक नयी बात घर कर गयी है। 'अनामदास का पोथा' नामक कहानी में उन्होंने उल्लेख किया है कि कल्पना कीजिये, उस पुरुष की जो वयस्क होकर ज्ञान-ध्यान भी जान चुका हो, पर नहीं जानता हो कि स्त्री क्या होती है ..... कि किस स्त्री को किस संबोधन से बुलाना चाहिये। यह प्रश्न था ऋषि कुमार के मन में क्योंकि स्वप्न में ही तो देखा था, शुभा को। इस कथा के विस्तार में यदि देखें, उसी स्वप्न ने ऋषि कुमार के मन को चंचल कर दिया था।

ऋषि कुमार नहाने के लिये एक नदी के किनारे उतर गये वहाँ एक वृद्धा स्नानादि से निवृत्त होकर सूर्य को अर्घ्य दे रही थी। ऋषि कुमार एकटक उसकी ओर देखने लगे, सब मिलाकर वह शुभा के मुख के समान ही सौम्य मनोहर मुख था। क्या ये भी स्त्री पदार्थ है ? पूछना चाहिये।

तभी वृद्ध महिला ने ही उनकी ओर देखकर पूछा'' इस तरह क्या ताक रहे हो ? सौम्य, तुम कौन हो ?

ऋषि कुमार के आश्चर्य में मानों बाढ़ आ गयी। उनके गले से आवाज नहीं निकल रही थी, रुक-रुककर बोले,'' भवति मैं रैक्व हूँ ........ पर पहले मुझे यह बतायें कि क्या कहकर मैं आपको संबोधित करूं ? आप भी शुभा की भाँति स्त्री पदार्थ हैं। ....

वृद्धाने विस्मयपूर्ण कहा -'' क्या तूने स्त्री नहीं देखी। तेरी माँ या बहन नहीं है ? घर में कोई महिला नहीं है ?''

'' थोड़ा रुको माँ, थोड़ा रुको, मेरी माँ थी, मगर जन्म से पहले ही चल बसी, पिताजी बचपन में वायुलीन हो गये, मैं अकेला ही रहा।''

"तो तूने सचमुच कोई स्त्री नहीं देखी ?"

"देखी है माँ, शुभा को देखा है, बहुत सुन्दर है।"

"शुभा कौन है बेटा ? ..."

"मेरा गुरु है, मैं बहुत थोड़ा ही सीख पाया, थोड़ी देर के लिये ही तो देख पाया।"[1]

पहचान तो है, जो जीवन को सार्थक निरर्थक करती है। डा० द्विवेदी ने अनामदास का पोथा में एक जीवन दूसरे जीवन को जब स्वप्न में देखता है, तब जागृत होने पर उसका मन अवश्य चंचल हो उठता है। बात इतनी सी नहीं, बल्कि प्रेम के अंकुर पनपने की शुरुआत भी है। जीवन की सार्तक्ता को रचनाकार किसी न किसी रूप में प्रस्तुत किये जाने की परिपाटी है। नरेन्द्र कोहली, अमृता प्रीतम, डा०बच्चन सिंह, उमाकान्त मालवीय ने भी प्रेम के स्वरूप को प्रस्तुत तो किया है, पर धर्म, दर्शन के साथ भौतिक स्तर को भी देखा समझा है। संसार की कोई वस्तु ऐसी नहीं, जिसका सम्बन्ध न हो।

यह बात आज भी विचारणीय है कि स्त्री न तो किसी पुरुष का धन है, न संपत्ति, न जर खरीद गुलाम। वह भी आम मानव की तरह या समान एक सजीव मानुषी है। वह भी पुरुष की तरह पूरी तरह जीने के लिये स्वतंत्र है, फिर क्यों वर्तमान में अतीत को स्वीकार किया जाता है। इसके लिये नारी ही नहीं पुरुष भी जिम्मेदार हैं। प्राचीन कथायें भी इस बात को स्वीकार करती हैं। मन्नू जी ने इस तथ्य कथ्य को उपन्यासकार शरतचन्द्र के स्वामी की कथावस्तु को एक नया आयाम दिया है।

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- सारिका, अक्टूबर (16 प्रथम पक्ष), पृ० 15 (डा०हजारी प्रसाद द्विवेदी, 'अनामदास का पोथा,')

पहचान में युवा अवस्था की मिनी से नरेन्द्र से विवाहोपरान्त घनश्याम से आत्मीयता भोलेपन का अहसास पहिचान है। नारी जीवन जब जब ऊहापोह में पड़ा, तब घनश्याम जो कि पति है, उसका भोलापन भलमनसाहत ही काम में आयी। यह सनातन सत्य जो कि घटना का आधार है, जीवन में मोढ़ के लिये आवश्यक है, जबकि प्रारम्भ की दशा में उसका विद्रोह पति से होता है, क्योंकि पति घनश्याम से प्रेमी नरेन्द्र की तुलना करती है। मानवीय मूल्य में कहीं कमी नहीं आयी। प्रेम के लिये संघर्ष का मूल भी कुछ है, इसका आधार भी मानसिकता है तथा विचार में थोड़ी बहुत क्रांति है। माँ के समझाने में स्वामी के प्रति खोज ही है, कि माँ के पुरातन सत्य को वह स्वीकार कर लेती है।

मन्नू जी ने अपने कथा-साहित्य के पात्रों में हर श्रेणी के पात्रों का सृजन किया है, जो भौतिक युग के ही प्रौढ़, युवा, बचपन, लड़कपन के पात्रों को अपने मध्य में से लिया तथा उनके साथ हो रही घटनाओं का साक्षात् भी किया। समस्या घटना के ऐसा आधार है, जहाँ व्यक्ति कहीं न कहीं अपनी समस्या को निराकरण ढूंढता है, इस प्रयास में हमारी कथाकार सफल रही है।

'ईसा के घर इन्सान' की प्रमुख पात्र कु0एंजिला है, जो अविवाहित है। फादर संस्था का प्रधान अधिकारी है। धार्मिक संस्थाओं में जो रुढ़ियाँ हैं, उनके प्रति विद्रोह की झलक ही मुख्य समस्या है। कु0एंजिला ने रुढ़ियों के प्रति विद्रोह किया है, जिसके कारण फादर को दीवारें ऊँची करनी पड़ीं। 'अनचाही गहराइयाँ' की मुख्य नारी पात्र सुनन्दा है। सुनन्दा अविवाहित है, शिवनाथ एक छात्र है कहानी की मुख्य घटनायें ऐसी समस्या पर आधारित है, जिसमें अकारण आकर्षण नर-नारी में

होता है, यह एक मनोविज्ञानिक ग्रंथी का आधार है। नर-नारी का विवाह पूर्ण मिलना-जुलना सिद्धान्त रूप में मान्य नहीं है। पुरातन रूढ़ी इसे अस्वीकार करती है। प्रेमभंग, मोहभंग, की कथायें आदिकाल से लिखी जाती रही है, उसका पुरातन सत्य मात्र इतना है कि एक आपत्ति है। और यह आज भी है, खुले मन से इसे स्वीकार नहीं किया जाता है।

मन्नूजी की कहानी में एक बार और कहानी की स्थिति सामान्य प्रेम की स्थिति से है। बिल्ली का प्रेम कुंज से विवाह एक अनिवार्य अंग भी है। किसी अन्य पुरुष से प्रेम से जुड़ने का अन्तर्द्वन्द्व की स्थिति भी अजीब है, हाँ न मध्य भी असमर्थता जीवन की मलीनता में पड़ जाता है। मन्नू जी ने इसी क्रम से जुड़ती कहानी आते-आते यायावर की लिखी है। मिताली एक ऐसी नारी है, जो आधुनिकता और आधुनिक बोध के कारण बार-बार पुरुष से छली जाती है। इसका कारण है पाश्चात्य सभ्यता का असर है। पाश्चात्य सभ्यता में स्त्री-पुरुष को बदले, या पुरुष-स्त्री को कोई बड़ी बात नहीं। नर-नारी के सम्बन्ध में एक व्यवहारिक सत्य है कि वे इसे स्वच्छता कहते हैं। पुरुष द्वारा छली जा रही नारी का यह रूप, भारतीय परिवेश में मान्य नहीं। ऐसी नारी को दुतकारा ही जाता है।

प्रेम विवाह से सम्बन्धित कहानियों में 'कमरे, कमरा और कमरे,' 'एखाने आकाश नाई,' 'बन्द दराजों का साथ,' में मन्नू जी ने नारी जीवन के प्रेम के सभी दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। प्रेम में मन: स्थिति क्या है ?व्यक्तिगत जीवन की स्वतंत्रता, गृहस्थी में टकराव, गाँव-शहर की जिन्दगी में अन्तर को व्यक्त करती समस्या है। एक नहीं अनेक समस्यायें हैं जो नारी-पुरुष जीवन के मूल्यों में टकराहट

पैदा कर देती है । प्रश्न केवल इस बात का क्या प्रेम विवाह सफल है ? सफल नहीं है ? पति-पत्नी में टकराव तो आता है, पर उसमें माधुर्य है । प्रेम- विवाह में टकराव में माधुर्य नहीं है, बल्कि तनाव है । नई नौकरी में विवाह के बाद पति की परछाईं बनकर रहने की पत्नी की अवस्था, यह चित्रण भी मनोविज्ञान का एक आधार है । वैसे त्रिशंकु में भी प्रेम विवाह है । संस्कारों का अन्तर्द्वन्द्व तो हर अवस्था में रहता है । किशोरियों की मानसिक स्थिति, संस्कारों का अन्तर्द्वन्द्व, माँ की दोहरे स्तर की मानसिकता, पीढ़ियों का अंतराल आधुनिक और पारंपरिक दोनों स्तरों पर जीना ऐसा ही सब कुछ त्रिशंकु कहानी में है । मन्नू जी ने प्रयास किया है कि कल का सत्य आज है या नहीं , मानसिकता के विषय में आज का चिन्तन स्वार्थ से जुड़ा है । ये सभी कथायें प्राध्यापिका जीवन से जुड़ी है ।

गुल्जार ने अपनी कहानी ' देवर जी ' में जीवन के उस यथार्थ को चित्रित किया है, जहाँ नारी को मात्र भोग्या माना गया है । जब भाई की पत्नी भाभी ही कहलाती है, तब उसे भाई की भोग्या हो ।

" यह धन्धा कब से करने लगे हो ?"[1]

" मजाक नहीं, पिछली बार खुद बुढ़िया ने कहा था, कौन है ?

" पता नहीं, कह रही थीं कि वह दूसरी बेला है । "

" तो चलो "

" लेकिन अगर बेला बुरा मान गयी तो ? "

" किदार जोर से खिलखिलाकर हँसा । "

" कसम से बड़े अनाड़ी हो, अरे । "

---

1- सारिका, सितम्बर 1983, पृ0 82

"उनकी सगी माँ, बहन भी हो, तो उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता।"
"दोनों ने बोतल की तलछट भी निचोड़ ली।"
"चलो चलें।"
"और प्रोग्राम बन गया।"[1]

मन्नू जी की नारी पात्रों में चरित्र की प्रधानता, मध्यवर्गीय अधिक है। उच्च वर्ग को उन्होंने स्थान दिया है। इसके साथ ही गरीब वर्ग के प्रसन्न में अधिक संघर्ष है। प्राध्यापिका वर्ग में पुरातन सत्य के मध्य आधुनिकता का बोध अधिक है, जहाँ शिक्षा और आर्थिक सम्पन्नता ने निश्चय ही एक अहम को जन्म दिया है, जिसके कारण नारी भीतर ही भीतर टूटती नजर आती है। पुरुष में एक अहम है कि वह तो सामंतवादी है, नारी को उसका कहना मान्य करना होगा। प्रेम विवाह की समस्या में पछतावा की सीमा ना समझा है, जो एक मनोवैज्ञानिक सत्य है।

लेखिका ने जीवन के विभिन्न उतार-चढ़ाव में स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के साथ एक ऐसे वर्ग का भी साथ लिया है जो छात्रा वर्ग है, अध्यापक वर्ग है। इन सबके जीवन में उनकी निकटता है। पात्र का चयन करते समय, उस घटना का ख्याल रखा है जो एक व्यवहारिक सत्य है। विवाहित जीवन में स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में कटुता का कारण सन्देह का व्यवहार है। नारी का विवाहित जीवन के बाद जो इच्छा, अनिच्छायें होती हैं, उनका संघर्ष ही अध्यापिका वर्ग का मुख्य मुद्दा है। जीती बाजी की हार, की सुरला, तीन निगाहों की एक तस्वीर, घुटन, क्षय, तीसरा आदमी, ऊँचाने आकाश नाई में नारी शिक्षित होने के साथ-साथ आर्थिक रूप से सम्पन्न भी है, फिर भी उसको आदर्शों के सीखचों में रहकर हर तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। मातृत्व की चाह, बेमेल विवाह,

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- पूर्वोक्त।

रोगग्रस्त पुरुष, अपूर्ण पुरुष, अनिच्छा, पति के व्यवहार को स्वीकार करने की घुटन, आर्थिक स्थिति से विवश, सन्देहग्रस्त व्यवहार, यह समस्याओं में नारी जीवन की अपनी ऐसी समस्या है, जो भौतिकवादी साधनों के मध्य भी एक कड़वाहट है। इन पात्रों की समस्या पर मन्नू जी अधिक सचेत भी हैं। प्राध्यापक एवं अध्यापिका एक ही व्यवसाय की नारी पात्र हैं, पर दोनों के जीवन, रहन-सहन आचार-विचार में अन्तर स्वाभाविक है।

प्राध्यापक वर्ग की नारी पात्र और उनसे सम्बन्धित पारिवारिक दाम्पत्य समस्याओं का निराकरण के लिये समझौता जैसा शब्द तो प्रायः गायब हो जाता है। जबकि अध्यापिका वर्ग की नारी, घुटन के मध्य भी जीने के लिये त्याग करती है तथा सनातन सत्य के साथ समझौता करती है, भले ही उसका मन समझौता के लिये इतना कष्टप्रद ही क्यों न हो।

मन्नू जी ने एक अन्य नारी पात्र को लिया, जो शिक्षा ग्रहण कर रही है। इस वर्ग में हर वर्ग की आर्थिक स्थिति की छात्रा एवं किशोरी है। इस वय अवस्था में एक निश्चित ऐसी मन की ग्रंथि है, जिसकी उथल-पुथल की मानसिकता पुरुष वर्ग के नजदीक रहना चाहती है। इसे कुछ लोग यौन वर्ग से सम्बन्ध की बात कहेंगे। पर यह एक मात्र वहम तो नहीं है, पर यह अवश्य है कि उस मानसिकता में ग्रंथियों की बढ़ती बढ़त ही है, यह एक शारीरिक एवं मनोविज्ञान का ही आधार माना जा सकता है। यह बात तो मानना ही पड़ेगी कि लेखिका में इस वर्ग की बढ़ती समस्याओं के प्रति जागरूकता दिखाई तथा उनके नजदीक रहने का जो लोभ था उससे उस व्यथा कथा को चित्रण करने में कहीं कठिनाई नहीं आयी, बल्कि एक नये बोध को जन्म देकर भोगा हुआ सत्य उद्घाटित किया है। मन्नू जी का यह चिन्तन इस दिशा में महत्वपूर्ण है। यह सत्य है कि इसके पीछे आर्थिक पक्ष प्रबल रहा है।

'यही सच है,'' त्रिशंकु,'' गीत का चुम्बन,'' जीती बाजी की हार,' 'संख्या के पार,' कहानी का आधार पक्ष किशोर वय एवं छात्रा वर्ग से रखने वाली समस्या से है। एक पक्ष, सम्बन्धों को नकारती है, तब दूसरा पक्ष, असमर्थता को व्यक्त करता है, वहीं समर्पित पक्ष भी है। पुरानी एवं नयी पीढ़ी के मध्य की टकराहट भी अजीब है। 'यही सच है,' 'त्रिशंकु,'' गीत का चुम्बन,''जीती बाजी की हार,'' संख्या के पार,' कहानी की जिन पात्रों के नाम की ओर ध्यान दिया जावे, तो उनके नाम में भी एक अर्थ है, घटना का चक्र भी उसी आधार पर लेखिका ने अंकित किया है। 'यही सच है' की दीपा, 'त्रिशंकु' की तनु, 'गीत का चुम्बन,' की कालिका, 'जीती बाजी की हार' की नलिनी, 'आशा,' एवं 'संख्या के पार,' की प्रमिला के नाम से ही उनकी मानसिक ग्रंथि की जानकारी के साथ घटनाक्रम का भी अहसास हो जाता है। वास्तव में मन्नू जी यथार्थ की कथाकार है तथा उसकी अभिव्यक्ति को व्यक्त करती है। इन कहानियों के पात्र उनके आसपास के हैं, जहां उनका अपना जीवन है, भारतीय एवं पाश्चात्य सभ्यता के आधार में झूलती उनकी अपनी समस्यायें हैं, जिसका निराकरण एक हद तक लेखिका ने सुलझाया है। नयी एवं पुरानी पीढ़ी के मध्य का संघर्ष वैचारिक है। नयी पीढ़ी विचार करते समय आगे-पीछे नहीं सोचती, जबकि पुरानी पीढ़ी ने जिस अतीत को देखा है, वर्तमान में भी उस अतीत के सहारे चलने की व्यथा कथा है।

मन्नू जी ने एक प्रकार की कई कहानियां लिखी हैं, उनके पात्र उस मनोदशा से पूर्णतः ग्रस्त है। आज के राजनीतिज्ञों पर कटाक्ष और आज की राजनीति क्या है? इसका चित्रण है' मैं हार गई,'' तीसरा हिस्सा अलगाव' में हुआ है। अन्य कहानियों का भी इसी प्रकार का वर्गीकरण किया जा सकता है:

| क्र0 | कहानी | मुख्य कथ्य | मुख्य पात्र |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| 1- | मैं हार गयी | आज के राजनीतिज्ञों पर कटाक्ष | मैं |
| 2- | तीसरा हिस्सा | भ्रष्ट पत्रकारिता, भ्रष्ट राज-नीति एक सामाजिक व्यवस्था पर एक दृष्टि | शेरा बाबू |
| 3- | अलगाव | भ्रष्ट राजनीति, गरीब जनता का शोषण ग्रामीण अशिक्षित | नेता |

लेखिका ने स्त्री पुरुष प्रेम के विभिन्न रूपों को भी कहानी में आयाम दिया है।

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1- | गीत का चुम्बन | स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध में प्रेमभाव, विचार, विवाहपूर्व प्रेम विचार | कनिका |
| 2- | श्मशान | प्रेम की एकनिष्ठा का उपहास | युवक |
| 3- | कील और कसक | पति प्रेम से वंचित नारी की व्यथा कथा | रानी |
| 4- | अनचाही गहराइयाँ | पुरुष का स्त्री के प्रति रहस्य-मय आकर्षण प्रेम, ~~प्रेम ..~~ | शिवनाथ |
| 5- | नशा | अद्वितीय रूप प्रेम का | आनंदी |
| 6- | एक बार और | प्रथम प्रेम की असंदिग्ध महत्ता की स्वीकृति | बिन्नी |
| 7- | आते-जाते यायावर | स्त्री का पुरुष के प्रति सहज आकर्षण | मिताली |
| 8- | स्त्री सुबोधिनी | प्रेम की नसीहत | मैं |

लेखिका ने नारी संचरण को विभिन्न दृष्टिकोण से देखा-परखा है। इन कहानियों में निम्नलिखित कहानियां हैं :

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1- | पुराने आकाश नाई | विभिन्न स्तरों की नारी समस्यायें | मिताली |
| 2- | दरार भरने की दरार | दाम्पत्य जीवन में पुल का सेतु बनाना, एवं सेतु का टूटना नारी जीवन की दाम्पत्य व्यथा कथा | नंदिता |
| 3- | ऊंचाई | नारी के पारम्परिकता विरोधी जीवन दर्शन बोध की अभि-व्यक्ति | शिवानी |
| 4- | कमरे, कमरा और कमरें | पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था में नारी के विकास, व्यक्तित्व के घठन की कथा। नारी विडम्बना | नीलू |
| 5- | बन्द दराजों का साथ | पति के बेवफाई भारतीय नारी के जीवन को खंडित क्षात-विक्षात कर देती कहानी | मंजरी |
| 6- | नई नौकरी | नारी की मानसिक तथा बौद्धिक गुलामी का चित्रण | रमा |
| 7- | यही सच है | शिक्षित, आर्थिक आत्म-निर्भर वाली | दीपा |
| 8- | रानी माँ का चबूतरा | नारी का चित्रण मजदूर नारी का चार्ट | गुलाबी |
| 9- | नकली हीरे | भौतिक सम्पन्नता | मिसेज खान |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 10- | इन्कम टैक्स और नींद | आधुनिकता का बोध बेमेल अभाव, जन्महीन ग्रंथि | डा0 दयाल |
| 11- | क्षय | परिस्थितियों की विवशता | कुन्ती |
| 12- | चश्में | नारी-पुरुष चरित्र भेद | मिसेज वर्मा मि0वर्मा |
| 13- | मजबूरी | दो पीढ़ियों की विवशता नारी सन्दर्भ | बूढ़ी अम्मा |
| 14- | हार | मानसिकता से पराजित नारी | दीपा |
| 15- | घुटन | विवाहित तथा अविवाहित स्थितियों में नारी की घुटन | पुनिया,मोन |
| 16- | अकेली | अकेलेपन का संत्रास | सोमा बुआ |
| 17- | तीन निगाहों की | पति पत्नि के दाम्पत्य सुख-दु:ख सम्बन्ध | दर्शना |
| 18- | ईसा के घर इंसान | धर्माश्रित नारी का शोषण | एंजिला |
| 19- | जीती बाजी की हार | नारी में मातृत्व की चाह | मुरला |
| 20- | एक कमजोर लड़की की कहानी | मानसिकता के कारण कमजोर | रूप |
| 21- | सयानी बुआ | पारिवारिक जीवन में नीरसता | बुआ |
| 22- | अभिनेता | नारी को छलना | रंजना |
| 23- | दीवार बच्चे और बरसात | नारी की अपनी दो पीढ़ियों का संघर्ष | शिक्षित नारी |

मन्नू जी ने स्त्री-पुरुष के विभिन्न विषयों को यथार्थ के धरातल में जैसा देखा वैसा ही प्रस्तुत किया, उन कहानियों में निम्न हैं :

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1- | पंडित गजाधर शास्त्री | लेखकों की झूठी अहम्मन्यता पर व्यंग्य | पं० शास्त्री |
| 2- | दो कलाकार | कला और धर्म की तुलना : जीवनोपयोगी की कसौटी पर | अरुणा |
| 3- | खोटे सिक्के | टकसाल के मजदूरों के शोषण एवं उनकी समस्या | खन्ना |
| 4- | तीसरा आदमी | सन्तानहीनता का अभिशाप | सतीश |
| 5- | सजा | देरी से न्याय न मिलना | आशा |
| 6- | एक प्लेट सैलाब | हर उम्र में हर वर्ग की अपनी समस्यायें | सभी |
| 7- | छत बनाने वाले | नई पुरानी पीढ़ी का संघर्ष | ठाकुर ताऊजी |
| 8- | शायद | आर्थिक स्थिति पर व्यंग्य | राखाल |
| 9- | त्रिशंकु | नयी पीढ़ी का पुरानी पीढ़ी से विरोध | तनु |
| 10- | रेत की दीवार | बेरोजगार की समस्या | रवि |
| 11- | संख्या के पार | वात्सल्य भावना | प्रमिला की माँ |
| 12- | अंकुश | नयी पीढ़ी का पुरानी पीढ़ी का विरोध दकियानूसी विचार | मिसेज चोपड़ा |

---

लेखिका ने हर समस्या को आधार लेकर पात्रों का चयन ही नहीं किया बल्कि उनकी उस समस्या पर दृष्टि दौड़ायी है, जिसकी रचना विधि यथार्थ पर आधारित थी । निश्चय ही मन्नू जी ने साहित्य में पुरानी एवं नयी पीढ़ी की समस्या को कहानी के माध्यम से जीवंत किया है ।

# अध्याय : चतुर्थ

## मनोविज्ञानिक इतर उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

## मनोविज्ञानिक इतर कहानियों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

## अध्याय : चतुर्थ

## मनोविज्ञानिक इतर उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

## मनोविज्ञानिक इतर कहानियों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

सामान्य-असामान्य प्रवृति मानव के स्वाभाविक प्रक्रिया का आधार है। पं० रामचन्द्र शुक्ल ने क्रोध की जो परिभाषा की है, वह उनके जीवन व्यवहार का निचोड़ है। क्रोध के विषय में केवल मनोविज्ञान इतना ही कहता है कि यह असामान्य प्रवृत्ति है। क्रोध का मूल कारण ढूंढना रचनाकार का एक ऐसा कार्य है कि साहित्य में उसका साक्षात् प्रवृत्ति के रूप में दिखाई देता है। माता-पिता की शिक्षा में मानसिक दुर्बलता का आधार अधिक है। अधिक बालकों की मन्द बुद्धि है, तो उनमें दृढ़ विश्वास का आधार भय है। "असामान्य व्यवहार जन्मजात नहीं होता, परिस्थितियों के कारण दूसरा निर्माण होता है, रचनाकारों ने साहित्य लेखन में इसी आधार का समावेश किया है।"[1]

ममता कालिया ने अपने उपन्यास में एक नयापन है। जिसमें सम्मोह सन्देह में बदलकर पति-पत्नी से सम्बन्ध विच्छेद कर लेता है। इस तरह समकालीन उपन्यास सन्दर्भों का न होकर सम्बन्धों और स्थितियों का होता जा रहा है। इससे यह आशय नहीं है कि आधुनिकता की प्रक्रिया सन्दर्भों को उजागर नहीं करती, सम्बन्धों और स्थितियों को

---

1- डा०रामकृष्ण गुप्त, 'मनोविज्ञान पर साहित्य का प्रभाव,' भूमिका, पृ०2

ही उजागर करती है। इस उपन्यास की आधारशिला आधुनिकता और संस्कारबद्धता के बीच तनाव को लेकर रखी गयी है। इसमें एक लड़की के कुंवारेपन को पुरानी कसौटी पर परखा गया है। संजीवनी से सम्भोग के बाद परमजीत को यह अहसास कचोटने लगता है कि शादी से पहले उसकी अलग दुनिया रही होगी, जिसका भागीदार कोई और रहा होगा। इसका कारण यह है कि संजीवनी सम्भोग के समय न चीखी, न पुकारी और न ही उसे खून आया। इसलिये परमजीत पर पहला न होने का दुख इतना हावी हो जाता है कि वह दोनों के सम्बन्धों को तोड़ देता है। नायक का यह विश्वास कहाँ तक शरीर विज्ञान पर आधारित है? यह दूसरा सवाल है। ममता कालिया ने इस रूढ़ि पर चोट करना चाहा है। वह संजीवन अपने ढंग से जरा से फैलाव के बाद भी कुंवारी है, चरित्रहीन नहीं। इस बात को पहले भी उपन्यासों में कहा गया है, लेकिन इस उपन्यास में इस कहने का अन्दाज भिन्न है। इसमें परमजीत का जीवन टूटन और ठहराव से घिर जाता है। वह रमा जैसी कंजूस फूहड़ लड़की से शादी। परमजीत के मन में कुंवारेपन की धारणा उसकी जीवन दिशा ही बदल देती है। वह संजीवन से कटकर अपनी निजता खो बैठता है। वह औसत पति और औसत बाप तो बन जाता है, लेकिन अपनी पहचान खो बैठता है।[1] जीवन में आज की जन-समस्या भी है, घटना भी है, आज के उपन्यास में सम्भोग और बलात्कार के प्रसंग भी हैं। घटना, समस्या, यह सब सामान्य जीवन के अंग हैं, जहाँ भौतिकता की दौड़ बढ़ती जा रही है। मणि मधुकर के सफेद मेमने की कहानी भी इसी

---

1- ममता कालिया, 'बेघर'

तरह की मिलती-जुलती है। "रामौतार की जिन्दगी से जितना प्यार करती है, उतना ही उसकी मौत से। ...... दोनों के बीच विभाजन-रेखा खींच देना उसके बस की बात नहीं। वह पति को भारी महत्व देती है और अपने मुंहासों को भी। एक ऐसी स्थिति में टिक गयी है कि निदान की जागरूकता खत्म हो चुकी है। ...... दाम्पत्य जब अपनी हदें पहचान लेता है, तो आश्वस्त हो जाता है। आश्वस्त और सुखी। सुख फिर चाहे रेत हो या पानी, कोई अन्तर नहीं पड़ता"।[1]

कृष्णा सोबती का उपन्यास 'सूरजमुखी अँधेरे के' में लेखिका ने कथा का आवरण सम्भोगीय कोटि में एक नये अन्दाज को रखा है। आधुनिकता के धरातल पर गूढ़ पहेलियों को बड़ी सादगी से उपन्यास में रखा गया है। इसमें शिल्प के पुराने साँचे को तोड़ा गया है। स्त्री वह सड़क है, जिसका किनारा नहीं है। वह आप ही अपनी सड़क का आखरी छोर है।[2] क्या स्त्री या रत्तिका मिर्जा मरजानी का आधुनिक रूप है, जो चलते-चलते सड़क के आखिरी छोर पर पहुँच गयी है ? क्या वह सचमुच गीली लकड़ी है, जो जब भी जलेगी धुंआ देगी।[3] क्या वह वास्तव में बुरी लड़की है, जिसने बुरा काम किया और उसकी योनि से खून निकला है ? इसके लिये उसे कितनी यातना सहन करती है ? क्या वह इतनी ठण्डी और मनहूस है, उसके बारे में यह कहा जाये कि उसके पास पहने कपड़ों के सिवाय गरमाहट नहीं है। भानुराय सुमेर,

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- मणि मधुकर, ' सफेद मेमने,'

2- कृष्णा सोबती, ' सूरजमुखी अँधेरे में, ' पृ० 11

3- वही, पृ० 81

दुष्यन्तनियम, राजन श्रीपत उसकी राह से गुजर जाते हैं। वह मातुराम से समय की भाषा में कह रही है - " जब जब कोई नम्बर मिलाया है, कभी सही जगह घण्टी नहीं बजी।"[1] इसी तरह लिख रहे हैं, ओम प्रकाश दीपक - कुछ जिन्दगी बेमतलब, गिरीश आस्थाना - धूपछाँही रंग, मोहन राकेश - अँधेरे बन्द कमरे, सिद्देश - कैंचुल, गंगा प्रसाद विमल - कहीं कुछ और, भीष्म साहनी - कड़ियाँ, तमस, रामदरश मिश्र - जल टूटता हुआ, सुरेश सिन्हा - सुबह अँधेरे पथ पर, हृदयेश - हत्या, राजकमल चौधरी - मछली मरी हुयी, मधुकर गंगाधर - यही सच है, काशीनाथ सिंह - अपना मोर्चा, गोविन्द मिश्र - उतरती हुयी धूप, में यही सब कुछ है, जो आधुनिक मनोविज्ञान का आधार है। एक नहीं कई समस्यायें जो आज जीती हैं, वे सब उभरकर सामने आयी हैं। आज का लेखन इसी क्रम से लिखा भी जा रहा है। जिसमें नये सन्दर्भ हैं, जो प्राचीनता के विरुद्ध हैं।

कहानी जो घर से शुरु हुयी थी, उसमें, धार्मिक कहानी, वीरता की कहानी, भूत की कहानी ने एक ऐसा आधार दिया जिससे बच्चों के मन पर भय, वीरता, धीरता के गुण उभरकर आये। बौद्ध जातक कथाओं ने जीव की विभिन्न स्थितियों का परिचय, कराया, वही राम, कृष्ण, गौतम, महावीर की कथाओं ने धर्म का जो रूप प्रस्तुत किया, उसमें महाभारत, रामायण से जुड़ी कथायें भी लीं, जो कर्म की कहानी कही गयी। कहानी के युग का सही प्रतिनिधित्व मुंशी प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद ने किया। प्रेमचन्द ने विभिन्न समस्याओं जो जन-जन में व्याप्त थी की कथा को नया रूप दिया, उसे जन-मानस से जोड़ा भी है। अज्ञेय, जैनेन्द्र ने भी कहानी लिखी, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' ने तो जीवन को ही बदल दिया।

---

1- पूर्वोक्त, पृ० 81

इसने एक सत्य को उद्घाटित किया कि मरने से पूर्व, जीवनभर का जो वृत्तान्त आँखों के सामने आता है, वह भोगा हुआ यथार्थ है । इसके बाद तो कहानी की शुरुआत में नये सन्दर्भ और समस्याओं ने जन्म लिया । पुरुष एवं महिला कथाकारों की जो लम्बी कतार है, उसमें कहानी में मनोविज्ञान तो प्रारम्भ से अन्त तक पात्रों की संरचना में रहता है । घटना विशेष का सम्बन्ध भी भावात्मक अनुभूति है । कहानी जो भी कहीं कई हो, या लिखी गयी हो, उसमें आज भोगा हुआ यथार्थ स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है ।

प्रेमचन्द की कहानी 'पंच परमेश्वर' में जो दृष्टि लेखक ने दौड़ाई है, उसमें एक तारतम्य है, जिसमें व्यक्ति काम की नई दिशा मानता है । जबकि जयशंकर प्रसाद ने इतिहास के पृष्ठों को कल्पना के सहारे पिरोया है, 'पुरस्कार' कहानी में, एक बोध है, प्रेम, त्याग, राष्ट्रीय भावना का । जैनेन्द्र, अज्ञेय तो इससे भी आगे बढ़ गये । उन्होंने जो देखा उसे पिरोने का प्रयत्न किया । जिसमें मनुष्य का मनोविज्ञान, बाल-मनोविज्ञान से जुड़ा गया । 'पाजेब' जैनेन्द्र की ऐसी ही कथा है । मीठा बाहर का सब कुछ दिख रहा है । यदि हम महीपसिंह की 'नींद' कहानी में नयापन देखने की कोशिश करें तो वह का चेहरा पकड़ने में नहीं आता । उसके चेहरे पर कुछ नहीं था, न दुविधा, न संकोच, न असमंजस, न मजाक, न ताड़ना, कुछ भी नहीं था उसका चेहरा वैसा ही है जैसा हमेशा रहता है । नींद तो वास्तव में नींद है । वास्तव में यह सब कुछ नींद के पहले है, तब बाद में क्या है ? कथाकार का यही तो नया बोध की शुरुआत है । थोड़ा हटकर भीमसेन त्यागी ने 'दीवारें और दीवारें' में पत्नी नौकरी करती है, इसलिये वह अपने पति को चाय बनाने के लिये कहना हक समझती है । इसलिये वह दिन निकलने का इन्तजार करता है । पत्नी की नरम और

चिकनी जाँघों से साटन के लिहाफ तक । इसका सिलसिला झटका खाकर दूर भी जाता है । मिस्टर खन्ना उसकी पत्नी का अफसर है, जिसे लिपस्टिक का हल्का गुलाबी शेड पसन्द है और उसकी पत्नी शौक से लगाती है ।[1] इसी प्रकार की व्यथा कथा को भीमसेन त्यागी ने एक और विदा, महानगर में भी अभिव्यक्त किया है ।

दूधनाथ सिंह की कहानी 'कबन्ध' में दो व्यक्तियों का एकालाप है । उनकी सबसे लम्बी कहानी 'सुखान्त' में समकालीन बौद्धिक स्तर पर लिखी है । कहानी के क्रम के विकास में जिन रचनाकारों की रचना कहानी संसार में आयी है, उनकी अपनी हैसियत है । अनीता औलक की 'लाल परान्दा,' अन्विता अग्रवाल की 'अँधेरे में' कहानी, 'एक्सीडेंट' या 'कटी हुयी तारीखें' हों ।[2] वेद राही की 'दरार,' 'हर रोज,' 'भुरभुरी नींव' हो ।[3] या यात्री की 'जीनियस की दुम' या 'अनासक्त' हो,[4] इस प्रकार की कहानी आज जो कहानी कह रही है, उसके उतार-चढ़ाव में आम आदमी की जिन्दगी अपने आप आ गयी है । आम आदमी की कहानी में व्यंग्यात्मक चित्र धीरे-धीरे उभर रहे हैं । तब विजय चौहान की कहानी को खासा आधुनिक होने के झूठे अहं को निभाने वाली कहा गया है, लेकिन यह कहानी को कहानी नहीं होने देती । इस आधार पर इसकी कमजोरी को आंका गया है ।[5] पर पुरुष एवं पर-सम्बन्ध पर एक दृष्टि डालें तो आज की कहानी यही तो सब कुछ कह रही है, इसके लिये समक्ष

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- भीमसेन त्यागी, 'दीवारें और दीवारें,' पृ0 82

2- मुट्ठी भर पहचान

3- दूसरे चेहरे

4- समीक्षा अप्रैल 1971

की आवश्यकता नहीं है, यह तो मात्र पढ़ने से स्पष्ट है कि जो जीवन की कहानी है, उसी को तो कहा जा रहा है, तब कहानी तो कहानी है, हमें स्वीकार करना होगा कि जीवन मूल्य अब कहानी से स्थापित होंगे।[1] सीधी, सरल बात तो है कि कथाकार अपने पास से गुजर रहे हालात को स्वीकार करते तथा व्यक्त करते, अपने पात्रों के माध्यम से। जब हम पीछे पलटते तब लगता है तब भी तो एक यथार्थ का परिस्थितियों का, प्रेमचन्द के 'कफन' में माधव को अपनी पत्नी बुधिया के कराहने का और 'पूस की रात' में हल्कू को खेत के चर जाने का, बोध भी वास्तविक है। जब आन्दोलन कहानी का जब शुरू होता है या आज हो रहा है, उसमें आज का बोध खोजना होगा। वास्तव में इसे नयी कहानी के आन्दोलन ने 'बाकायदा' आज विश्वास पैदा किया है, जिसमें कहानी पुरुष, स्त्री दोनों की है, पर उसकी समस्या तत्कालीन तो है, पर सन्दर्भ नये अवश्य हैं। धर्मवीर भारती, मुक्तिबोध, सर्वेश्वर, रघुवीर सहाय, कुँवर नारायण, राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, श्रीकान्त, राजकमल चौधरी, ने हर अक्षर की कहानी कहीं, तभी महिला कथाकारों की मानसिकता में एक बात घर कर गयी, वह भी अतीत के सम्बन्धों की, उसको नया आयाम दिया, ऊषा प्रियंवदा, ममता कालिया, कृष्णा सोबती, मन्नू भण्डारी, अन्विता अग्रवाल, सुधा अरोड़ा, आदि ने। इतना अवश्य है कि जब जब नये सन्दर्भों ने जन्म लिया, उनमें नयापन आया है, कहानी को यह सब स्वीकार करना पड़ा। मन्नू भण्डारी ने इन सब स्थिति का मुकाबला का कामकाजी महिलाओं के जीवन की कहानी वह भी वास्तव में साहित्य को नया आधार दिया है। पुरुष स्त्री सम्बन्धों में नारी पात्र पुरुष से स्पर्द्धा करने वाली नहीं है, जैसा कि समीक्षकों का मत है। पर यह सत्य है कि उन्होंने दाम्पत्य जीवन में छोटी-मोटी घटनाओं के बाद भी विवाह-विच्छेद नहीं होते, एकाध

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा० रामकृष्ण गुप्त : कहानी परिचर्चा

होते भी हैं तो उसमें पुनर्विवाह भी है। असाध्य पीड़ित की सेवा कौन करेगा, इसको उन्होंने मर्यादा में बांधा है, फिर भी उनका अपना साहस कहानियों में जीवंत है।

जीवन के लक्ष्य की विविधता पर इतर दृष्टि दौड़ायें तब लगता है कि रचनाकार परिवेश को एक आधार मानकर जब लिखता है, तब निश्चय ही उसकी अपनी अनुभूतियाँ विचार, परिवार, समाज, देश के धरातल पर जुड़ जाते हैं। इसके कारण उसका अपना एक सत्य आत्मीय ढंग से जुड़ जाता है। साहित्यजीवी होकर भी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक पक्ष तथा उसकी अपनी समस्यायें भी उसके साथ निकटता का सम्बन्ध अधिक रखती हैं। भारत में ही सभी भाषाओं में कथा साहित्य लिखा तथा उसका सम्बन्ध युगीन भाषा बोध, सम्पन्नता, सांस्कृतिक से अवश्य रहा है। संस्कृति हिन्दी, मराठी, गुजराती दक्षिण की भाषाओं में जिन कथाओं का उल्लेख है, वे सब किसी न किसी सन्दर्भ की गाथा अवश्य कहती हैं।

मनोविज्ञान का आधार तो हर काल में किसी न किसी रूप में अवश्य रहा है। अधिकतर मनोविज्ञान से सम्बन्धित उपन्यास ही रचनाकारों ने लिखे, छोटी-बड़ी लम्बी कथायें, इनमें संताप, घुटन और हीन-भावना अवश्य रही है। शोषण, आर्थिक पक्ष इसका मूल आधार था। राजेन्द्र यादव ने एक ऐसी कुरूप युवती की मानसिकता का चित्रण 'अनदेखे अनजान पुल' में किया है, जिसमें हीनभावना ने प्रारम्भ से ही जन्म ले लिया है। राजकमल चौधरी की 'मछली मरी हुयी' सम-लैंगिक विषय पर लिखी गयी कथा है। अमरकान्त लिखित 'पराई डाल का पंछी' कान्ता सिन्हा की 'अतृप्ता' में एक कुंवारी लड़की की घुटन, कुंठा, दुख का चित्रण है। जीवन-जगत की अन्य समस्यायें को छुआ

है, राजेन्द्र यादव अन्नू भंडारी द्वारा संयुक्त रूप से लिखित 'एक इंच मुस्कान', निर्मल वर्मा द्वारा लिखित 'लालटीन की छत' में भी मनोविश्लेषणात्मक आधार ही अधिक है।

अमरकान्त का 'काले उजले दिन' बालशौरि रेड्डी का 'धरती मेरी माँ', बलवन्त सिंह का 'औरत आबदार', जयसिंह का 'कलावें,' राजेन्द्र अवस्थी का 'जाने कितनी आँखें,' शैलेश मटियानी का 'चौथी मुट्ठी,' रामकुमार भ्रमर का 'तीसरा पत्थर,' मोहम्मद इसराइल अंसारी का 'गाँव की बेटी,' चतुरसेन शास्त्र का 'पत्थर युग के दो बुत,' उदयशंकर भट्ट का 'दो अध्याय,' रांगेय राघव का 'आप की प्यास,' हजारी प्रसाद द्विवेदी का 'चारु चन्द्र लेखा,' प्रभाकर माचवे का 'लिखित जो,' भगवतीचरण वर्मा का 'सामर्थ्य और सीमा,' कृश्नचन्दर का 'वायलिन एक समन्दर किनारे,' डा०कोमल सिंह सोलंकी का 'शैवालिनी', रमेश मेहता का 'दो एकान्त', इन सबकी कथाओं में जहाँ एक ओर परिवार समाज में रह रहे लोगों की मनोवृत्ति का चित्रण किया है, यथार्थपरक शिथिलता कहीं नहीं आ सकी। जीवंत कथायें नये सन्दर्भ के साथ सामने आयी हैं।

जीवन की विभिन्नता में एक बात साफ उभरी है कि पुरुष एवं महिला कथाकारों ने जिन नये विषयों वस्तु को चुना है, उनमें परिवर्तन का आभास अवश्य मिलता है। आज का पात्र जहाँ तनाव में जीता है, निश्चित रूप से उसके मन की ग्रंथियों में संघर्ष के बीज हैं। कई एक ऐसी कहानी हैं, जो पात्रों की कथा यात्रा में सन्दर्भ को अवश्य जोड़ रही है। विवाह जैसा धार्मिक सांस्कृतिक आधार भी पाश्चात्य सभ्यता के आवरण के कारण टूट रहा है, दाम्पत्य जीवन की छोटी-मोटी घटनायें, जो आर्थिक धरातल पर कमजोर हो बिखराव की स्थिति

पैदा कर रही है। संयुक्त परिवार टूट गये, छोटे परिवार में भी उनकी मानसिकता, एक दूसरे के अहम् को खा रहा है।

रचनाकार की दृष्टि बड़ी पैनी है। जीवन के भोगे हुये यथार्थ को पात्र के माध्यम से घटना की स्थिति का अवलोकन तब होता है, जब पात्र का चरित्र विशिष्ठ रूप में हमारे सामने आता है। एक कथा के साथ अन्य कथायें जुड़े रहने का अर्थ है कि उस कथा से भी मुख्य पात्र का सम्बन्ध है। इतिहास, धार्मिक, सांस्कृतिक उपन्यासों की कथा में यही स्थिति है। वृन्दावनलाल वर्मा ने 'मृगनयनी '' बिराटा की पद्मिनी' की रचना में यही सब कुछ देखा, परखा तब विवशता पर उन कथाओं को एक अधिकार से माना है। दूसरी ओर इन कथाओं के साथ अवान्तर कथायें या प्रासंगिक कथायें भी थीं, जिनका समकालीन वातावरण मानव नियति के अभिशाप्त स्वर को ही ध्वनित करता है।

मानव की मूर्ति जो विकास के कारण गायब हो गयीं, मनोविश्लेषण के अनुसार भीतर चली गयी। बाहर आने की बार-बार जो बात है, इस सभ्यता के विकास में कैसे सम्भव है। मानव में पशुता का उदय आधुनिक मानव को आदिम मानव से मानता है। इसके सिवा कोई चारा नहीं है। प्रतीक की इस धुरी के साथ जुड़ जाती है। वर्तमान युग के सारे वातावरण में मनुष्य ही एक है, जिसकी मानसिक वृत्ति समकालीन इतिहास की आधार थी। अकेलेपन का बोध में संवेदना है, जबकि अस्तित्ववादी चिन्तन की परिणति इतनी नहीं है, भीड़ों में अकेलापन, जुलूसों से कट जाने का परिणाम है। छटपटाहट, अकुलाहट, पाश्चात्य सभ्यता ने और उजागर कर दी है। भारतीय चिन्तन में यह सब संवेदना के रूप में है। '' भारतीय आधुनिक विगत या परम्परा से टूटा हुआ महसूस करने लगा है, भीड़ों में अकेला अनुभव करने लगा है, मानवीय सम्बन्धों को तड़का या टूटा हुआ पाने लगा है, भौतिक और राजनीतिक सड़ांध को सूंघने लगा है, अरक्षित

और चिन्तित होने लगा है। यह एक तरह का नरक है जो नगर से जुड़ गया है, जहाँ खिंचाव ही खिंचाव है, जिसे वह जीने के लिये बाधित है। इसे कविता के आधुनिक बोध में आंका जा सकता है।[1] कवि के साथ कथाकार ने जब यह देखा या भोगा, तब उसकी अपनी मानसिकता में यह प्रश्नचिन्ह-सा लग गया। इस प्रकार संरचना में सहजता भी सरलता का आभास दे सकती है और इसका सीधा अर्थ है कि कहीं कुछ अवश्य है। "वह चाहे इंसान की जिन्दगी और मौत के बारे में हो, उसकी सामाजिक स्थिति के बारे में हो, विगत, आगत, अनागत, या इतिहास बोध के बारे में हो। इन टेढ़े सवालों से अनेक सवाल जुड़ जाते हैं।[2] महीपसिंह की कहानी 'नींद'[3] में भीतर के वास्तव में एक कोशिश है, वह का चेहरा पकड़ में नहीं आता। उसके चेहरे पर कुछ नहीं था -

> न दुविधा, न संकोच, न असमंजस, न मजाक, न ताड़ना,
> कुछ भी नहीं।
> उसका चेहरा वैसा ही था जैसा हमेशा रहता है।
> बड़ा गहरा-सा बड़ा डूबा-सा,
> बड़ा भटका सा।

समकालीन पात्र का चेहरा जिस प्रकार से प्रस्तुत किया जा रहा है, वह वास्तव में एक कृति या बुत ही तो है। बात वास्तव में नींद आने से शुरू होती है, कहानी का गंध का सवाल आज उभरकर सामने आ रहा है, एक जीवंत कथा के रूप में। प्रश्न एक नहीं अनेक हैं। कथा-

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- डा०इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिकता और कविता,' पृ० 31

2- डा०इन्द्रनाथ मदान, 'आधुनिकता और कहानी,' पृ० 137

3- महीपसिंह, 'नींद,' 1970, पृ० 47

साहित्य में जिसमें उपन्यास कहानी दोनों हैं, कुछ तो कर रही है। आदमी की उस कहानी को जो आजकल आज के फर्क को जानती है।

भीमसेन त्यागी ने 'दीवारें और दीवारें' की कथा ( कहानी में ) वह एक रोज सुबह उठकर पाता है, उसके कमरे के दरवाजे, खिड़कियाँ और रोशनदान बन्द हैं। उसकी पत्नी नौकरी करती है, इसलिये वह अपने पति को चाय बनाने के लिये कहना अपना हक समझती है। वह दिन निकलने का इन्तजार करने लगता है, लेकिन दिन शायद दिन नहीं रहा, एकदम बन्द कमरे में। चारों तरफ-सपाट दीवारें ही दीवारें हैं। वह एक प्रश्न चिन्ह हो सकता है, पर ऐसा जो रहा है, वही तो दीवारें ही दीवारें में है।[1] तरकीब ( बाहर निकलने की ) जब है ही नहीं तो सोचने से क्या फायदा ? और तरकीब होती तो भी क्या फायदा ? सवाल कितना भी गहरा हो, 'वह' का हिसाब यह ले की तरह है, या बाद की तरह, इस पर विचार किया जाता है तब मानसिकता यह स्वीकार करती है कि वह भी पत्नी का आर्थिक पक्ष ( (नौकरी ) मजबूत है, वह को तब यह करना ही पड़ेगा। इस नाटकीयता के विषय में एक हद तक विचार किया जाता रहा है। जबसे वह भी पत्नी ( आज की औरतें ) नौकरी करने लगी हैं तब से कई प्रश्न सामने आये, क्या औरतों की आजादी आर्थिक पक्ष से अधिक है ?

मन्नू जी ने अपने साक्षात्कार में स्पष्ट किया कि आज का पुरुष एक प्रतिशत नहीं बदला, वह तो सामंतवादी है, स्त्री पर अपना अधिकार या धन समझाता है, तब क्या कारण है कि आम आदमी की जिन्दगी में औरत का महत्व है। कुछ भी हो, पुरुष

---

1- भीमसेन त्यागी, 'दीवारें ही दीवारें', पृ० 82

कथाकारों एवं महिला कथाकारों ने कई ऐसे प्रश्नों को हल किया है, जिसके साथ भौतिक आर्थिक सत्ता है, और निर्णय भी उसी ढंग से दिये हैं। पुरानी परम्परा उसकी दीवारें तो बच्चे ही तोड़ेंगे। आधुनिक नारी की यह विडम्बना है कि उसे एक साथ दो मोर्चों पर रखकर लेनी होती है, एक तो पुरुष समाज तथा दूसरे परम्परागत रूढ़ियों में बंधा नारी समाज। नारी ही नारी की शत्रु है। इन औरतों की नजर में नारी पुरुष की एक सम्पत्ति है। सम्पत्ति का उपयोग किया जाता है। सम्पत्ति उपभोग की वस्तु है। नारी भोग्या है। "अरे तुम अपने घर में मरदों को ही सेजों का सुख नहीं दे सकीं तो तुम्हें क्या पूजने को व्याहा है?"[1]

मन्नू जी का 'एक कमजोर लड़की' कहानी[2] में एक ऐसी लड़की की कहानी है, जहाँ बाप के होते हुये भी दूसरी माँ के कारण छोटी अवस्था में ही उसके पिता रमेश उसे उसके मामा-मामी के पास भेजते देते हैं। मामा-मामी बहुत प्यार करते थे। घर के वातावरण में घुल मिल गयी। हाईस्कूल की परीक्षा में प्रथम श्रेणी उत्तीर्ण हुयी। पिता का पत्र आता था, उन्होंने उसे घर बुलाया, वह तैयार नहीं होती, रूप परेशान थी, उसको ललित ने साहस दिलाया। ऐसे ही तीन वर्ष बीत गये। ललित रूप के प्रति अपना प्रेम प्रकट कर उसे हिम्मत देकर दृढ़ रहने के लिये कहकर उच्च शिक्षा के लिये विदेश चला गया। इसके बाद रूप की शादी वकील से हो गयी, न वह मर सकी, नह ही उसने आत्म हत्या की। बुझे दिल से घर का जीवन जीने लगी। यह वास्तव में कमजोर लड़की है। बाद में भी प्रेमी ललित के बहकाव में नहीं आती। पढ़ी-लिखी है। पर जीवन के ढाँचे में परिवर्तन कैसे सम्भव होगा। यह प्रश्न चिन्ह मन्नू जी ने कहानी में स्पष्ट किया है। रूप को वास्तव में पारम्परिक मानसिकता के कारण कमजोर औरत ही है।

---

1- मन्नू भण्डारी, 'दीवार बच्चे और बरसात,' पृ० 27
2- मन्नू भण्डारी, 'एक कमजोर लड़की कहानी,' पृ० 24

राजनीति में कटाक्ष के सन्दर्भ में मन्नू जी ने ' महाभोज ' को एक वृहत रूप दिया, वहीं ' मैं हार गयी ', ' तीसरा हिस्सा, ' ' अलगाव ' में उन्होंने राजनीति एवं भ्रष्ट सामाजिक व्यवस्था को ही स्थान दिया है । दिन पर दिन बदल रही स्थिति का सारा का सारा हिसाब हमें इस इन कथाओं में देखने को मिल जाता है । 'तीसरा हिस्सा ' का शेरा बाबू ही मुख्य पात्र है, जिनके इर्द- गिर्द कहानी घूमती है । इसमें भ्रष्ट राजनीति, सामाजिक व्यवस्था का तो चित्रण है ही । मन्नू जी ने नारी जीवन में पुरुष को परिपक्व स्थान नहीं दिया है । किसी के दरार भरे, दाम्पत्य जीवन में समझौता का सेतु बनना जरूरी है, पर यह सेतु बनते-बनते टूट जाते हैं । पर सुलह हो नहीं पाती कि जीवन का बगीचा तितर-बितर हो जाता है । दरार भरने की दरार में वंदिता का चरित्र तो इसी का एक आधार है ।

आज की नयी पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के मध्य भटकती रही है, उसका अपना विश्वास है कि इस सबका उत्तरदायित्व यदि किसी पर है तो वह है, पुरानी पीढ़ी पर है । 'त्रिशंकु ' की कहानी तनु की कहानी है, जिसमें अपनी पुरानी पीढ़ी की कथनी की अप्राकृतिकता मात्र दिखावा है, वह करनी की परम्परा में विश्वास रखती है, यही कारण है कि तनु जो नयी पीढ़ी का आधार है, पिसती रहती है ।

मन्नू जी ने नारी जीवन की तमाम सारी कहानियाँ लिखी हैं, जिनमें ' एखाने आकाश नाई, ' ' स्त्री सुबोधिनी, ' ' आते-जाते यायावार ' प्रमुख हैं । इनमें ' एखाने आकाश ' में विभिन्न स्तरों की नारी समस्याओं को उन्होंने चित्रित किया तथा ' स्त्री सुबोधिनी ' में किशोरियों को कामी पुरुषों से सावधान रहने की बात कही है । व्यक्ति के आचरण को विशेष महत्व उन्होंने दिया है, यही आचरण

तो मानसिक वृत्ति का मूल आधार है। मर्यादा का अहसास उन्होंने कहानियों में कहीं-कहीं बांधा है, पर अपनी नयी खोज के आधार पर स्त्री की आजादी उनके सम्मुख पृथक रूप से सामने है, जो उनके साक्षात जीवन का अनुभव है।

# अध्याय : पंचम

## कथा-साहित्य का अभिव्यक्ति पक्ष

## अध्याय : पंचम

## कथा-साहित्य का अभिव्यक्ति पक्ष

आधुनिक कथा-साहित्य पर फ्रायड युग आदि पाश्चात्य विचारों का प्रभाव सीधा-सीधा पड़ा है। दमित वासनाओं और अतृप्त इच्छाओं के साथ कई प्रकार की सामाजिक समस्याओं का जीवन में प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से आना भी कथा की यात्रा के लिये जरूरी हो गया। इन वासनाओं और इच्छाओं से प्रेरित होकर मानव अनेक उचित और अनुचित कार्य करता है। प्राचीन पूर्व मध्य के बाद आधुनिक युग में जो कथा-साहित्य की रचना हुयी, उसकी यात्रा में विविधता है। 12 से 14 वर्षों की उम्र में तथा 16 से 17 वर्षों की उम्र में बालिकाओं, बालकों के मन पर अधिक प्रभाव पड़ता है। इस वय उम्र में ही सोचने-समझने की शक्ति का आधार सामान्य, असामान्य का भेद भी करता है। यदि इस उम्र में असामान्य व्यवहार मन का हो जाये तो निश्चित रूप से उसके मन की ग्रंथियाँ उसी प्रकार की बनती हैं। उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द ने इस तथ्य को कथा-साहित्य में जोड़कर मनोविज्ञान और साहित्य के अन्तर्सम्बन्ध की जो आधारशिला रखी है, उसका रूप आज सभी रचनाकारों ने किसी न किसी रूप में इस असामान्य परिस्थितियों को अपनाया है और साहित्य में इसका समावेश किया है। असामान्य व्यवहार जन्मजात नहीं होता, परिस्थितियों के कारण इसका निर्माण होता है, रचनाकारों ने साहित्य लेखन में इसी आधार का समावेश किया है।

प्रेमचन्द और अज्ञेय की रचना के मध्य एक प्रश्न चिन्ह था, पर प्रश्न का आधुनिकता के रूप में हल हुआ ।[1] इस पर गहरा चिन्तन पश्चिम में हुआ । अमानवीयकरण की समस्या को लेकर कोई विवाद नहीं है । पर उसका अभिव्यक्ति पक्ष में चिन्तन को एक दिशा दी है । हिन्दी उपन्यास का इतिहास इतना लम्बा नहीं है, न ही उसकी परम्परा इतनी बड़ी, पर आधुनिक युग में इस परम्परा का जो विस्तार हुआ है, उसकी शुरुआत श्री प्रेमचन्द के गोदान से मानी जा सकती है । 'गोदान' का पात्र होरी, न होकर स्वयं प्रेमचन्द ही है, जिन्होंने कार्य की सूक्ष्मता को एक आधार बना दिया है ।

कई ऐसे प्रश्नों का हल जो आधुनिकता के आधार हैं । डा० रामकृष्ण गुप्त से हुये मेरी मौजूदगी में साक्षात्कार के समय आज की मन्नू भण्डारी ने कथा साहित्य के अभिव्यक्ति पक्ष में जो प्रश्नों के उत्तर दिये हैं, वे यथार्थ के भोगे हुये से ही हैं । साफगोई की बात कहना हर एक की कामना नहीं है । पुरुष-स्त्री के समझौते की बात जो प्रेमचन्द युग से चल रही है, यह प्रश्नचिन्ह आज भी ज्यों का त्यों है, क्यों है ?

एक प्रतिशत भी पुरुष नहीं बदला, सामंती पुरुष और आधुनिक नारी के मध्य तनाव बढ़ रहा है । नारी के लिये तनाव तकलीफ की ही स्थिति है, जब तलाक सामने आता है, तलाक में समस्या का निर्धारण नहीं होता, तलाक के बाद स्त्री-पुरुष में कौन खुश है ? यह प्रश्न व्यवहारिक रूप से और भी कष्टप्रद है ।[2]

---

1- डा० रामकृष्ण गुप्त, 'असामान्य व्यवहार', पृ० 8

2- साक्षात्कार मन्नू भण्डारी, रविवारीय पत्रिका, पृ० 5 (द्वारा डा० रामकृष्ण गुप्त एवं ऊषा अग्रवाल )

'बंटी' उपन्यास में यही सब कुछ तो है। 'आपका बंटी' उपन्यास की कथा उनकी ही कहानी 'बन्द दराजों के साथ' का विस्तृत रूप है। इसमें मन्नू जी के चिन्तन को जो नया आयाम दिया, उसमें शकुन उच्च शिक्षित और कामकाजी नारी है। उसका पति अजय दूसरे शहर में रहता है। शिक्षा का प्रभाव होने के कारण उसकी मानसिकता में बदलाव है, प्राचार्य पद पर कार्यरत नारी का जीवन, ये परिम्परिकता का विरोध करने का साहस है। टहराहट है। इसके कारण दाम्पत्य जीवन में एक ऐसी दरार आ जाती है, जिसे पाटने में उसकी संतान बंटी भी सफल सिद्ध नहीं होता। अजय सम्बन्ध-विच्छेद के पहले ही दूसरी स्त्री से विवाह कर लेता है। विवाह विच्छेद में बंटी अपनी माँ के साथ रहता है। शकुन माँ भी अपना दूसरा विवाह कर लेती है, जिसके कारण बंटी का भविष्य गड़बड़ा जाता है। बंटी को अपने नये पिता डा०जोशी का व्यवहार रास नहीं आता। इसलिये बंटी को उसके पूर्व पिता के पास अजय के पास भेजा जाता है, जहाँ वह अपनी सौतेली माँ के पास रहने को तैयार नहीं हो पाता। इसलिये बंटी को होस्टल भेज दिया जाता है। मन्नू जी भारतीय परिवार की विवशता, नयी पीढ़ी पर जो प्रहार किया है, उससे स्पष्ट है कि पाश्चात्य सभ्यता का जो रूप है, उसे उजागर किया है। भारत के परिवारों में यह सम्भव नहीं, यह यह कहें कि भारतीय संस्कारों में यह नहीं। पर यह समस्या तो है जो कथा-साहित्य का अभिव्यक्ति पक्ष है। एक और चित्र सिर्फ पुरानी माँ और बंटी।

मैं कमरे में प्रवेश करती हूँ तो चौंकाने वाला दृश्य सामने आता है। टूटी हुयी प्लेटें बिस्कुट और टोस्ट बिखरे पड़े हैं और बंटी माँ

के शरीर पर लगातार मुक्के मार रहा है''..... ' तुम कहां गयी थीं ?.. किसके साथ गयी थीं ? .... क्यों गयी थीं ? ' मेरी उपस्थिति के बावजूद यह दृश्य थोड़ी देर तक चलता रहा । मां तिलमिलाहट, गुस्से और दुःख को दबाकर मेरे सामने सहज होने की बहुत कोशिश करती है, लेकिन वातावरण दमघोंटू तनाव में वहां फिर कुछ भी सहज नहीं हो पाता । ''[1] मानसिकता का यह दौर बालक ही नहीं, उसके माता-पिता जिस दौर से गुजर रहे हैं, उनकी जीवन की समस्या ही है । शकुन-अजय के सम्बन्धों में जो तनाव है, उससे बंटी पूर्व रूप से प्रभावित है । आज का जीता-जागता चित्रण कर उपन्यासकार ने एक अप्रतिरोध चुनौती को सामने रखा है ।

प्रेमचन्द के बाद जैनेन्द्र की एक ऐसे रचनाकार थे जिन्होंने स्त्री पुरुष के सम्बन्धों को एकान्त दृष्टि से देखा परखा था, परख में यही सब कुछ एक नये स्वर के रूप में रखा है, परन्तु नारी की व्यथा कथा को मृणाल बुआ के रूप में त्यागपत्र में रखकर जीवन के दुःख को भी परिभाषित समस्या के आधार पर किया है । उषा, प्रियवंदा, ममता, कालिया की कलम भी इसी को छूकर चलती है ।

मन्नूजी ने पहले वास्तव में कहानी लिखी, ऐसा आभास उपन्यास के विस्तृत रूप से यह प्रश्न व्यावहारिक रूप से और भी कष्टप्रद है । बंटी उपन्यास में यही सब कुछ तो है । ' आपका बंटी ' उपन्यास की कथा उनकी ही कहानी ' बंद दराजों के साथ ' का विस्तृत रूप है । इसमें मन्नूजी के चिन्तन को जो नया आयाम दिया, उसमें शकुन उच्च शिक्षित और काम-काजी नारी है । उसका पति अजय दूसरे शहर में रहता है । शिक्षा का प्रभाव होने के कारण उसकी मानसिकता में बदलाव है, प्राचार्य पद पर कार्यरत नारी का जीवन, में पारंपरिकता का विरोध करने का साहस है । टकराहट है । इसके कारण दाम्पत्य जीवन में एक ऐसी दरार आ जाती है, जिसे पाटने में

---

1- मन्नू भण्डारी, ' जन्मपत्री: बंटी की, ' पृ0 5-6

उसकी संतान बंटी भी सफल सिद्ध नहीं होता । अजय सम्बन्ध विच्छेद के पहले ही दूसरी स्त्री से विवाह कर लेता है । विवाह विच्छेद में बंटी अपनी माँ के साथ रहता है । शकुन भीअपना दूसरा विवाह कर लेती है, जिसके कारण बंटी का भविष्य बिगड़बड़ा जाता है । बंटी को अपने नये पिता डा0जोशी का व्यवहार रास नहीं आता,[1] इसलिये बंटी को उसके पूर्व पिता के पास अजय के पास भेजा जाता है, जहाँ वह अपनी सौतेली माँ के पास रहने को तैयार नहीं हो पाता । इसलिये बंटी को होस्टल भेज दिया जाता है । मन्नू जी भारतीय परिवार की विवशता, नयी पीढ़ी पर जो प्रहार किया है, उससे स्पष्ट है कि पाश्चात्य सभ्यता का जो रूप है, उसे उजागर किया है । भारत के परिवारों में यह सम्भव नहीं, या यह कहें कि भारतीय संस्कारों में यह संभव नहीं । पर यह समस्या तो है, जो कथा-साहित्य का अभिव्यक्ति पक्ष है । एक ओर चित्र सिर्फ देखने को मिलता है । कुछ कहानियाँ रूपान्तरित होकर सिनेमा के परदों पर अवतरित हुयी । इन सब बातों को देखते हुये लगता है कि मन्नू जी का कहानीकार स्वरूप ही बहुचर्चित होने योग्य है । परन्तु यह साधारण धारणा मन्नू जी की रचना 'महाभोज' ने बदलकर रख दी ।[2]

'महाभोज' उपन्यास है और सफल उपन्यास है । वैसे बहुत सही अर्थ में कहें तो एक सफल उपन्यास है । वैसे बहुत सही अर्थ में कहें तो एक सफल कहानी 'अलगवा' का यह एक सफल रूपान्तरण है । स्वाधीनता के बाद के भारत का एक देहात उस देहात तक पहुँची हुयी दलगत राजनीति, चुनावों के लिये अपनाये जाने वाले हथकण्डे, अपराधी तत्वों का राजनीति में

---

1- साक्षात्कार - मन्नू भण्डारी से

2- डा0अनीता राजूरकर, 'कथाकार मन्नू भंडारी', पृ0 80

दखल, पुलिस की अपने ही लाभ पर केन्द्रित दृष्टि, बुद्धिजीवियों की तटस्थता और पत्रकारों की अवसरवादिता, यह सब कुछ इस उपन्यास में है।[1]

'महाभोज' उपन्यास का नाट्य रूपान्तर भी हुआ। इसकी प्रथम प्रस्तुति राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के रंगमंडल द्वारा की गयी थी। महाभोज की कथावस्तु न चरित्र प्रधान है, न समस्या प्रधान। 'महाभोज' आज के राजनैतिक माहौल को उजागर करने वाला स्थिति प्रधान उपन्यास है। आज राजनीति को स्वप्नों, आदर्शों और मूल्यों वाला व्यक्ति नहीं चलाता, बल्कि राजनीति खुद अपने चरित्र गढ़ती चलती है, ऐसे चरित्र जो अपने भीतरी निर्णय, विवेक या साहस से नहीं चलते वरन् स्थितियों के दबाब से बनते-बिगड़ते हैं।[2]

'महाभोज' की कथावस्तु के पात्र अपने बीच के ही हैं, दा साहब मुख्यमंत्री, सुकुल बाबू विरोधी पक्ष के नेता हैं। जोरावर गुंडा राजनीतिक सुरक्षा में पलने वाला व्यक्ति, दत्ताबाबू संपादक, सक्सेना और सिन्हा पुलिस अधिकारी, इन सबके मध्य एक बुद्धजीवी पात्र है, महेश शर्मा, जो गांव पहुंचता है। चुनाव के पहले बिसेवर की हत्या। बिसेवर की हत्या को आत्महत्या के रूप में परिवर्तित होना। काली कलूटी राजनीति के घिनौने करतब, उठापटक होना, यह सभी कुछ 'महाभोज' में है। मन्नू जी के सम-कालीन एवं बाद के रचनाकारों ने जिस समस्या को उठाया है, ठीक उसी प्रकार की पर बदलाव के साथ संरचना हुयी है।

जीवन के उतार-चढ़ाव में कभी-कभी बाहरी वातावरण का प्रभाव पड़ता है। 'स्वामी' उपन्यास के प्रारम्भ में ही शरतचन्द्र से क्षमायाचना

---

1- डा0अनीता राबूरकर, 'कथाकार मन्नू भंडारी,' पृ0 80

2- 'महाभोज,' मंच प्रस्तुति से पहले मन्नू भण्डारी, पृ09

सहित में मन्नू जी ने स्वीकार किया है। "शारतचन्द्र की कहानी 'स्वामी' का लेखन मेरे द्वारा ही यह मात्र एक संयोग ही है।"[1] इस संयोग में योग भला क्या हो सकता है, तो एक रचना धर्म का ही अंग है। भले ही यह रचना आलोच्य उपन्यास की मौलिक रचना में नहीं रख सकता।

'स्वामी' उपन्यास की कथा, मीनी, उसका प्रेमी नरेन्द्र और उसके पति घनश्याम की कहानी है। इस उपन्यास में सूक्ष्म भावनाओं के उद्वेलनों की भरमार है, घटना की कम। मीनी का सहपाठी नरेन्द्र जो कि उसका पड़ौसी भी है, दोनों के मध्य प्रेम की भावना है। मीनी अपने मामा के द्वारा निश्चित रिश्ते के अनुसार घनश्याम के साथ विवाह कर लेती है, परन्तु मीनी के अन्त:करण में पति के प्रति प्रेम नहीं है। उसके मन में पति के प्रति एक क्षीण-सा ही सही सहानुभूति भाव जागता है। वह सहानुभूति भाव घनश्याम (पति) के प्रति उस भलेपन की अनजाने में ही सही स्वीकृति है। इस आधार पर ही मीनी पति के साथ रहने को तैयार हो जाती है। वास्तव में मीनी और घनश्याम के मध्य दाम्पत्य जीवन में जो एक तरह का अलगाव-सा है, वह मात्र सहज आकर्षण है, जो पाश्चात्य मनोविज्ञान का आधार ही कहा जा सकता है, जो कुछ समय के लिये अपने वैवाहिक बन्धन को त्यागकर नरेन्द्र के साथ रहने को प्रेरित करता है, परन्तु बाद में उसके अपने पति की भलमनसाहत की जीत होती है, वह अपने उस सहज प्रेरणा को त्याग देती है।

"पूरा दिन और पूरी रात मिनी ने एक विचित्र से संशय में काटी, लेकिन दूसरे दिन दोपहर को जब माँ का पुलकित स्वर सुनायी दिया, ले मिनी जमाई बाबू तो आ ही गये तुमेन लेने ....।" तो उसे लगा - नहीं संशय तो एक क्षण के लिये भी उसके मन में नहीं था। यह विश्वास कितनी गहरी

---

1- मन्नू भण्डारी : शारतचन्द्र से क्षमायाचना सहित, पृ0163

जड़ जमाय बैठा था, मन में कि एक बार इस गुरुतर अपराध के लिये भी क्षमा मांगने का अवसर देने के लिये स्वामी आयेंगे, जरूर आयेंगे ।

"मिनी, मैं तुम्हें लेने के लिये आया हूं ....... घर ले जाने के लिये ।" तो उसकी आँखें छलछला आयीं । भावावेग के कारण पत्ते की तरह थरथराती हुयी उसकी देह अवश स्वामी की बाँहों में जा गिरी और दो भुजाओं की जकड़ में उसे लगा, सारी भटकन समाप्त हो गयी है, सारे द्वन्द्व समाप्त हो गये । निश्चित पूरी तरह आश्वस्त हो आये, उसके मन में माँ का यह वाक्य ही गूँजता रहा - " जिसने अपना सुख-दुःख भूत-भविष्य सब कुछ स्वामी के हाथों में सौंप दिया,उसे कैसी चिन्ता ? ...." [1] यह भारतीय संस्कृति का ऐसा आधार है, जिसे भारतीय नारी पुरुषा से अन्त: स्वीकार किया है । पाश्चात्य सभ्यता के जो अंकुर हैं, इसे आज भी नहीं पा सके, वे तो मात्र भड़काव ही है ।

इस प्रकार मीनीनरेन्द्र के प्रति समर्पित नहीं, बल्कि ग्रहीता है । इस प्रकार सीधी सादी मीनी एक जटिल मनोवृत्ति की नारी है जिसमें दाम्पत्य जीवनके प्रति आकर्षण है, वह अन्त में पति ही चाहती है । प्रेमी नहीं ।

मन्नू भण्डारी का कथा पक्ष भी अभिव्यक्ति पक्ष वास्तव में कामकाजी पुरुषा नारी है । वे स्वयं एक कामकाजी सफल नारी हैं, उन्होंने अधिकांश पात्रों का सृजन अपने ही कार्यक्षेत्र से चुना है । उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है कि नारी की सच्ची स्वतंत्रता है अर्थोर्जन है । आज जबकि नारी में अर्थ उपार्जन की क्षमता आ गयी है, तब उसे निर्णय लेने की भी क्षमता भी आ जायेगी । इससे उसके व्यक्तित्व की गरिमा बढ़ी है । शिक्षित एवं अर्थोपार्जन के कारण पति का चुनाव भी अपनी मर्जी से कर सकती है । " आज का युवा-

---

1- मन्नू भण्डारी, 'स्वामी', पृ0 112

वर्ग तो चाहता है कि पत्नी पढ़ी-लिखी और कामकाजी मिले, किन्तु वह उसे के कार्य से परे रखने के बजाय सामंतवादी तरीके से यह चाहेगा कि वह घर और बाहरका सारा कार्य संभाले।"[1] डा0मानधाने ने आज के युवावर्ग पर फबती कसते हुये कहा है कि उसे अपनी पत्नी पढ़ी-लिखी, अच्छी तनख्वाह वाली तो चाहिये पर औरों से मिलने-जुलने वाली नहीं चाहिये। विवाह एवं नौकरी में सामंजस्य स्थापित करना आज नितान्त आवश्यक है।[2]

मन्नू जी ने विवाहेत्तर सम्बन्ध, दाम्पत्य जीवन में जो तनाव है, उसके साथ अन्य समस्याओं को उनकी मानसिकता के आधार पर परखा है, कहानी के पुरुष-स्त्री पात्र को उन्होंने नजदीकी से देखा-समझा है। उनका अनुभव क्षेत्र, शिक्षा से जुड़ा है, जिससे उनके इस स्वर में निकरता, भोगा, पहिचाना जीवन है। वास्तव में मन्नू जी ने स्वयं ही अपना जीवन जिया है। उनका चिन्तन समस्याओं से भरा है, पर उनके मन-मस्तिष्क में एक ही बात थी, छटपटाहट का जीवन क्या है ? उन्होंने ऐसी नारियों का चित्रण भी किया है, जो शिक्षित है, जो पूर्ण रूप से गृहस्थ धर्म भी निभा रही है। कहानी में मन्नू जी ने प्राध्यापक, अध्यापिका, छात्रा, परिश्रमी नारी जैसे जीवनके को अंकित किया है।

'ईसा के घर इन्सान' कहानी में एंजिला एक अविवाहित नारी है। इसमें धार्मिक संस्था के प्रधान फादर के प्रति विद्रोह की भावना है। इसमें धार्मिक संस्था के अधिकारी और धर्म संस्था में पनपती रूढ़ियों के प्रति नारी की प्रतिक्रिया का जो रूप प्रस्तुत किया है, उसमें नारी चेतना ही प्रमुख है।"

---

1- डा0अनीता राजुरकर, 'कामकाजी नारी : पात्र चरित्र मन्नू भण्डारी,' पृ086

2- डा0धनराज मानधाने, 'साठोत्तर हिन्दी उपन्यासों में कामकाजी नारी,' सचेतना, दिसम्बर 1983, पृ0 27

इसके तीसरे दिन ही रात में सबकी आँखें बचाकर, चर्च की छोटी-छोटी दीवारों को फाँदकर कब और कैसे लूसी भाग गयी, कोई जान ही नहीं पाया,[1] दो दिन बाद ही चर्च और कालेज के चारों ओर की दीवारें ऊँचीउठने लगीं और देखते ही देखते चारों ओर ऊँची ऊँची दीवारें खिंचना है।[2]

'अनचाही गहराइयाँ' की नायिका सुनन्दा अविवाहित है, इस कथा में नर-नारी में जो अकारण आकर्षण, मनोवैज्ञानि ग्रंथि के आधार हैं, उसमें साहचर्य का मोह भंग आदतन हो जाता है। मन्नू जी की हर कहानी, हर उपन्यास और हर नाटक में उनके जीवन की अपनी अनुभूति है। '' यह सच है कि रचनाकार की अनुभूति और अभिव्यक्ति,दो अलग तत्व नहीं हो सकते। यह मानना भूल होगी कि संवेदन और उसकी अभिव्यक्ति दो क्रियायें हैं। दोनों का योग ही किसी ' रचना ' को अस्तित्व प्रदान करता है। सच तो यह है कि सम्पूर्ण रूपबंध रचना का अर्थ होता है और अर्थ रूप को जन्म देता है।[3]

मन्नू जी की अभिव्यक्ति कथाओं के विषय में यह अवधारणा सत्य सी है। एक बार ओर, की नायिका बिन्नी, आते-आते यायावर की नायिका मिताली, दरार भरने की दरार की नायिका नंदी, के चरित्र में प्रेम, विवाह, दाम्पत्य जीवन से समझौता, पर पुरुष से छलने की कहानी में नारी जीवन का अन्तर्द्वन्द्व अधिक है। असमर्थता जीवन का मध्य का एक आधार है। अहं का मोह भंग नारी जीवन की व्यथा कथा से अपने आप जुड़-सा गया है।

---

1- मन्नू भण्डारी, ' ईसा के घर इन्सान, ' मैं हार गई, पृ0 20
2- वही, पृ0 21
3- डा0परमानन्द श्रीवास्तव, ' हिन्दी कहानी-रचना प्रक्रिया '

प्राध्यापिका जीवन में जीती नारी के सन्दर्भ की अन्य कहानियों में नारी की मन: स्थिति का जो रूप है, उसमें पति की परछाई बनने की विवशता ही है। संयुक्त परिवार की घुटन का जो रूप है, उसमें शहर-गांव का सम्बन्ध ही है। कमरे, कमरा और कमरे की नायिका नीलू, नई नौकरी की नायिका रमा, बन्द दरवाजे का साथ की नायिका मंजरी, जो प्रेम विवाह के बाद अन्तर्द्वन्द्व में जीती है। एखाने आकाश नाईं की कहानी लेखा, त्रिशंकु की कहानी, तनु की कमी प्रेम विवाह में किशोरी की मानसिक स्थिति का अन्तर्द्वन्द्व है।

'श्रेष्ठ कहानियों' में 'मेरा हमदम मेरा दोस्त' में राजेन्द्र यादव ने प्रारम्भ में उल्लेख किया है कि कृष्णाचार्य को अक्लमंदी के दौरे आते हैं। एक बार अपने अनुभव का निचोड़ देते हुये बोले, "मास्टरनी और औरत दो अलग जातियां हैं। मास्टर होने के बाद औरत में मांस तो रह नहीं जाता, रह जाती है टर्र टर्र। इसीलिये उसे कहते हैं मास-टर्नी .... । सो मैत्रा हमने तो कम सुनना शुरू कर दिया है और जिन्दगी में परम सुखी है।" इस 'परमसुखी' वर्ग के सरगना है, ठाकुर साहब, जो उनसे भी कम सुनते हैं और उनसे भी ज्यादा सुखी हैं ...... । मन्नू तेरह-चौदह साल से मास्टरी, सोरी इधर तीन साल से लैक्चरार है, और मुझे कम सुनाई भी नहीं पड़ता। इसलिये सबसे सुख का क्षण वह होता है, जब मैं चुपचाप मेज पर बैठकर कुछ पढ़ने की कोशिश कर रहा होता है और मन्नू कुछ न कुछ बोल रही होती है। इस वर्ष यह सुख कुछ कम हो गया है। वर्ना पिछले दो वर्ष जब उसे हफ्ते में कुल पांच-सात पीरियड लेने होते थे, सुख का यह क्षण और भी बढ़ जाता था। मैं इस किताब को फेंक दूंगी, पहले मेरी बात सुन लो।"[1] यह सत्य उन्होंने अपनी कहानियों

---

1- मन्नू भण्डारी, 'श्रेष्ठ कहानियां,' पृ09
राजेन्द्र यादव

में कहीं न कहीं व्यवहारिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। जीवन का सुख-दुःख का यह आधार भी है। प्राध्यापिका अध्यापिका जीवन की विभिन्न घटनाओं के यह प्रसंग उनकी कहानी में हैं। ईसा के घर इन्सान अनचाही गहराइयाँ, एक बार और, आते-आते यायावर, दरार भरने की दरार, कमरे कमरा और कमरे, नई नौकरी, बन्द दराजों का साथ, एखाने नाई, त्रिशंकु, में प्राध्यापिका जीवन की घटनायें हैं, जो पुरुष वर्ग के साथ असमर्थता का अन्तर्द्वन्द्व है। कहीं-कहीं प्रेम की परिणति में विवाह, आधुनिकता के बहाने अतीत में पुरुष से छली गयी नारी की व्यथा कथा, कहीं-कहीं दाम्पत्य जीवन में मित्र के नाते समझौता करते हुये अपने अहं की तुष्टि करना, समझौता होते ही टूट जाना। घटनायें समस्याओं से जुड़ी अवश्य हैं।

अध्यापिका, जीवन की तमाम सारी व्यथा कथासे जुड़ी कहानियों में मन्नू जी परिवार समाज के परिप्रेक्ष्य में, मर्यादा की सीमायें क्या हैं ? इस पर भी प्रश्न-चिन्ह लगा दिया। क्योंकि जीवन के अन्तर्द्वन्द्व में नारी का वह सब भुगतना पड़ा है, जो आज भी भुगत रही है। रोगग्रस्त अपूर्ण पुरुष, स्त्री चरित्र पर सन्देह, बेमेल विवाह, नारी में मातृत्व की भावना, आर्थिक परिस्थितियों की विवशता, यह सब कुछ मन्नू जी ने कहानी के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। जीती बाजी की हार, तीन निगाहों की एक तस्वीर, घुटन, क्षय, तीसरा आदमी, एखाने आकाश नाई, यही सच है, त्रिशंकु, गीत का चुम्बन, संख्या के पार, सजा , नारी पुरुष सम्बन्धों का निचोड़ है। मन्नू जी ने कहानी को माध्यम इसी लिये चुना कि वे अपनी भावनाओं को सर्वसाधारण तक पहुंचा सकें।[1]

---

1- डा0अनीता राजूरकर, 'कथाकार मन्नू भण्डारी,' पृ0 45

मन्नू जी की कहानियों के नारी-पात्र पुरुष की उच्छृंखलता से स्पर्धा करने वाली नहीं है। वे तो आचरणगत उच्छृंखलता के कारण जीवन में उत्पन्न होने वाले क्लेशों को या तो चुपचाप सह लेने वाले हैं, या फिर बहुत हद हो जाने पर वैवाहिक सम्बन्धों का विच्छेद करने वाले हैं। यही कारण है कि मन्नू जी द्वारा चित्रित कुल सोलह विवाहों में से दाम्पत्य जीवन में छोटी-मोटी से लेकर लम्बी-चौड़ी दरारें उत्पन्न होने के बावजूद पन्द्रह विवाह बने रहते हैं और केवल एक टूटता है, जिसमें चिर रुग्ण, असहाय और मरणासन्न पति अपनी पत्नी को घर से निकाल देता है। लांछित और अपमानित होकर घर से बाहर निकाली गयी स्त्री यही सोचती हुयी जीती है, कि असाध्य बीमारी से पीड़ित, उसके असहाय पति से सेवा-टहल कौन करेगा। स्त्री अन्त:करण की कोमलता, सेवाभाव और सहनशीलता तो मानो प्रतिमूर्ति हो।[1] पात्रों को उनका आधार समसामयिक स्थिति में है। स्वयं मन्नू जी ने अपने साक्षात्कार में कहा कि स्त्री को शिक्षित होकर आत्मनिर्भर होकर स्वयं अपना चुनाव करना चाहिये। पुरुष को अनुशासन के नाम पर स्त्री को बौना नहीं बनाया जाना चाहिये। परिवार में व्यक्तित्व स्वतंत्रता के नाम पर कुछ थोपा नहीं जाना चाहिये। झूठ बोलने की प्रवृत्ति पुरुष से आयी है। झूठ बोलने पर बड़ों का काम है, उसे सुलझाना, उसे प्यार से ठीक करना, तभी तनाव व समस्यायें हल होगीं। सम्मान शब्द की भौगोलिक स्थिति तो ठीक है, इसका माप गलत है।[2] ऐसा लगता है कि मन्नूजी ने यह सब कुछ अपनी छोटी-बड़ी कथाओं में अभिव्यक्त किया है। वे पुरुष एवं स्त्री की समस्याओं को सुलझाने की पक्षधर है। समझौतावादी वृत्ति का श्रीगणेश उनकी कहानी में सामान्य स्तर पर है। यही एक आधार समझौता, दाम्पत्य जीवन के एक पक्ष नारी

---

1- पूर्वोक्त, पृ0 121

2- साक्षात्कार, मन्नू भण्डारी से।

की मानसिकता का चित्रण करती है, पर अन्तर्द्वन्द्व के माध्यम से पुरुष की स्थिति भी स्पष्ट करती है। आर्थिक स्थिति से कमजोर नारी की मानसिक स्थिति का सूक्ष्म रूप 'क्षय' की कुन्ती, घुटन की भोग में स्पष्ट है। मन्नू जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि मनुष्य का जीवन दो तरह की समस्याओं से घिरा है। सबसे बड़ी समस्या रोटी, भूख की है, दूसरी समस्या शारीरिक यौन तुष्टि की। रोटी भूख की समस्या, यौनगत समस्याओं के बाद की समस्या है। आर्थिक स्थिति पर समस्याओं का निराकरण सम्भव है। भोगविलास एक आकर्षण का केन्द्र-बिन्दु भले ही हो, पर उसके पीछे आर्थिक तंत्र है। आपाधापी के मध्य जिन समस्याओं को उठाया है, उस पर पाश्चात्य शिक्षा पद्धति का असर है, स्वयं मन्नू जी ने यह स्वीकार भी किया है। इन समस्याओं का समाधान भी है। प्राय: द्वन्द्व मनुष्य की चेतना पर अधिक गौर करताहै, जो जानवर के समान है। वर्तमान यांत्रिक युग में भौतिक सुख का धरातल नकली सा पड़ रहा है। इस खोखलेपन का विरोध अहसास मन्नूजी की कहानी में साहस के रूप में व्यक्त हुआ है, ईसा के घर इन्सान की एंजिला, त्रिशंकु की ममी, ऐसे ही पात्र हैं। पुरुष पात्रों भी उन्होंने विशिष्ठता के आधार ही लिया है। तीसरा आदमी का सतीश, रेत की दीवार का रवि, पं०गजाधर शास्त्री के शास्त्री जी का चरित्र अच्छे बन गये। फिर यह देना कि उन्होंने स्त्री पात्रों की ओर गौर किया है, यह गलत हो जाता है।

मन्नू जी ने यह स्वीकार किया कि पति पत्नि और उसकी अपनी संतान एक छत के नीचे नहीं रहेगी, तो कहां रहेगी ? पाश्चात्य सभ्यता का असर भारतीय सभ्यता पर है, पर पुरुष बाहरी आवरण के रूप में पाश्चात्य सभ्यता स्वीकार करता है, भीतरी रूप से नहीं।

मन्नू जी ने उपन्यास-कहानी लेखन में अभिव्यक्त जीवन को एक ऐसा आधार दिया, जो साहित्य का अक्षय भण्डार ही है ।

नये पुराने कथाकारों ने जीवन को एक झरोका माना है । किस रूप में माना है ? इस सन्दर्भ में जो कथायें लिखी गयीं, उनका क्रमिक विकास पुरानी एवं नयी पीढ़ी के मध्य हुआ है । एक साक्षात्कार में श्री जैनेन्द्र जी अवध नारायण मुदगल को बताया - समाज मर्यादा नातों-रिश्तों से बनती है, अगर कोई हो, जिसके सारे नाते टूट गये हों तो 'दशार्क' की नायिका वही है, पति के ही कारण से वह विवाह में निभ नहीं पाती है, वह सम्बन्ध टूटता है, तो शेष सम्बन्ध भी टूट जाते हैं । मायके से भी, ससुराल से भी, मानों पूरे समाज से ही अब उसके लिये अपनी राह खोजने और पाने का सवाल रह जाता है यानी कि वो अपनी मर्यादा का स्वयं निर्माण करे । कथा में प्रस्तुत स्त्री अतिशय संभ्रांत, सुशिक्षित, सुसंस्कृत और प्रखर महिला है, समाज मर्यादा के बाहर जाकर अब आत्मिक मर्यादा को लेकर ही उसे जीना और चलना है और निर्णयपूर्वक वह अपने को सार्वजनिक और सार्वजनीन बना डालने की सोचती है, विवाह का दायरा उस पर से उठ गया है तो वह सोशल सर्विस अपनाती है, लेकिन कठिनाइयां हैं आर्थिक और अन्य । कामाकर्षण तो व्याप्त है ही, इस आकर्षण के तथ्य को वह स्वीकार ही नहीं, उपयुक्त भी करती है, उसमें वासना, भोगेषणा, विवशता आदि कुछ भी नहीं है । गहराई से देखा जाये तो सेवा की भावना है, वह देखती है कि पुरुष के व्यक्तित्व के विकास में स्त्री सहयोगी हो सकती है, इसकी आवश्यकता है, अपेक्षा है । स्त्री-धर्म और क्या है ? क्या यही समाज धर्म नहीं है ? प्रकारांतर से वह इसी धर्म को अपनाती है, इसमें अपने स्त्रीत्व को अभिशाप नहीं मान सकती, चाहे तो वरदान बना सकती है ।

'याना' से प्रेमचन्द प्रभावित थे, अनुरोध उनकी ओर से आया कि मैं उसका अनुवाद करूँ। मैं आश्वासन न दे सका फिर मुझे लगा कि प्रेमचन्द को निराश करना अच्छा नहीं हुआ और दिल्ली लौटते ही चुपचाप अनुवाद लिखना शुरू कर दिया, लेकिन प्रेमचन्द तो मुझसे निराश हो चुके थे, उन्होंने अपने मित्र जौहरी से कहा और अनुवाद हुआ और छप गया। मैंने तब प्रयास छोड़ दिया, फिर क्यों कैसे पूरा हुआ? वह उसकी कथा दूसरी है .... लेकिन जो प्रश्न मुझे बराबर परेशान करता रहा है, वह यह कि प्रेम तो अनन्त है, अनन्त का उपयोग ही क्या ? उपयोग के लिये उसे सीमा देना आवश्यक हुआ। विवाह संस्था बनी। विवाह प्रेम को उपयोगी बनाता है, चूल्हे में सिमटी आग, वैसे ही विवाहान्तर्गत काम के रूप में परिणित और परिमित प्रेम पर चूल्हे में सूरज को बैठाकर आप अपनी रोटी सेंक नहीं सकते, ऐसे ही प्रेम को किसी दायरे में बिठाकर घेर नहीं सकते। मानो मेरे सारे पात्र यही उद्घाटित करते आये हैं ....... 'त्यागपत्र' की बुआ को ही लीजिये, पति उसे निकाल देता है, तो क्या वह उस पर लदी ही रहे ...... बाहर आकर जिस विधि वह अपना जीवन चलाती है, उसमें विचार है, तो सेवा का स्वार्थ का नहीं।

जहाँ तक प्रश्न है, सामाजिक मर्यादाओं को तब सोचना पड़ रहा है, सामाजिक मर्यादायें और मान्यतायें। लक्ष्मण उर्मिला को छोड़कर राम के साथ वन चले गये, यह पति धर्म का निर्वाह है। बुद्ध चुपचाप घर से निकल गये, शिशु समेत यशोधरा अकेली रह गयी, गृहस्थ रूप समाज धर्म का इसमें पालन हुआ। अर्थात् मर्यादायें, मान्यतायें जहाँ हैं, वहीं रहने के लिये नहीं हैं, उसमें विकास होते जाना है, ब्रह्मचर्य क्या है ? क्या गृहस्थ धर्म का उल्लंघन ही नहीं है।

मेरे मन में एक बड़ा प्रश्न है, श्रीराम मर्यादा पुरुषोत्तम थे, उनके चरित्र से समाज को परिपूर्ण आदर्श प्राप्त होता है, वहाँ से मिली मर्यादाओं ने भारतीय समाज को समूचे इतिहास को अक्षुण्ण बनाये रखा है, पर कुल कलाएं अगर सोलह हैं, तो उन्हें बारह कलाओं का अवतार माना गया है। शेष चार क्यों बचीं। क्योंकि समाज सब कुछ नहीं है। आगे समष्टि भी है, तो आगे की उन चार कलाओं की बात के लिये श्रीकृष्ण की अवतारणा हुयी। वहाँ मर्यादाओं का पता ही नहीं चलता, पुरुषोत्तम वो भी हैं, लेकिन मान-मर्यादाओं का सन्दर्भ वहाँ समाज से उठकर समष्टि से जुड़ जाता है। कृष्ण के अभिसार की कथाओं को क्या कहियेगा। राधा की धारणा में क्या पवित्रता की तनिक भी कमी देखी जा सकती है ? सारी रासलीलायें क्या कृष्ण की योगीश्वरता में तनिक भी अन्तर ला सकी। वह थे किसी यथार्थ से पीछे नहीं हटे न..... अगर उसमें कुछ करर्थ था तो उसका सामना किया और विजयी हुये। छोड़िये पौराणिक इतिहास को, हाल के गांधी को लीजिये। गांधी को मानने वाले लोगों ने गांधी के एक पक्ष को दबाने-छिपाने की इतनी चेष्टा की है कि उसी कारण गांधी अधूरे रहगये हैं, मैं समझता हूँ कि पाप के प्रच्छालन का मार्ग स्वीकृति के अलावा दूसरा हो नहीं सकता। छिपाने से पाप बढ़ेगा। गंध बढ़ेगी, धूप लगने दीजिये, दुर्गन्ध सूख जायेगी।[1] निश्चय रूप से इस मानसिकता की अभिव्यक्ति में स्पष्टता है कि रचनाकार का धर्म में यथार्थ है, यही कारण है कि मन्नू भण्डारी राजेन्द्र यादव, धर्मवीर भारती, यशपाल, दीप्ति नवल, जैनेन्द्र कुमार, ममता कालीया, उषा प्रियंवदा, रमेश बक्षी, वीर राजा, जोसफ हेलर, रिचर्ड द अंत्रेसियो, केटी विलियम, एम0इलियास, नीरज ठाकुर, जोनाथन के0 ग्रेक, सदादत्त हसन मंटो ( विदेशी), गुलजार, वीरेन्द्र जैन, सुरेन्द्र माथुर, विकास कुमार झा, राजन पाराशर, चित्रा मुदगल, मक्बूल जलीस, सुशील वर्मा, राजेन्द्र चंदकांत राय, प्रदीप पंत जैसे कथाकार इस

---

1- श्री जैनेन्द्र कुमार से अवधनारायण मुदगल की बातचीत (सारिका, प्रथम पक्ष, सितम्बर 1983) पृ0 26

इस सन्दर्भ को आधुनिकता के बोध में अभिव्यक्त कर रहे हैं। इन रचनाकारों ने एक हद से स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में एक बात मूलत: रखी है। क्या पुरुष मूलत: पशु है?...... और उसका प्रेम शरीर के तल का ही पाशविक भी होता है। ऐसा क्यों? भोगेच्छा का प्रश्न आज के रचनाकार का अपना कार्य है। स्वेच्छा से। इस सत्य की अभिव्यक्ति के लिये आर्थिक, सामाजिक पक्ष पर एक दृष्टि अवश्य डाली जानी चाहिये।

क्या आज की कहानी साहित्य की केन्द्रीयता से हट रही है, इस चर्चा में वीर राजा सूर्यबाला सीतेश आलोक, डा०यदुनाथ चौबे, डा०स्नेह मोहनीश के अपने अपने विचार हो सकते हैं, पर एक निश्चित अवधारणा अवश्य है कि साहित्य यदि कभी समाज का दर्पण होने की कसौटी पर खरा उतरा है तो साहित्य का रूप भी दर्पण की चमक के साथ दुर्भाग्यवश मलिन होता जा रहा है, समाज का रूप कभी स्थायी नहीं रहता और न उसे रहना ही चाहिये अन्यथा समाज और एक अंधे कुये में अन्तर ही क्या रह जायेगा? परन्तु बदलाव की जो सूरत हमारी पीढ़ी के सामने आयी है, वह अनपेक्षित ही नहीं कुछ हद तक निराशाजनक भी है। मूल्यों का विघटन भौतिक सुविधाओं के लिये होड़ और पश्चिम की भौंडी नकल ने ही हमारे समाज को ढलान पर लाकर छोड़ा तो इतना ही नहीं, इससे भी बढ़कर निराशाजनक वे तथाकथित उपचार है, जो सामाजिक पुनर्निर्माण के नाम पर उसे और भी गिरा रहे हैं।[1]

आजादी के पश्चात हमारे जीवन मूल्यों में हमारी रुचियों, कलात्मक मूल्यों में जो पतन आया है, इसके लिये महज व्यवस्था या सामाजिक परिवर्तन ही दोषी नहीं है, बल्कि हम सभी हमारे सर्जक भी हैं, रचना पर जब तक

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- सीतेश अग्रवाल, पृ० 49-50, सारिका पाक्षिक(प्रथम)

पूरी ईमानदारी के साथ अपनी भूख और गरीबी से लहूलुहान होती जनता के साथ प्रतिबद्ध नहीं होगा । जब तक उसकी पक्षधरता शोषित समुदाय के पक्ष में नहीं होगी, तब तक वह सत्ता के प्रलोभनों में आकर अपनी व्यक्तिगत सुख-सुविधाओं के लिये बाजार में रखे हुये माल की तरह बिकता रहेगा । ऐसे में कहानी साहित्य की केन्द्रीयता से हटकर बजार में " डिमांड एन्ड सप्लाई " की वस्तुओं की तरह बिके तो कोई आश्चर्य नहीं और हम काल्पनिक कागजी विद्रोह करते शिखंडी बने उसी विकृतियों से भरी समाज-व्यवस्था के पथ में धंसे-धंसे बाहर की ओर मुंह निकाले विद्रोह विद्रोह चिल्लाते भर रह जाते हैं, अगर कहानियों में कागजी शेर वाले नायक का चित्रण हुआ तो क्या गलत हुआ ?

प्रेमचन्द के होरी का युग गया, अब ' होरी ' के उन बेटों, नाती-पोतों का युग है, जिसे स्वतंत्रता के इतने वर्षों पश्चात भी गलत समाज-व्यवस्था विरासत में मिलती रही है, ' होरी ' को सिर्फ गांव के जमींदार से निपटना था, किन्तु आज के ' जूनियर होरी ' तो अपने जीवन में हजारों जमींदारों से निपटना पड़ता है, जिसमें बेरोजगारी है, भूख है, गरीबी है, भ्रष्टाचार है, भाई-भतीजावाद है, सिफारिशवाद है - एक सड़ी-गली विसंगतिपूर्ण समाज व्यवस्था है ।

आधुनिक युग आर्थिक-सामाजिक और सांस्कृतिक आधार पर राजनैतिक प्रक्रियाओं के कारण अन्दर से खोखला एवं भुरभरा हो गया है, अत: लेखक इससे कैसे बचा रह सकता है ? किन्तु जो साहित्य जनता का होगा, उसकी पीड़ा उसके दु:खों को उकेरता हुआ, उसे अनुभूतियों का विराटत्व प्रदान करेगा, वही अजेय गति से निर्बाध होकर फलेगा-फूलेगा, इसमें सन्देह नहीं ।

किन्तु पिछले कुछ वर्षों से कहानियाँ, कहानियाँ न होकर मात्र घटना-विशेष की रिपोर्टिंग मात्र बनकर रह जा रही है, या फिर महज चौंकाने के लिये सनसनीखेज अश्लील यौन क्रियाओं का वर्णन करती कहानियाँ बहुत आयीं हैं, आखिर इनकी साहित्यिक उपलब्धि क्या है ?

आज हमारे सामने असंख्य कहानियाँ विचारसागर से फेंकी हुयी सी चारों तरफ दिखाई पड़ती है, इनके बेशकीमती रत्न तो गोताखोरों ने संग्रह करके राजकोष में जमा कर दिये हैं और विरूप योगी रेत पर की बिखरी चीजें ( आज की तकनीकी भाषा में ) सर्वसाधारण को देखने के लिये रह गयी है, दुकानों को सजाने वाली पुराने तत्वों से मेल-मिलाप करने कुछ कहानियों पर साहित्यिकता की मुहर लगा देते हैं, और शेष को 'फाउल' करार देकर डाट से अपनी दुकानें चला रहे हैं ।

जो भी हो, असल बात तो यह है कि आज मूल्यों का ढांचा ही चरमरा गया है, ऐसी हालत में यथार्थता की विकृतियाँ उभरकर सामने आ ही जाती हैं, जैसे सन् 1920 में लिखी प्रसाद की कहानी 'आकाश दीप' में पितृभक्ति और प्रेम का गहन संघर्ष है और अन्त में पितृभक्ति विजयिनी होती है, दूसरी तरफ 1950 में प्रियंवदा की कहानी 'वापसी' में पिताजी बेटे-बेटियों के लिये भार बन जाते हैं, यह पीढ़ियों का संघर्ष जो जीवन में चल रहा है, साहित्य में भी परिलक्षित हुये बिना नहीं रहा है । सामाजिक जीवन का ढांचा कुछ ऐसा हो रहा है कि लोग यथार्थता के परिष्कृत रूप को कृत्रिम समझने लगे हैं । उन्हें जीवन की नग्नता और कुरूपता से चिढ़ भी है, लेकिन इन्हें ही वे पसन्द भी करते हैं, नतीजा यह हो रहा है कि नवोन्मेष लेखक स्थितियों को सपाट रूप में प्रस्तुत करने लगे हैं । बलात्कार, हत्या, डकैती और शोषण आदि का विवरण सतही ढंग से पेश किया जा रहा है ।

रुचि निर्माण या परिवार को कौन कहे कच्चीउमर की रुचियों को रसास्वाद-वृत्तियों को मोथरा किया जा रहा है, इसी से कुड़-कुड़ाकर तथाकथित समाज के ठेकेदार कहानी ही क्या समूचे कथा-साहित्य पर केन्द्रीयता से हटने का आरोप लगा रहे हैं, इस तरह की अंकुशबाजी भयावह है, इससे और विकृतियां पैदा हो सकती है। अत: कहानी-साहित्य पर केन्द्रीयता से हटने का आरोप लगाना निराधार है, हाँ यह बात जरूर है कि कहानी संस्कृति की ओर जाने की अपेक्षा आसानी की ओर बढ़ती जा रही है। वास्तविक अनुभूतियों का साधीकरण न करके केवल उनका परिचय कराया जा रहा है।

स्कूलों और कालेजों की पाठ्य-पुस्तकों में छपने वाली पुरानी पिटी-पिटाई कहानियों में रटी रटायी बोध गम्यता को दुहराकर कर्तव्य की इतिश्री की जा रही है। आज की कहानियों की कथ्यता और भाव-प्रवणता पर चर्चायें तो नहीं की जाती, बहुत हुआ तो रांगेय राघव, धर्मवीर भारती नहीं तो भीष्म साहनी या बंगला या अन्य भारतीय भाषाओं की कहानियों का अनुवाद छात्रों के सामने थोप दिया जाता है।[1]

आज भी ऐसे लोग हैं जिनके लिये साहित्य साहित्य है, जीवन मूल्य जीवन मूल्य है, सच्चाई सच्चाई है, राष्ट्रव्यापी भ्रष्टाचार की अंधेरी खाइयों से निकलने की छटपटाहट है, यह एक शुभ संकेत भी है। जब ऐसी विषम स्थितियां होती हैं, तब उद्भूत साहित्य रचा जाता है। रूस में क्रान्ति से पहले जो भयावह स्थितियां थीं, उस बीच तालस्तोय गोर्की, चेखव और दास्तोएवस्की आदि अनेक लेखकों का आविर्भाव हुआ।

---

1- सारिका, प्रथम पक्ष 1986, पृ0 50

आज की बदलती परिस्थितियों में कहीं एक वातावरण तो है, जहाँ लोगों में इस तरह की छटपटाहट है कि वस्तुत: हम किस धरातल पर खड़े हैं ? क्या हमारी मंजिल है ? आप देखेंगे समकालीन लेखन में इस तरह की झलक यानी छटपटाहट कहीं दिखलायी पड़ती है, राजनीति में भी ...... कहीं ऐसे स्वर गूँजते दिखलायी पड़ते हैं जो वर्तमान आत्मघाती राजनीति से त्राण पाने की चेष्टा कर रहे हैं, भले ही यह स्वर अभी मंद क्षीण हो, पर इनसे आशायें तो बंधती ही हैं।

साहित्य के लिये सबसे अहम प्रश्न है आस्था का, वह आस्था कर्मशीलता के कर्तव्य परायणता से जुड़ी हुयी है, भौतिकवाद के चरमोत्कर्ष यानी अर्थ के अनर्थ के कारण भले ही हमारे मूल्य कुछ अलग लगें, लेकिन मानव मूल्य शनै:शनै: फिर से स्थापित हो रहे हैं।[1] युग परिवर्तन के साथ उपन्यास कला लेखन में परिवर्तन उद्देश्य की दृष्टि से हुआ है। श्री गिरिराज किशोर, कला सेन बटरोही, स्वयं प्रकाश, शिव प्रसाद सिंह, रवीन्द्र वर्मा, हिमांशु जोशी, सुरेन्द्र प्रकाश, कोशाल्या अश्क, निर्मला अग्रवाल, विवेकानन्द, रेखा, विकास कुमार झा, प्रियरंजन, धीरेन्द्र वर्मा, नरेन्द्र कोहली ने जहाँ नये सन्दर्भ को जोड़ा है, वहीं अन्य कथाकारों ने बीते हुये जीवन को आने वाले कल से जोड़ा है। कमल चोपड़ा, हीरालाल ठाकुर, सुरेन्द्र श्रीवास्तव, सत्यपाल सक्सेना, मोहश्वर तिवारी, डा0तेजराम दिल्लीवार, कमल गुप्त, सुधाकर शर्मा, रमेश उपाध्याय, रवीन्द्र त्यागी, मथुरादास ने भी जीवन के जीवंत किया जहाँ समस्याओं को जीवन जोड़ा केवल इसलिये कि यह सब हो रहा है।

मन्नू जी ने कहानी कथा में अभिव्यक्ति का माध्यम जो बनाया, उसमें जीवन से जुड़ी वे समस्यायें हैं, जिन्हें आज व्यक्ति भोग रहा है। उन्होंने अपने पहले कहानी संग्रह ( 'मैं हार गयी' में जिन कहानियों को समेटा है, उनमें सबमें जो समस्या है, वह व्यक्तिगत होकर भी समाज के एक अंग से

---

1- हिमांशु जोशी, 1-16 सितम्बर 1986, पृ0 74

जुड़ी है । हर कथाकार का अक्सर जीवन में हो रही घटनायें ही प्रमुख हैं । 'ईसा के घर इन्सान,' 'गीत का चुम्बन,' 'जीती बाजी की हार,' 'एक कमजोर लड़की की कहानी,' 'सयानी बुआ,' 'अभिनेता,' 'श्मशान,' 'दीवार,' 'बच्चे और बरसात,' 'पंडित गजाधर शास्त्री,' 'कील और कसक,' 'दो कलाकार,' 'मैं हार गयी' । इन कथाओं में मन्नू जी ने जीवन के विभिन्न चित्रों को योग्य (यथार्थ) के धरातल पर जीवंत किया है, उनका साक्षात जैसा उन्होंने देखा वैसा ही परखा है, अभिव्यक्ति का यह सशक्त माध्यम है ।

समाज के मध्य रहने पर हो रही समस्या से लेखिका आँख मूंद नहीं सकती, यही कारण उनको जैसा देखा, उसे वैसा ही पाया भी है । आज के युग में धर्म के नाम पर नारी का शोषण तो हो रहा है । विवाह पूर्ण नारी की दशा और उसके पुरुष के साथ सम्बन्ध एक जिज्ञासा का ही आधार है, पर विवाह पूर्व सम्बन्धों को समाज में मान्यता नहीं है । समाज में नारी कमजोर है, उसको हर तरफ से कमजोर समझा भी जाता है, इस व्यथा कथा को मन्नू जी 'एक कमजोर लड़की' की कहानी और 'स्वामी' उपन्यास में अभिव्यक्त की है ।

कथायें कब और कैसे प्रतीक धारण करती हैं या वे किस तरह के चमत्कार होते हैं, जिन्हें पात्र के माध्यम से पकड़ लिया जाता है, ऐसा ही होता है, समस्या के सम्बन्ध में एक मौन रहना कथाकार का काम नहीं । जबकि आज का पुरुष भी नारी को सनातन सत्य की तरह पहले की तरह छल रहा है । वास्तव में पुरुष पुरुष को छल रहा है । कहीं ऐसा तो नहीं समस्या को बनाने बिगाड़ने में पुरुष का ही हाथ हो । जीवन निरर्थक नहीं । मानसिकता कुछ ऐसी होती जा रही है । पुरातन सत्य के मध्य पाश्चात्य सभ्यता का आधार महत्वपूर्ण है । रांगेय राघव ने 'राह न रुकी' कहानी में एक नये सनातन सत्य को जन्म दिया ।

रथ गाँव पहुँचा, दिन का समय था, पुरुष खेतों में थे, एक युवती ने देखा तो पास आग यी, '' कौन हो तुम लोग ?'' मैंने कहा - ' घूमने चले आये थे, प्यास लगी है, पानी है ?'

' अरे पानी की क्या कमी ?' वह रस्सी-कलसा ले कुएं की ओर चल दी ।

एक बूढ़ी औरत बैठी हुयी खिसकती-खिसकती आ पहुँची । ' वह राक्षसी कहाँ गयी ? ओ मुझे कोई मार डालो ।

मैं उससे कुछ पूछ ही रही थी कि युवती पानी लेकर आ गयी, उसने बताया कि बुढ़िया उसकी नानी है, और उसने बड़े कुकर्म किये हैं ।

उसने फिर कहा, ' हे भगवान, अगले जन्म में मुझे औरत मत बनाना ।'[1]

जब-जब नारी हताश हुयी, या तो उसने अपने को पूर्ण रूप से असह्य पाया और जीवन को भुगतती रही, या अपने को वीर के रूप में प्रदर्शित किया । आज की नारी कला की नारी से भिन्न है, उसमें शिक्षा का प्रादुर्भाव हो रहा है, जो जीवन में स्वतंत्र चिन्तन का पक्ष ले रहा है ।

कथा-साहित्य के सम्बन्ध में श्री खाडिकर ने कहा है कि मेरा किशोर वय का यह मत कि उत्कृष्ट काव्य, नाटक तथा उपन्यास लिखने के लिये उपकारक बने ऐसी अनेक कथायें पुराणों में हैं, कभी नहीं बदला, प्रत्युत पाश्चात्य साहित्य के परिशीलन के कारण वह अधिक दृढ़ हो गया, यदि लेखक को अपनी प्रतिभा की किस्म, शक्ति और सीमा का ठीक से ज्ञान हो चुका है, यदि उसने आत्म अभिव्यक्ति के लिये योग्य कथा चुन ली है, साहित्य के जिस माध्यम के द्वारा वह उस कथा को प्रकट करना चाहता है, उस माध्यम पर कथाकार का अधिकार है, पौराणिक कथाओं में जो भव्य भीषण संघर्ष मिलते हैं, उसका

---

1- रांगेय राघव, ' राह न रुकी,' पृ0 33

मंथन करने योग्य शक्ति यदि उसके चिन्तन में है, जो यह समझ गया है कि जीवन जिस तरह क्षण भंगुर है, उसी तरह वह चिरंतन भी है और जितना वह भौतिक है, उतना ही वह आत्मिक भी है, तो वह देखने के लिये कि पौराणिक कथा से सुन्दर ललित कृति किस प्रकार निर्मित होती है, किसी को विदेश यात्रा की आवश्यकता नहीं।[1]

आज नारी नारी का विरोध कर रही है। जो नारी शिक्षित नहीं, वे शिक्षित नारी का विरोध कर रही है, क्योंकि परम्परा से ही यह सब कुछ चला आ रहा है। फिर किसको दे दे। पुरुष का अहम नारी पर अधिकार का है। औरत का हिस्सा-हिस्सा होकर जीने की बेबसी के पीछे आखिर सत्य क्या है? यह बात प्राचीन काल से आज तक नये सन्दर्भों की अभिव्यक्ति के साथ चली आ रही है। मान-मर्यादा की सीमायें कुछ भी रही हों, पर इसमें नारी पिस रही है। फिर नारी के प्रश्न चिन्ह के उत्तर में मौन का क्या अर्थ है?

कथाकार जोगेन्द्र पाल ने महाभारत का दूसरा युद्ध में लिखा है:

महाभारत द्रोपदी की प्रिय धार्मिक पुस्तक थी। जीवन एक युद्ध है - 'वह मुझे समझा रही थी' अगले वक्तों में लोग तलवारों से लड़ा करते थे, पर आजकल दुश्मन के खून से तलवार नहीं रंगी जाती है, इन दिनों दुश्मन की तबाही के लिये सबसे अच्छा हथियार मुस्कराहट है।

मुस्करा-मुस्कराकर उसने मुझे पछाड़ दिया।" और उसका कारण यह है कि आजकल सब एक दूसरे के दुश्मन हैं। सभी लोग दुश्मन हों तो

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- सारिका, अक्टूबर 1985, पृ0 35

आदमी या तो बम गिराकर सारी दुनिया को एकदम खत्म कर देता है, उसके स्वर में एकदम खत्म कर देता है या फिर हँसी-हँसी में एक-एक करके सबको समाप्त करता है। उसके स्वर में एकदम दार्शनिक संकल्प का तनाव आ गया और जब तक सारे संसार का निशान नहीं मिट जायेगा, हम इसी प्रकार अपने भाइयों और दोस्तों को फुसला-फुसलाकर तबाह करते रहेंगे, नहीं।

वह अपने को ठीक करने के लिये जरा रुकी। हमारा कोई भाई और दोस्त नहीं। भगवान कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया था कि तेरा कोई भाई नहीं, कोई चाचा नहीं, कोई मित्र नहीं, तेरा कोई नहीं[1]..... कोई किसी का नहीं ........ कोई किसी का नहीं ........। लेकिन उसके विचार का भाव सहास एक ढलान की ओर मुड़ गया और उसकी आवाज तेज हो गयी। भगवान कृष्ण महान हैं, वह मेरे स्वामी हैं, एक बार वे सोये पड़े थे कि अर्जुन और दुर्योधन युद्ध में उनकी सहायता प्राप्त करने के लिये आये। अर्जुन उनकी पलंग की पायंती पर बैठे और दुर्योधन सिरहाने। जब भगवान की आँख खुली तो अर्जुन से कहने लगे - पहले मैंने तुम्हें देखा है। बताओ, मेरी सेना चाहते हो या केवल मुझे ? दुर्योधन घबरा गया कि कहीं अर्जुन सेना न माँग बैठे, किन्तु अर्जुन ने निस्संकोच कहा 'भगवान केवल आपको'।

श्रद्धा से द्रौपदी की आवाज मानो गंगा में गोते खा-खाकर अपने पाप धो रही थी।

महाभारत के उस अध्याय पर पहुँचकर मेरा मन भी सदा अर्जुन के साथ-साथ बोल उठता है - भगवान केवल आपको, मुझे आपकी सारी सेना

---

1- सारिका, अक्टूबर 1985 (प्रथम पक्ष), पृ0 34

नहीं चाहिये, आप मुझे केवल अपने आपको दे दीजिये ।

मैं सोचने लगा कि द्रोपदी भी दुर्योधन की तरह भगवान कृष्ण के सिरहाने बैठी होगी । इसीलिये उसके भाग्य में मर्दों की सारी सेना लिखी गयी । अगर उसे एक भगवान मिल जाता तो वह भी किसी सुहागिनी की तरह जीवन का रण जीत लेती । आज शाम को अपने धन्धे पर बाहर निकलने की बजाय वह भगवान कृष्ण की आरती उतारती रहती ।

इस प्रकार आज की कथायें पुरातन कथाओं के सहारे बदल रही हैं, तब नयी-नयी कथायें सामने आ रही हैं । इसके विपरीत अब क्या है, जो नहीं है ।

सप्ताह भर बाद निखिल का पत्र आया जिसमें लिखा था' सच' यह सच ही तो जीवन के विवादों का हल भी है । एक पत्र के माध्यम से बात कहीं जाना भी यथार्थ का बोध है, जिसमें आधुनिकता है । पुरुष वर्ग में अहम है, तो पछतावा भी है ।

" यों तो चलने से पहले मैं तुमसे माफी माँग आया था, पर यहाँ आने पर फिर पत्र लिखने की इच्छा हो रही है । अपने उस दिन के व्यवहार से मैं बेहद लज्जित हूँ । बात यह है कुन्ती कि आज तक मैं जितनी भी लड़कियों के सम्पर्क में आया हूँ, सबने मेरी ऐसी हरकतों का स्वागत किया है, बल्कि यों कहूँगा कि मुझे ऐसी हरकत करने के लिये प्रेरित किया है । मुझे अफसोस है कि मैंने तुम्हें भी उन साधारण लड़कियों की कोटि में ही समझ लिया, पर तुमने व्यवहार से सचमुच ही बता दिया कि तुम ऐसी वैसी लड़की नहीं हो । साधारण लड़कियों से भिन्न हो, उनसे उच्च, उनसे श्रेष्ठ । सच, तुमने मेरी आँखें खोल दीं कि शारीरिक सम्बन्ध के परे भी लड़के-लड़की की मित्रता का कोई और आधार

हो सकता है, और इसीलिये मुझे उस दिन का अपना व्यवहार कचोटे जा रहा है। मुझे तुम पर जरा भी गुस्सा नहीं, अपने पर ही ग्लानि है। पर इतना याद रखना कि गलती इन्सान से ही होती है और मैं भी इन्सान हूँ।"

कनिका ने पत्र के टुकड़े-टुकड़े कर दिये और तकिये में मुंह छिपाकर सिसकती रही।"[1]

भारतीय संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति का जो व्यवहार है, उससे नारी पुरुष दोनों ही प्रभावित हैं। पाश्चात्य सभ्यता में विवाह पूर्व लड़के का लड़की से स्पर्श आलिंगन, चुम्बन तक की छूट सहज रूप से देती है। प्रेम में शारीरिक गंध है। विवाह पूर्व बातचीत, सहज सम्बन्धों का शारीरिक स्पर्श, यह सब भारतीय संस्कृति में घुल तो रहा है, पर पूरी तरह घुला नहीं। यही कारण कि पुरुष इन सम्बन्धों को एकाकी नहीं बनाती। जब जब पाश्चात्य सभ्यता की दौड़ में इंसान दौड़ा, वहीं उसके अपने सम्बन्धों में कटुता आयी है।

'तीन निगाहों की एक तस्वीर' कहानी संग्रह में आठ कहानी हैं। वास्तव में शीर्षक से एक बोध स्पष्ट हो जाता है कि एक तस्वीर उन्हें तीन निगाहें देख रही है। नारी के ममत्व में नारीत्व की पिपासा है। सन्तान सुख की कल्पना, अन्तर्कथा, शोषण की कहानी के साथ मानव-जीवन की अनेकों ऐसी घटनायें हैं, जो नारी को स्थितियों के कारण घुटन में जीने को मजबूर करती है। नारी जीवन में अपनी स्थिति के कारण असन्तुष्ट इच्छाओं से घुट-घुट कर जीती है, सब दूसरी ओर राजनैतिक परिधि में नारी जीती हुयी बाजी हार जाती है। पुरानी पीढ़ी एवं

---

1- मन्नू भण्डारी, 'मैं हार गयी,' गीत का चुम्बन, पृ० 32

नयी पीढ़ी का संघर्ष, भावना और विचारों का है, जो पुराने समय से आज भी चला आ रहा है। तीन निगाहों की एक तस्वीर, अकेली, अनचाही गहराइयाँ, खोटे सिक्के, घुटन, हार, मजबूरी, चश्में। कहानी तो इसी बात की गवाही दे रही हैं।

मजबूरी।तो मजबूरी है। इस तथ्य को समझने के लिये एक बात जान लेनी जरूरी है कि एक भोगा हुआ सत्य सत्य है। पुरानी एवं नयी पीढ़ी में समय के अनुसार वैचारिक संघर्ष होता रहा है। ऐसा ही 'यही सच' है कहानी संग्रह में। क्षय, तीसरा आदमी, सजा, नकली हीरे, नशा, इन्कम टैक्स और नींद, रानी माँ का चबूतरा, यही सच है। 'क्षय' कहानी में परिस्थितियों से लड़ती नारी की कथा है। एक नारी को सब कुछ सहना है, इसलिये इच्छाओं को दबाना पड़ता है। कुंती 'क्षय' की ऐसी ही नारी है। परिवार का आर्थिक भार ही नहीं अन्य उत्तरदायित्व भी है। घर में टी0वी0 से बीमार पिता, छोटा भाई, टुन्नी और रमा हुआ है। कुंती घर की आवश्यकता के अनुसार ट्यूशन भी करती है। कुंती परिस्थितियों के आर्थिक दबावों के सामने विवश है। इन स्थितियों का क्षय कुंती के मन में है।

मन्नू जी ने अपनी अभिव्यक्ति को समाज, परिवार की समस्याओं में ही जकड़े रखा है। 'यही सच है' लेखिका की बहुचर्चित कहानी रही है। प्रेम के अन्तर्द्वन्द्व की कहानियाँ पहले भी लिखी गयी हैं और इस दृष्टि से इस कहानी में कुछ नयापन नहीं है। परन्तु मन्नू ने जिस सहजता और साहस के साथ इस अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण किया है और शिल्प के जिस अधिकार के साथ इसे क्लाइमेक्स तक निबाहा है, उससे इसमें अपनी ही ताजगी आ गयी है और लगता है जैसे कहानी, न होकर दीपा के जीवन का एक सच्चा अनुभव

ही है और जैसे सचमुच हम दीपा की डायरी के पन्ने ही पलट रहे हैं। कहानीकार किसी भी कहानी में यदि वास्तविकता का भ्रम उत्पन्न कर दें तो वह रचना बहुत सफल रचना होती है।[1] मन्नू जी की यह कहानी इस दृष्टि से सफल है।

मन्नू जी अपनी अभिव्यक्ति में एक ऐसा वातावरण बनाती है जिसमें यथार्थ बोध की सीमायें बिखरी पड़ी हैं। विश्वास का धरातल स्त्री-पुरुष का बदल गया है, इस सच्चाई की अभिव्यक्ति को मन्नू जी ने कई कहानियों में व्यक्त किया है। नारी पुरुष के सम्बन्ध, पत्नी के अलावा समाज ने मान्य नहीं किये। पर इसके पूर्व एक पुरुष की कई पत्नी, उप-पत्नियों, के सम्बन्ध भी थे। पर आज का पुरुष छल कर रहा है। प्रेमिका के मध्य प्रेम, पत्नी से छल का नाटक, फिर सफाई। तभी तो मन्नू जी ने नारी के शिक्षा एवं आर्थिक पक्ष को महत्व दिया है।

नई नौकरी, बन्द दराजों का साथ, एक प्लेट सैलाब, छत बनाने वाले, एक बार ओर, संख्या के पार, बाहों का घेरा, कमरे कमरा और कमरे, ऊँचाई में भी इन समस्याओं को एक नया धरातल दिया है। नारी की मानसिकता बौद्धिक गुलामी, भारतीय नारी के जीवन को खंडित क्षत-विक्षत कर देती समस्यायें, हर उम्र और हर वर्ग की अपनी समस्यायें पुरुष प्रधान समाज, नारी के निर्धारित मापदण्ड को मन्नू जी ने जीवन के दर्शन-बोध के रूप में परखा, समझा और अभिव्यक्त किया है, उनकी सफलता की कहानी भी यही है। त्रिशंकु कहानी संग्रह में अभिव्यक्त कहानी में पुरुष की छायावादी वृत्ति का लेखा-जोखा है। क्योंकि स्त्रियां पुरुष के प्रति सहज ही आकर्षित हो जाती हैं। विभिन्न

- - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - - -

1- नई कहानियां, जुलाई 86 ( मोहन राकेश)

स्तरों की नारी समस्यायें का जो रूप है, उसमें एक नयापन है, उसके लिये मन्नू जी अपने साक्षात्कार में स्वीकार किया है कि नारी को शिक्षित एवं आर्थिक रूप से सम्पन्न होना जरूरी है। हर समस्या को मन्नू जी ने देखा है, उसी आधार पर कहानी गठन में अभिव्यक्त किया है।

# उ प सं हा र

## हिन्दी कथा साहित्य में मन्नू भंडारी का योगदान

## एवं

## स्थान

## एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार

अपनी संपादित पुस्तक 'अपने से परे' की भूमिका में मन्नू जी ने कहानी लेखकों को सुझाव देते हुए लिखा है - "एक अच्छा कहानी लेखक बनने से पहले अनिवार्य है, एक अच्छा कहानी-पाठक बनना।" तब राजेन्द्र जी का सुझाव है कि मन्नू घरेलू महिला के रूप में रह ही नहीं सकती थीं। राजनीतिज्ञ बनती अथवा पति को तंग करती रहतीं, क्योंकि घर में रहती तो घर की सफाई करवाती रहतीं। फेंको, फेंको। नई से नई चप्पलें, पर्स, मेज के प्लास्टिक कवर, शीशियाँ, कांकरी फेंको। घर में फेंकोवाद कुछ ऐसा पहाड़ा चलता रहता है कि जब भी मैं बाहर जाता हूँ मन में शंका बनी रहती है देखें आज कौनसी चीज फेंकोवाद का शिकार हुयी। मन्नू जी ने फेंको-वाद का पहाड़ा पढ़ा है या नहीं, पर उनके विषय में जैसा मैंने जाना पहिचाना व्यक्तिगत परिचय में, वे जन-सामान्य की संवेदना से जुड़ी हैं, तभी तो वे अपने समकालीन लेखकों से कई कदम आगे निकल गयीं। लेखक की अपनी भी एक जिन्दगी है, परिवार से जुड़ी हैं। 20 सितम्बर की गोधूली वेला में जब रात्रि दिन को अपने आक्रोश में समाहित कर रही थी, विद्युत के छोटे-छोटे बल्ब दिल्ली के होजखास फ्लेट पर शांतिमय

वातावरण में एक नयी जिन्दगी को जीने की आशा को बांध रहे थे । फ्लेट नं0 103 की घंटी पर अचानक मेरी उंगली ने दरवाजे पर एक अल्प वयस्क किशोर को अभिवादन करने को बुला ही लिया ।

' नमस्ते । '

' आपको किससे मिलना है ? '

' मन्नू जी से, '

इतने में ही आदरणीया श्रीमती मन्नू भण्डारी सामने ही मुस्कराती हुयी हाथ जोड़कर अभिवादन करती हैं ।

' आओ । '

परिचय में कुछ नहीं, जब मैंने कहा - ' साक्षात्कार हेतु आयी हूं । ''

' बैठो तो सही । '

नौकर को पानी-चाय की कह दी ।

मन्नू जी की सादगी सम्पन्नता में महज एक निश्चल भाव, जिसे आज की नारी की चिन्ता हो, इसके लिये वे आर्थिक आत्मनिर्भरता की बात पर अधिक बल देती हैं । मेरा यह प्रश्न कि आपके कथा-साहित्य में नारी जीवन में समझौता जैसी स्थिति क्यों नहीं ?

तब मन्नू जी ने बातचीत के दौरान बताया कि नारी जीवन की परिधि के मध्य जो कुछ पाती हैं, उसमें एक खास बात है कि आज भी पुरुष नहीं बदला बल्कि उसमें सामंतवादी स्थिति अधिक है । महानगरों के जीवन में भी यही स्थिति है, क्योंकि सामंतवादी पुरुष में एक प्रतिशत बदलाव नहीं आया, तभी तो आज की नारी शिक्षित होकर भी तनाव की स्थिति में जी रही है । इस स्थिति में बच्चों की स्थिति अजीब गरीब है, जबकि वह निर्दोष होता है । बंटी की स्थिति ' आपका बंटी ' में यही है ।

मन्नू जी के विषय में श्री गिरराज किशोर ने 'मन्नू भण्डारी : जिन्दगी की समझदारी' लेख में लिखा है - "मन्नू जी की पहचान उस बिंदी से शुरू हुयी थी और आज रचनाओं तक पहुँच गयी है। ..... मन्नू जी को पहली बार देखकर यह प्रश्न जरूर मन में आया कि क्या ये ही वोह हैं, जो कहानियाँ लिखती हैं। महिला कहानी लेखिकाओं को देखने और उन्हें एक विशिष्ट रूप में स्वीकार करने की आदत के फल-स्वरूप मन्नू की कहानी लेखिका उतनी नजर नहीं आतीं, जितनी घरेलू स्त्री।" ठीक यही बात उनके व्यक्तित्व को स्पष्ट करती है, श्री रमा शर्मा की लेखनी 'फेमिना' में पर्सनालिटी कोलम में :

If one is to go by appearances, Mrs. Mannu Bhandari has the most deceptive one clad in simple green silk Saree, simple hair style, medium height, wheatish complexion and be spectacled Mannu appears more or less like a mild middle aged house wife. It is difficult to believe that she has been lecturer of Hindi for the last eleven years with the most glamorous college of girls is Delhi Miranda House."

जब कभी यह विचार किया गया तब ऐसा लगा, मन्नू जी का जीवन भी एक यथार्थ की पुस्तिका की तरह है, राजेन्द्र यादव जी से उनकी खुलकर जब बातचीत होती होगी तब निश्चित वे तमाम सारे तर्कों के माध्यम से पात्रों के जीवन का निचोड़ अवश्य निकाल लेती होंगीं, तभी तो उन्होंने स्वीकार किया हो, अपने अभिव्यक्त वक्ष में जीने के लिये कुछ तो आत्म सम्मान है। छोटे-बड़ों का भेद भी उसका आधार है। विचारकों, विद्वानों के मत-अभिमत से यह स्पष्ट है कि मानव जीवन की जो दो

मनोवृत्तियों में एक वृत्ति अपराध वृत्ति है । इस वृत्ति की अवधारणा मानव-मन की कमजोरी से जोड़ी जा सकती है । जीवन की सम्पूर्ण यात्रा में अच्छाई और बुराई है, जिसके मध्य की दूरी असमन्वयवादी भावना है । मनुष्य ने जब-जब पराजय के सम्मुख खड़ा हुआ, तब-तब यही सोचा कि अपराध ही क्यों । फिर जीवन के सत्य के मध्य असत्य ने आगे बढ़ने का साहस किया, वहीं अपराध ने जन्म लिया है । मन्नू जी का उपन्यास एवं कहानी के माध्यम से पात्रों का जो परिचय दिया उसमें एक बोध है, बोध की सीमायें, समय के हिसाब से बंटी, बड़ी है, जीवन का यह वातावरण अपने आप में सम्बन्धों के महत्व को प्रतिपादित करता है । पिता, पुत्र, पति, पत्नि, माता, पुत्री, भाई-बहिन आदि के धार्मिक, सांस्कृतिक, जीवाणु परिवेश के आदर्श सम्बन्ध हैं । आज इन सम्बन्धों में कमी आयी है, इस परिवर्तन से भारतीय साहित्य जगत के मूल्यों में परिवर्तन आया है ।

भाषा के किसी शब्द का अर्थ जब जीवन की अनुभूति से जुड़कर समझ में उतर आता है, तो वह केवल मन-मस्तिष्क तक ही सीमित नहीं रहता, बल्कि हृदय की गहराई तक पहुंच जाता है । ' सुयोग ' एक ऐसा ही शब्द है, जिसकी गहन सार्थकता को समझाने का अवसर मुझे ' त्रिशंकु ' कहानी और उसकी लेखिका मन्नू जी ने दिया । मन्नूजी से जब मैं मिली तो उन्होंने मुझे बहुत प्रभावित किया है । उनकी सादगी सम्पन्न सहजता ने मुझे बरबस ही आकर्षित कर लिया, बातचीत में तो उन्होंने कई प्रश्नों के हल ऐसे दिये, जैसे उनका सम्बन्ध आज भी उन सब पात्रों से है, उनका नारी के प्रति जो मन है, उससे घुला मिला है, वे व्यथित हृदय को नज-दीकी से जानती हैं ।

मन्नूजी ने बातचीत में जानकारी दी कि समझौता का प्रश्न, सामंती पुरुष के सामने अहम है, तब शिक्षित आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर नारी के सामने क्यों नहीं होगा। आज की नारी की पहिचान तभी सम्भव है, जब वह शिक्षित और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो। नारी घर का सारा काम करे, तब भी उसे ससुराल का पक्ष नहीं मिलता। उसे अपने ही पुरुष की सुनना पड़ती है, पुरुष यदि उसके कार्यों में सहयोग करे, पर सहयोग करता नहीं, जहां नारी में आर्थिक निर्भरता आयी है, वह पुरुष वर्ग उसे पचा नहीं पा रहा है, वह इसके कारण परिवार टूट रहे हैं। नारी परिवार से अलग नहीं होना चाहती, बल्कि पुरुष उसे अलग करने को तत्पर है।

जब मन्नू जी से यह पूछा कि नारी शिक्षा एवं उसके खुलेपन से आपका तात्पर्य क्या है?

मन्नू जी ने कहा बातचीत तो ही है बदलाव की प्रक्रिया छोटे रूप से शुरू होती है, शिक्षा के नाम पर परिवर्तन आया है, पर दहेज जैसा शव्द मानसिकता के कारण बदला नहीं। विवाह को मानती हूँ, पर विवाह जब तक नहीं होना चाहिये, जब तक कि दोनों एक दूसरे को न समझें, साथ ही आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर भी हों। पाश्चात्य सभ्यता का दिखावा है, भारतीय सभ्यता, रीति-रिवाज को ओढ़कर चाहे कुछ करना भी ठीक नहीं। कानून से कोई परिवर्तन नहीं आता जब तक कि मानसिकता के बदलाव में परिवर्तन आवश्यक है, खुलापन तो आज भी दिखावा भर है, यह केवल बड़े शहरों में देखने को मिलता है, एक ही शहर में कई तरह की वैरायटी भी है। एक ही तबके के लोगों में आधु-निकता का खुलापन नहीं।

भारतीय युवा पुरुष के विषय में आपका चिन्तन कैसा है ?

मन्नू जी ने सहज बातचीत में बताया कि भारतीय युवा पुरुष पाश्चात्य सभ्यता में डूबा हुआ है, जबकि मानसिकता में भारतीयता का असर है। गाँव, शहर, महानगर में हर रहने वाले युवकों में रहन-सहन का स्तर हवा के झोंके की तरह बदला है। पर उनकी मानसिकता नहीं बदली है। नारी की स्वतंत्रता का प्रश्न भी युवा वर्ग से जुड़ा है, पर उसकी स्वतंत्रता एक गज से नापी नहीं जा सकती। नारी पर भी सभ्यता का असर है, केवल महानगरों में अधिक है, जहाँ आपाधापी है, समझ कम, नकल ज्यादा है। पाश्चात्य सभ्यता का दिखावा ऊपर अधिक है, मन से घर में, इसका रूप नगण्य सा है, इसके लिये कौन दोषी है ? इस पर विचार किया जाये तो हम उसको युवा वर्ग का अहम ही मानेंगे, युवावर्ग पाश्चात्य सभ्यता का आवरण स्वीकार करता है, तभी तो नारी की स्वतंत्रता के विषय में घर में वह अपना दबदबा चाहता है, वह भी चाहता है, नारी उसकी बात माने, अनसुनी नहीं करे। यह भी एक ऐसी विडम्बना है, जिसका आचार व्यवहार युवावर्ग है, जिसका आचार-व्यवहार युवावर्ग पर निर्भर है, ऐसा नहीं कि परिवर्तन नहीं आया हो, आया अवश्य है, पर इस परिवर्तन से कुछ होने वाला नहीं, बल्कि तनाव अवश्य बढ़ रहे हैं।

आपने कामकाजी महिलाओं को नारी पात्र के रूप में प्रमुख रूप से रखा है। मन्नू जी ने बताया कि जब से कहानी लिखना शुरू किया, तब वे एक अध्यापिका थीं। मैंने अध्यापिक जीवन को स्वयं जिया है तथा अध्यापिकाओं को नजदीक से देखा, समझने का अवसर मिला है। मेरे नारी पात्रों में प्राध्यापिकायें हैं, पर कुछ विवाहित हैं तो कुछ अविवाहित हैं। उनकी अलग-अलग समस्यायें हैं। यह जो स्त्री है, वह शिक्षित और शिक्षा को अपनी व्यक्तिगत पहचान बनाने का आधार है। साथ ही

प्राध्यापक का जीवन भीतर-बाहर में अन्तर है। पति की सहज शारीरिक एवं मानसिक भूख को पुरुष के साहचार्य के साथ पूर्ण करती हैं। हमारे समाज में आज भी परिवार की अपनी परम्परा है, उस परम्परा को बनाये रखने का दायित्व पुरुष से अधिक भीतरी रूप से नारी का माना गया है। वास्तव में ऐसे नारी शिक्षित होते हुये भी, दोहरी जिन्दगी में जीती हैं, परिवार के साथ परम्परा पति, बच्चे हैं, दूसरी जिन्दगी में घुटती-टूटती रहना ही उसका अपना कार्य या धर्म रह जाता है।

मन्नू जी ने प्राध्यापक वर्ग की नारी पात्र पुरुष से खुलकर चर्चा करती है, मुक्त सम्बन्धों की बातचीत है, पर भारतीय परम्परा में व्यवहार रूप से नग्न ही है।

जहाँ तक शिक्षिका यानी अध्यापिकाओं का प्रश्न है, वे आर्थिक रूप से कमजोर हैं जिसके कारण उनके परिवार की जिम्मेदारी अधिक है, इस जिम्मेदारी को वहन करने के लिये अर्थोपार्जन करना उनकी मजबूरी है। इस कारण यह नारी अपनी छोटी-छोटी खुशियाँ भी छोड़ देती है। सफलता, असफलता, उन्हें कहाँ तक मिलती है, वे उनके जीवन मूल्य क्या हैं, क्योंकि उनकी अपनी पारिवारिक आर्थिक समस्यायें इतनी अधिक हैं, जिसको पूरा करने में अपना सब कुछ खपा देते हैं। कहीं शिक्षिकायें इच्छानुरूप दाम्पत्य जीवन जीना चाहती हैं, पर वे सब आर्थिक पक्ष के कारण उलझाते रहते हैं। ऐसा नहीं अन्य कामकाजी महिलाओं का भी यही हाल है। भौतिक जीवन संघर्ष की कमी ने नारी को अन्तर्मुखी बनकर अन्तर्द्वन्द्व में फँसा दिया है।

एक प्रश्न उभरकर सामने आता है कि क्या इन शिक्षित नारी की मानसिक समस्यायें नहीं हैं?

मन्नू जी ने बताया कि पारिवारिक आर्थिक समस्या के साथ मानसिक समस्यायें भी मुँह बाये खड़ी हैं। इस प्रकार की नारी की विचार श्रृंखला प्रौढ़ हो जाती है। 'नई नौकरी' कहानी की नायिका रमा, विवाह के बाद, पति, बेटा, के कारण, अपने व्यक्तित्व को समाप्त कर पति की परछाई बनने की विवशता है। दूसरी ओर अविवाहित कुंती, क्षय कहानी में पिता, टुन्नी ( छोटे भाई) के लिये आर्थिक परिस्थितियों के कारण विवश है। स्त्री को हर कार्य करना पड़ता है, घर के बाहर अर्थोपार्जन के लिये कार्य करना पड़ता है। घर के भीतर का कार्य भी उसे करना पड़ता है। पुरुष वर्ग उसका उसके कार्य में सहयोग नहीं करता, बल्कि कार्य की आलोचना के साथ एक सिलेसिलेवार अपनी सत्ता में मारपीट का भी दम भरता है।

आज कई सवाल हैं जिन का उत्तर शिक्षित नारी के सामने होते हुए भी वह बता नहीं पाती। शिक्षित नारी भी संतान के चक्कर में मानसिक दबाब में है। आज का आम पुरुष स्त्री से होने वाली संतान लड़के को ही चाहता है लड़की नहीं। यदि लड़की हो जाये तो उसे छोड़ देता है, ऐसी मानसिकता आज भी देखने को मिलती है। एक बात और आज स्त्री में परिवर्तन आया है, उसे पुरुष वर्ग पचा नहीं पा रहा है, इसके कारण तलाक की सम्भावनाये बढ़ गयी हैं।

छोटे परिवार में तलाक की स्थिति में वह किसी के पास बैठ जाती है, पर मध्यवर्गीय परिवार की शिक्षित स्त्री यह सब नहीं कर पाती। हर ओर से उसके आचरण पर दोषारोपण होता है। फिर भी कुछ प्रतिशत बदलाव की प्रक्रिया आयी है। यह भले ही छोटे रूप से शुरु होती है। शहरों में अन्तर्जातीय विवाह से बदलाव आया है,

शिक्षित आर्थिक रूप से सम्पन्न स्त्रियों ने तलाक के बाद या विधवा जीवन के बाद विवाह किये हैं। यह खुला वातावरण बड़े शहरों में है, जिससे यह परिवर्तन आ रहा है।

मन्नू जी ने इस लम्बी शिक्षित नारी की समस्या पर बातचीन में बताया कि एक ही शहर में सभी तरह की वैरायटी है, एक ही तबके के लोगों में यह आधुनिकता आयी है। मैं पाश्चात्य सभ्यता का समर्थन नहीं करती पर इसके साथ ही भारतीय सभ्यता के नाम की जड़ता का भी समर्थन नहीं करती। पर आज की नारी की मानसिकता में जो स्वीकार किया है, वह विद्रोह कहा जा सकता है, जो एक अच्छी बात है।

दहेज के विषय में मन्नू जी का अपना विचार है कि शिक्षा के नाम पर जो परिवर्तन है, पर देहज जैसा शब्द मानसिकता के कारण बदला नहीं। देहज की मानसिकता में बदलाब नहीं है। कानून से कोई परिवर्तन नहीं आता, जब तक कि मानसिकता से ही इसको न बदला जावे।

वास्तव में दहेज का विवाह से सम्बन्ध नहीं जोड़ना चाहिये, विवाह को मानती हूं, पर जब तक नहीं, तब तक दोनों एक दूसरे को न समझें, आर्थिक रूप से आत्म निर्भर न हों। शादी से जीवन में निरर्थक नहीं है। उन्होंने इसका उदाहरण अपनी बिटिया के विवाह से दिया, जहां दोनों ही ने अपने को परखा-जाना तथा दोनों ही आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर भी हैं। स्त्री को शिक्षित होकर आत्मनिर्भर होकर स्वयं अपना चुनाव करना चाहिये। माता-पिता का उत्तरदायित्व व सही दिशा-निर्देशन देता है।

यह पूछा कि बच्चों के निर्माण के विषय में आपकी क्या राय है?

हँसते हुये कहा कि बच्चों को अनुशासन के नाम पर बौना नहीं बनाया जाना चाहिये। परिवार में व्यक्तित्व स्वतंत्रता के नाम पर कुछ थोपा नहीं जाना चाहिये।

बहुत सी बातें हैं जिनमें बच्चों की चर्चा की जा सकती है। बच्चों को विश्वास में लेकर आगे बढ़ाना होगा, तथा उनको सुझाव देना भी माता-पिता का ही काम है। झूठ बोलने पर ही बड़ों का काम है, उसे सुलझाना, उसे प्यार से ठीक करना, तब बच्चा ठीक हो सकता है। डाट-डपट, भय, मार-पीट, बच्चों को बौना तथा कमजोर भी बनाते हैं, यह तो सब माता-पिता के संस्कारों पर निर्भर है कि बच्चा कमजोर तो नहीं है? स्त्री-पुरुष जब माता-पिता बन जाते हैं तब उनके आधुनिक परिवेश में आवश्यक चिन्तन का विषय यही होता है। आधुनिकता के नाम पर बच्चों को अकेला छोड़ा नहीं जा सकता। बंटी उपन्यास का बंटी इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। यही कारण है कि मेरी रचनाओं में मध्यवर्गीय परिवार का ही चित्रण अधिक है, क्योंकि उनकी समस्या सामने ही है।

सदियों पुराने संस्कार, बच्चों का मोह पाने के प्रति उसका मोह नारी में है। आज भी यदि घर में टूट रही है, कचोट है, अपराध भी है तब उसे जो पुराने संस्कार की घुरी दवा के रूप में पिलायी गयी है, तब भी वह विद्रोह नहीं करती। भारतीय परम्परा के अनुरूप सब कुछ सहज ढंग से सहती है। फिर भी पूर्णता का जीवन ही तो जीना चाहती हैं।

आपने ऐसी नारी का भी चित्रण किया है, जो अशिक्षित कामकाजी हैं?

यह बात सही है, अशिक्षित नारी कामकाजी है । धन का अभाव, पति की मारपीट, बच्चों के लिये भोजन की व्यवस्था उसे प्रेरित या विवश करती है कि वह काम ढूंढे, तब वह काम की खोज भी करती है । परिवार का पालन करना उसकी परम्परा है । परिश्रमी मजदूर महिला, सीदी सपाट जिन्दगी जीना चाहती है । अधिकांश रूप से उसका पति शराबी है । शराबी पति की पत्नी झाडू मारकर घर से बाहर नहीं करती, बल्कि वह पति को देवता मानकर शराब पीने के लिये अपना शरीर भी गला देती है । वास्तव में हर नारी के अपने जीवन की अपनी ही स्वयं की समस्या है, जो परिवार पति, बच्चों के मध्य ही है । जीवन जीना एक अलग बात है, पर परम्परा के अनुसार अंकुश से जीना ही तो जीना है, अशिक्षित नारी के सामने यही एक आधार भी है ।

आपने छात्राओं के चरित्र को भी एक आयाम दिया है, सम्भवत: आप अध्यापन से जुड़ी रहने के कारण ?

मैंने स्कूल की छात्रा से लेकर शोध छात्रा एवं किशोर अवस्था की छात्राओं को एक पात्र के रूप में रखा है । पुरानी पीढ़ी की आचार-विचार ने छात्राओं को एक परेशानी में डाल दिया है । नारी जीवन का साध्य विवाह बताया, इसीलिये लड़की को विवाह होने तक पढ़ाया लिखाया जाता है, परिवार के जीवन में सोचने को कुछ रखा ही नहीं । मात्र अनुशासन ही है । 'एखाने अकाश नाई' में ग्राम्य परिवेश में गोरा की छात्रा के रूप में स्थिति परम्परागत कड़ा नियंत्रण, वास्तव में युवा छात्रा, वर्तमान क्षणों के महत्व को अतीत से जोड़ना चाहती है, पर जोड़ नहीं पाती । एंजिला 'ईसा के घर इंसान' में पनपती रूढ़ियों के प्रति विद्रोह की भावना । इसका बात का सबूत है आज भी कड़े अनुशासन एवं परम्परा के नाम पर यह सब हो रहा है, जो नहीं होना चाहिये ।

प्रेम-विवाह की आप समर्थक हैं ?

इस विषय में मेरा भी उदाहरण है। यादव जी के साथ मेरा प्रेम विवाह ही है। मेरी बहन ने यह विवाह कराया। मेरी कहानियों में प्रेम विवाह का जो रूप है, उसके बदलाव की मन: स्थिति का चित्रण है। 'एखाने आकाश नाई', 'कमरे कमरा और कमरे', 'बन्द दराजों के साथ', 'त्रिशंकु', 'आपका बंटी', इसके उदाहरण हैं।

मन्नू जी ने युवावर्ग के विषय में आगे बातचीत में बताया कि युवावर्ग जब तक सामंती संस्कार से मुक्त नहीं होगा, तब तक सभ्यता व्यवहार, आचरण की स्वतंत्रता सम्भव नहीं है। नारी की मुक्ति तभी सम्भव होगी, जब युवा पुरुष वर्ग सामंतवादी संस्कार से मुक्त हों। एक दूसरे के अहम के कारण तनाव बढ़ रहा है तथा शहरों में तलाक की स्थिति बढ़ रही है। निम्नवर्ग में तलाक न के बराबर है। वह तो समझौता हो जाता है। जीवन में जो कशिश है, उसके लिये जीना भी एक बातचीत है।

बाल मनोविज्ञान के विषय में जब मन्नू जी से बातचीत की, तब उन्होंने बताया कि परिवार में माता-पिता दोनों ऐसे जीव हैं, जिसका सीधा असर बच्चे पर पड़ता है। जब माता-पिता तनाव में जी रहे हों, तब बच्चे की दशा देखने लायक होती है। ऐसा मैंने 'बंटी' उपन्यास में 'बंटी की जन्मपत्री' में स्पष्ट किया है कि आज भी हमारे बीच बहुत से बंटी हैं जो माता-पिता से प्रश्न पूछ रहे हैं कि आपको विवाह के पहले जो समझ थी, वहाँ कहाँ चली गयी ? सवाल इतना नहीं क्योंकि विवाह अधिकांश रूप से माता-पिता, सगे-सम्बन्धी के बातचीत से हल होते हैं। जहाँ तक प्रेम-विवाह का प्रश्न है, वह युवा अवस्था की पाश्चात्य मानसिकता के कारण एक दूसरे को शीघ्र पाने की इच्छा होती है। धीरे-धीरे सामान्य

स्थिति आने पर अपनी भूल का पश्चाताप यदि होता है तब तनाव बढ़ जाता है जो 'तलाक' की परिधि में सिमट जाता है ।

तलाक, अलगाव बाद की समस्या है, जिसका निराकरण मिल-बैठकर होना चाहिये, इसके लिये स्त्री को शिक्षित एवं आत्मनिर्भर होना जरूरी है । स्त्री जाति के साथ सम्बन्धों में बदलाव नहीं आया है, जो बदलाव आया है, उसे स्त्री का आत्म सम्मान का जीवन हो रहा है । परिवार में उसके जन्म के संस्कार में जो उपेक्षा की जाती है, यह अच्छी बात नहीं है, उसकी किसी न किसी बात पर स्वयं घर की स्त्रियां भर्त्सना करती हैं, यह भर्त्सना का स्वर नारी पुरुष दोनों ओर से कम होना चाहिये । इसके लिये दहेज भी एक प्रश्नचिन्ह है श्र नारी की आजादी का शोर शराबा मात्र दिखावा है, जितने पुरुष वर्ग के लोग बातचीत करते हैं, वे अपने व्यवहार में तो परिवर्तन नहीं लाते, जिज्ञासा के मध्य कई एक ऐसे प्रश्न हैं, जिनका हल पुरुष के पास है, पर पुरुष अपने स्वर को बदल तो रहा है, पर कम है । नारी के परिवर्तन के पीछे, नारी का शिक्षित होना है तथा आर्थिक रूप से परिपक्व होना है । नारी के इस परिवर्तन से नारी का आत्म सम्मान भी जागा है । इससे पुरुष, नारी के मध्य तनाव की स्थिति भी आयी है, जिससे तलाक का रूप सामने आया ।

बातचीत में यह पूछ ही लिया कि वैचारिक क्रान्ति से कोई फर्क आ सकता है ?

वैचारिक क्रांति से विचार केन को स्थान अवश्य मिलता है, हर स्तर पर विचार किया जाता है । पुरुष, स्त्री, बालक अपने अपने विचार रखते हैं । हां हूं । करनी की मानसिकता में विचार स्वतंत्र नहीं होते, इसके लिये उसे स्वतंत्र रूप से सोचना चाहिये ।

एक बात अवश्य है, समय एवं वातावरण के अनुसार विचार बदलते, बिगड़ते रहते हैं। संघर्ष, या द्वन्द्व के समय विचार करने की स्थिति भी अलग ढंग की होती है। परिवार और उसके आस-पास का वातावरण शिक्षा, आर्थिक स्तर यह सभी विचार करते समय उभरकर सामने आते हैं, उस समय विचार किया जाना या विचार में क्रान्ति आना एक बहुत बड़ी बात है। स्त्री-पुरुष, बालक आदि के विचारों के माध्यम से जो क्रांति आती है, उसका सीधा सादा असर परिवार समाज पर है, पर कुछ प्रतिशत। पर यह एक अच्छी शुरुआत है। 'दहेज' के सम्बन्ध में वैचारिक क्रान्ति होनी चाहिये। इस क्रान्ति में नारी शिक्षा और उसके आर्थिक रूप से आत्म निर्भर की बात महत्वपूर्ण है। नारी शिक्षित एवं आर्थिक रूप से मजबूत होगी, तभी दहेज जैसी समस्या हल हो सकती है। इसमें अन्तर्जातीय विवाह का महत्व भी है + तथा इन प्रेम विवाहों को भी मान्यता दी जानी चाहिये।

तमाम सारी लम्बी बातचीत से लगा कि उनका व्यक्तित्व वास्तव में एक पात्र की तरह है, जीवन में साक्षात अनुभव की मूर्ति है।

हिन्दी महिला कथाकारों में आज जिनका नाम की चर्चा है, उनमें मन्नू भण्डारी के साथ कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग, कृष्णा अग्निहोत्री, चन्द्रकान्ता, रजनी पनिकर, उषा प्रियंवदा, परुलकर मालती, कुसुम अंसल, शशिप्रभा शास्त्री, सुनीता जैन, मालती जोशी, दीप्ति खण्डेलवाल, निरुपमा सेवती, क्रांति त्रिवेदी, मृणाल पाण्डेय, शिवानी, ममता कालिया, मेहरुन्निशा परवेज, राजी सेठ, मणिका मोहिनी, मंजुल भगत, चित्रा मुदगल, सूर्यबाला, मृदुला सिंह हैं। इन सभी ने नारी आकांक्षाओं एवं अतृप्त इच्छाओं को किसी न किसी रूप में किसी न किसी पात्र के माध्यम से चित्रित किया है, जबकि चिन्तन पक्ष देखा जाये

तो कामकाजी महिला पुरुष एवं पाश्चात्य सभ्यता का जितना नजदीकी चित्रण मन्नूजी ने किया, वह वास्तव में एक नयापन ही है। इस दृष्टि से उनका अपना स्थान है।

उनकी अपनी पहिचान ने तो साक्षात्कार के समक्ष ही एक अपनत्व छोड़ दिया था, जिसे आज तक भुला नहीं पा रही। हिन्दी साहित्य में कथाकारों के रूप में मन्नू जी का नाम मानव-जीवन की नारी के गहरे चिन्तन एवं द्वन्द्व के रूप में है जिससे उन्होंने कहानी के पात्रों में एक स्वर से पिरोया है, निस्सन्देह उनका व्यक्तित्व भी साहित्य के लिये अमूल्य निधि है।

साँझ हो चली थी, चलने को सोचने लगी। एक पूर्ण व्यक्तित्व के दर्शन का जो लाभ मिला उसमें मैं आनन्दित थी। यह एक ऐसा सत्य है, मेरे जीवन में साक्षी बनकर जीने का मार्ग अवश्य देगा।

# सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

**मन्नू भण्डारी का कथा साहित्य :**

उपन्यास : 1- स्वामी
2- आपका बंटी
3- एक इंच मुस्कान
4- महाभोज
5- आसमाता ( बाल उपन्यास)
6- कलवा (बाल उपन्यास)

कहानी संग्रह : 1- मैं हार गयी
2- श्रेष्ठ कहानियाँ
3- त्रिशंकु
4- यही सच है

संकलन : 1- सप्तपर्णी

**अन्य कथाकारों का कथा-साहित्य :**

बाल चक्मा : नागार्जुन
एक चूहे की मौत : वर्द उज्जयां खां
बेघर : ममता कालिया
दीवारें और दीवारें : भीमसेन त्यागी
नींद : महीपसिंह
पर्दे की रानी : इलाचन्द जोशी
शेखर एक जीवनी : अज्ञेय
राग दरबारी : श्रीलाल शुक्ल

अँधेरे बन्द कमरे : मोहन राकेश
मछली मरी हुई : राजकमल चौधरी
सफेद मेमने : मणि मधुकर
सूरजमुखी अँधेरे में : कृष्णा सोबती

सहायक ग्रन्थ सूची :


1- आधुनिक हिन्दी उपन्यास : डा0नरेन्द्र मोहन
2- आधुनिकता और सृजनात्मक साहित्य : डा0इन्द्रनाथ मदान
3- आधुनिक हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास : डा0बेचन
4- आंचलिक उपन्यास : संवेदना और शिल्प : डा0ज्ञान चन्द्र गुप्ता
5- आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों में सांस्कृतिक बोध : संजीव मनावत
6- अनामदास का पोथा : डा0हजारी प्रसाद द्विवेदी
7- आधुनिकता और कहानी : डा0इन्द्रनाथ मदान
8- उपन्यास का स्वरूप : डा0शशिभूषण सिंहल
9- उपन्यास समीक्षा के नये प्रतिमान : बंगल झाल्टे
10- उपन्यास लेखन और शिल्प : रामनिवास चतुर्वेदी और रामेश्वर
11- कहानी की संवेदनशीलता सिद्धान्त और प्रयोग : डा0भगवान दास वर्मा
12- कथाकार मन्नू भण्डारी : डा0अनीता राजूरकर
13- गांधी विचारधारा का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव : अरविन्द जोशी

14- द्वितीय महासमरोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास : डा०लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय

15- प्रेमचन्द्रोत्तर उपन्यासों की शिल्प विधि : डा०सत्यपाल चुघ

16- प्रेमचन्द के नारी पात्र : डा०भारतसिंह

17- मार्क्सवाद और हिन्दी उपन्यास : एन०रवीन्द्रनाथ

18- भारतीय उपन्यासों में वर्णन कला का तुलनात्मक मूल्यांकन : डा०इंदिरा जोशी

19- भारतीय संस्कृति : भारतभूषण त्यागी

20- साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : चारु कान्त बेशाई

21- साहित्य का मनोविज्ञानिक अध्ययन : डा०देवराज उपाध्याय

22- साठोत्तर हिन्दी उपन्यासों में कामकाजी नारी संचेतना : डा०धनराज धनमाने

23- साहित्य शैली के सिद्धान्त : डा०गणपति चन्द्र गुप्त

24- समस्यामूलक उपन्यासकार : डा०महेन्द्र भटनागर

25- हिन्दी के मनोविज्ञानिक उपन्यास : डा०धनराज धनमाने

26- हिन्दी उपन्यासों में नारी : शैल रस्तोगी

27- हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास : डा०सुरेश सिन्हा

28- हिन्दी के मनोविज्ञानिक उपन्यासों में नारी चरित्र : डा०रामविनोद सिंह

29- हिन्दी कहानी - रचना प्रक्रिया : डा०परमानंद श्रीवास्तव

30- हिन्दी कहानी - दो दशक की यात्रा : डा०रामदरथ मिश्र

31- हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास : प्रताप नारायण टंडन
32- हिन्दी उपन्यास - तीन दशक : राजेन्द्र प्रताप
33- हिन्दी उपन्यासों का मनो-विश्लेषणात्मक अध्ययन : गिरधर प्रसाद शर्मा
34- हिन्दी उपन्यास प्रेम और जीवन : डा0शांति भारद्वाज
35- हिन्दी उपन्यास - सृजन और सिद्धान्त : नरेन्द्र कोहली
36- हिन्दी उपन्यास - एक अन्तर्यात्रा : रामदरश मिश्र
37- हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद : डा0 त्रिभुवन सिंह
38- हिन्दी उपन्यास में कल्पना के बदलते प्रतिरूप : डा0 त्रिभुवन सिंह
39- हिन्दी उपन्यास उपलब्धियां : लक्ष्मीसागर वाष्र्णेय
40- लोक जागरण हिन्दी साहित्य : डा0रामविलास शर्मा

पत्र-पत्रिकायें :

धर्मयुग
साप्ताहिक हिन्दुस्तान
दिनमान
मनोरमा
कलावार्ता
फेमिना समीक्षा
समारम
सारिका
नई कहानियां
देशबन्धु
आचरण
रविवारीय पत्रिका
साप्ताहिक अग्निघोष